कश्मीरी पण्डितों के अनमोल रत्न



डॉ० बैकुण्ठ नाथ शर्मा

डॉ० बैकुण्ठ नाथ शर्मा

जन्म 21 दिसम्बर 1938

लखनऊ

प्रारम्भिक शिक्षा – पारकर इन्टर कालेज, मुरादाबाद, हाई स्कूल एवं इन्टरमीडिएट – राजकीय जुबिली इन्टर कालेज, लखनऊ, बी० एस–सी० – शिया डिग्री कालेज, लखनऊ, एम०एस–सी० तथा पी–एच० डी० – लखनऊ विश्वविद्यालय, प्रवक्ता रसायन विज्ञान – शिया डिग्री कालेज, लखनऊ, 1967, रीडर रसायन विज्ञान – शिया पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, लखनऊ 1994, लेखन तथा पत्रकारिता में रूचि – लगभग 200 लेख विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित, लगभग 2000 सम्पादक के नाम पत्र प्रकाशित, अंग्रेज़ी पत्रिकाओं "दि पिलग्रिम" तथा "दि एम्प्लाईज़ वॉयस" का सह सम्पादन, अनेक सामाजिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं में सक्रिय भागीदारी।





कश्मीरी पंडितों के अनमोल रत्न

खण्ड – तृतीय

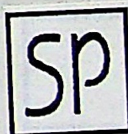
डॉ० बैकुण्ठनाथ शर्गा

एम०एस–सी०, पी–एच०डी०

भूतपूर्व रीडर, रसायन विज्ञान

शिया पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,

लखनऊ – 226020



SHARGA PUBLICATIONS

Manoher Niwas

Kashmiri Mohalla

Lucknow - 226003

प्रकाशक :–
श्रीमती राजवन्ती शर्ग़ा
मनोहर निवास
कश्मीरी मोहल्ला,
लखनऊ – 226 003

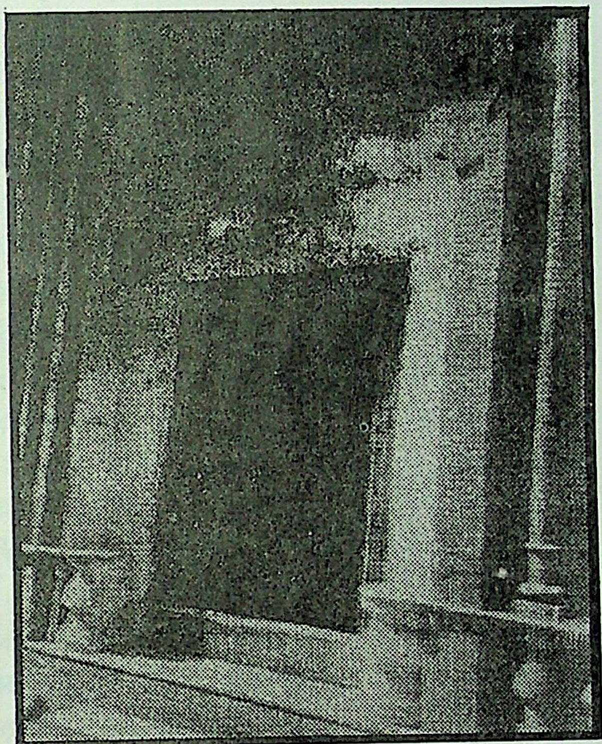
कम्पोजिंग :–
फेथ पब्लिशिंग सर्विसेज़
फोन – (0522) 242939, 269992
email - faithpubservices@usa.net

प्रथम संस्करण : सन् 2002

मूल्य – मात्र 150/- रुपये

मुद्रक :–
फेथ पब्लिशिंग सर्विसेज़
कश्मीरी मोहल्ला,
निकट शर्ग़ा पार्क, लखनऊ – 3
फोन – (0522) 242939, 269992
email - faithpubservices@usa.net

धरोहर



लखनऊ के कश्मीरी मोहल्ले में स्थित अवध के वसीक़ेदार कौल शर्गा परिवार की ऐतिहासिक हवेली जिसका निर्माण पंडित बैज नाथ कौल शर्गा ने सन् 1883 में कराया था।

तीनों लोकों में प्रत्येक व्यक्ति सुख के लिये ही दौड़ता फिरता है। दुःख के लिये बिलकुल नहीं। किन्तु दुःख के दो श्रोत हैं। एक है देह के प्रति "मैं" का भाव और दूसरा संसार की वस्तुओं के प्रति "मेरेपन" का भाव।

– शंकराचार्य

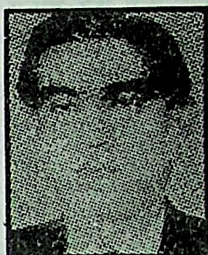
आभार प्रदर्शन

1. श्रीमती गंगा अटल, जयपुर।
2. श्रीमती सावित्री मुल्ला, इलाहाबाद।
3. सुश्री आशा सिंह, लखनऊ।
4. श्रीमती किशन अदीब, मुम्बई।
5. श्रीमती स्वरूप कुमारी बक्शी, लखनऊ।
6. पंडित हरि कृष्ण वातल, आगरा।
7. पंडित विनय शर्गा, लखनऊ।
8. श्रीमती मीरा उगरा, इलाहाबाद।
9. पंडित मन करन नाथ उगरा, इलाहाबाद।
10. डॉ० विक्रम मुशरान, इलाहाबाद।
11. पंडित प्रभाकर नागू, लखनऊ।
12. पंडित लक्ष्मण मुट्टू, भटिंडा, पंजाब।
13. श्रीमती लीला गंजूर, लखनऊ।
14. डॉ० श्याम काथजू, जोधपुर।
15. पंडित रामेश्वर नाथ मुट्टू, लखनऊ।
16. पंडित कृष्ण कुमार वातल, ग्वालियर।
17. कर्नल राज कुमार काक, इलाहाबाद।
18. न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट्ट, जम्मू।
19. स्वर्गीय प्रद्युमन कृष्ण तकरू, लखनऊ।
20. प्रो० चमन लाल सप्रू, दिल्ली।
21. डॉ० शरद नागर, लखनऊ।
22. पंडित किरण बटपोरी, लखनऊ।
23. श्रीमती रूपा अटल, कोलकाता।
24. पंडित बृज कुमार नेहरू, हिमाचल प्रदेश।

25. श्रीमती रमा यक्ष, लखनऊ।
26. पंडित रवि मुबई, दिल्ली।
27. श्रीमती रति काटजू, इलाहाबाद।
28. पंडित नारायण स्वरूप मुन्शी, कानपुर।
29. पंडित राहुल तंखा, देहरादून।
30. श्री मोहम्मद शमीमुल इस्लाम, लखनऊ।
31. श्री धर्मेश तिवारी, मुम्बई।
32. पंडित गौतम कौल, दिल्ली।
33. सुश्री दिव्या भारद्वाज, लखनऊ।
34. श्रीमती शीला कौल, ग़ाज़ियाबाद।
35. पंडित त्रिलोकी नाथ खोसां, जम्मू।
36. श्रीमती सुरबाला शर्गा, लखनऊ।
37. डॉ० आनन्द मोहन जुत्शी, ''गुलज़ार'', नोयडा।
38. पंडित दीपक मुशरान, लखनऊ।
39. स्वर्गीय मनहरन नाथ कौल, बहराईच।
40. श्रीमती शिवराज दुलारी वातल, लखनऊ।



लेखक की वाणी



वर्तमान परिस्थितियों में कश्मीरी पंडित समाज जिस तीव्र गति के साथ विघटित हो रहा है उसके लिये हर समझदार बिरादरी के सदस्य के लिये चिन्ता करना स्वभाविक प्रतीत होता है। समाज का मुख्य रूप से युवावर्ग उचित दिशा निर्देशों के अभाव में कुण्ठा से ग्रस्त होकर इधर–उधर भटकने को लाचार है क्योंकि सम्भवतः वह उसी को अपनी नियति मान बैठा है।

देश में पनप रही उदारवादी और उपभोक्तावादी संस्कृति ने हर व्यक्ति की मानसिकता को विकृत कर उसे मात्र एक यंत्र के रूप में परिवर्तित कर दिया है जहां मानवीय मूल्यों और संवेदनाओं का कदाचित कोई स्थान नहीं। समाज का हर व्यक्ति अधिक से अधिक धन कमाने की लालसा लिये हुए अपने लिये भोग–विलास के साधन जुटाने की चूहा दौड़ में लगा हुआ है चाहे उसको स्वयं निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये अपनी मान–मर्यादा, अपने संस्कारों तथा आदर्शों और मान–सम्मान की बलि ही क्यों न देनी पड़ जाये।

इस प्रकार की विकृत मनोवृत्ति के दूरगामी परिणाम क्या होते हैं, यह अब विकसित पाश्चात्य देशों के निवासी भलि भांति अनुभव करने लगे हैं पर हमें अभी तक किन्हीं कारणों से उस स्थिति का सही बोध नहीं हो पा रहा है क्योंकि कदाचित अभी हमारा उस स्तर का मानसिक विकास नहीं हो पाया है और हम मदमस्त होकर अज्ञानता का लबादा ओढ़े हुऐ उस भयावह महाकाल की कोख में प्रवेश करने को तत्पर हैं जहां से फिर उबर पाना प्रायः असम्भव सा प्रतीत होता है।

विगत कुछ माह से विदेशों में कार्यरत कुछ कश्मीरी पंडितों के संगठनों में अब अन्तर्जातीय विवाहों के विरूद्ध कुछ स्वर प्रस्फुटित होने प्रारम्भ हो गये हैं। पर अभी हमारे देश में कश्मीरी पंडितों के संगठन इस महत्वपूर्ण मुद्दे के प्रति उदासीन होकर चुप्पी साधे हुए हैं। कश्मीरी पंडित समाज में प्रथम अर्न्तजातीय विवाह सन् 1905 में हुआ था जिसकी उस समय सम्पूर्ण बिरादरी द्वारा कठोर शब्दों में निन्दा और भर्तसना की गयी थी। वास्तव में इस प्रकार के विवाह समाज

को भीतर से एक घुन की भांति खोखला कर उसका पतन सुनिश्चित करने की प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। अब मुख्य प्रश्न यह है कि क्या कश्मीरी पंडित समाज इस प्रकार के विवाह कर अन्य जातियों के जीवाश्मों का अपने रक्त में मिश्रण करा कर अपना वास्तविक स्वरूप बनाये रखने में सफ़ल हो पायेगा या फिर समाज के अन्य वर्गों और समुदायों के साथ अपने वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर और अधिक शक्तिशाली, एक जुट और सुसंगठित बनेगा। इस प्रकार का कृत्य व्यापक समाज को क्या संदेश देता है। जो व्यक्ति स्वयं अपनी जड़ों में मट्ठा डाल कर उनको समूल नष्ट करने की चेष्टा में जुटा हुआ हो उससे क्या अपेक्षा की जा सकती है। समय रहते इस विकराल समस्या पर गम्भीर चिंतन की आवश्यकता है अन्यथा इसके दूरगामी परिणाम बिरादरी के भविष्य के लिये बहुत ही घातक और विनाशकारी सिद्ध होंगे।

पारसी समुदाय अपनी नस्ल और जनसंख्या के प्रति अब सजग हो गया है। पारसी अंजुमन ने देश में पारसियों की तीव्र गति से घटती हुई जनसंख्या को गम्भीरता से लिया है और अपनी जनसंख्या की वृद्धि के लिये अनेक योजनायें लागू की हैं ताकि उनकी गणना एक आदिवासी जाति के रूप में न होने लगे। अब देखना यह है कि कश्मीरी पंडित समुदाय और उसके संगठन इस दिशा में क्या कदम उठाते हैं कि उनकी जन संख्या कहीं सिकुड़ कर उंनको समुदाय से एक आदिम जाति का रूप न दे दे। हमारे पूर्वजों ने लगभग 300 वर्ष तक कश्मीर घाटी से बाहर रहते हुए अपनी विशिष्ट पहचान बनाये रखी पर अब 30 वर्ष तक उस प्रकार की विशिष्ट पहचान बनाये रखना असम्भव सा प्रतीत होता है और समाज में जिस प्रकार की परिस्थितियां उत्पन्न हो रही है उनसे कुछ बहुत अधिक शुभ संकेत नहीं प्राप्त हो रहे हैं जो समाज के उज्जवल भविष्य को आश्वस्त करते हों। संत तुकाराम के शब्द कि मनुष्य अब धन और अपनी जननेन्द्रियों का दास हो गया है बहुत ही सार्थक प्रतीत होते हैं।

डॉ0 बैकुण्ठ नाथ शर्मा

मनोहर निवास
कश्मीरी मुहल्ला
लखनऊ – 226003
दिनांक – 4 जनवरी सन् 2002
दूरभाष – 267146

विषय सूची



लखनऊ के कश्मीरियों के महानायक

पंडित जगत नारायण मुल्ला



एक समय था जब लखनऊ नगर सम्पूर्ण विश्व में अपने बाग–बग़ीचों के लिये प्रसिद्ध था। कुछ योरप के भ्रमणकर्ता इस नगर की भव्यता और अनुपम सुन्दरता से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपने संस्मरणों में इस नगर को पूर्व के पेरिस की संज्ञा दी। काफ़ी लम्बी अवधि तक इस ऐतिहासिक नगर को सभ्यता और संस्कृति का एक प्रमुख केन्द्र माना जाता रहा। यहां के व्यक्तियों का कुशल व्यवहार, उनकी मृदुभाषा, उनका अपनी बात कहने का अन्दाज़ प्रायः सबके हृदय को बहुत शीघ्र मोहित कर लेता था। नवाबी शासन काल में यह नगर उर्दू अदब और व्यापार का एक प्रमुख केन्द्र रहा। इस नगर ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक ऐसे गणमान्य व्यक्तियों को उत्पन्न किया जिन्होंने अपने महत्वपूर्ण कार्य कलापों द्वारा इस नगर को न केवल गौरवान्वित किया अपितु उसकी प्रतिष्ठा में चार चांद लगा दिये और जिसके कारण उनको सारे समाज से बहुत अधिक आदर और सम्मान मिला और वह सबके लिये प्रशंसा का पात्र बने। ऐसी ही एक महान विभूति थे पंडित जगत नारायण मुल्ला जिन्हांने न केवल लखनऊ नगर के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया अपितु समाज के अन्य क्षेत्रों में भी नये कीर्तिमान स्थापित किये। आपके इन्हीं सब विशेष गुणों के कारण आज भी आपका नाम बहुत ही आदर और श्रद्धा के साथ लिया जाता है।

पंडित जगत नारायण मुल्ला के पूर्वज पंडित सीताराम मुल्ला मूल रूप से कश्मीर घाटी के सोपुर कस्बे के निवासी थे जो कदाचित अधिक धन अर्जित करने के उद्देश्य से 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में कश्मीर घाटी से निकल कर उत्तर भारत में आ गये। आपने एक अच्छी नौकरी पा जाने की चाह में पूरे उत्तर भारत

का जमकर भ्रमण किया और अनेक स्थानों पर ठहरे। आप सुदूर पूर्व में इसी उद्देश्य से कलकत्ता (कोलकाता) तक भी गये जो उस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी की राजधानी हुआ करता था। पर आप वहां भी किन्हीं कारणों से अधिक समय तक टिक नहीं पाये और आपने लखनऊ में बसने का मन बनाया जो उस समय कश्मीरी पंडितों का एक मुख्य गढ़ था।

पंडित सीताराम मुल्ला सन् 1830 के आस पास कलकत्ते से लखनऊ चले आये और रानी कटरा मुहल्ले में एक मकान लेकर रहने लगे जहां उस समय काफ़ी बड़ी संख्या में कश्मीरी पंडितों के आवास थे। यहां पर सुधी पाठकों की जानकारी के लिये यह बताना नितान्त आवश्यक है कि उस समय लखनऊ नगर के कश्मीरी मुहल्ला कटरा बिजन बेग, तोपदरवाज़ा, चौपटियां, रानी कटरा, खेतवाली गली एक दूसरे से लगे हुए कुछ ऐसे क्षेत्र थे जहां अधिकतर कश्मीरी पंडितों के आवास थे और वह उनकी सामूहिक शक्ति का प्रतीक हुआ करते थे।

पंडित सीताराम मुल्ला के सुपुत्र पंडित लक्ष्मी नारायण मुल्ला अवध के शासक नवाब मोहम्मद अली शाह (1837–1842) के दरबार में नौकरी पा गये थे। आपने अपने परिजनों के रहने के लिये रानी कटरे में एक हवेली का निर्माण कराया।

सन् 1856 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के उच्च अधिकारियों ने अवध के अन्तिम शासक नवाब वाजिद अली शाह (1842–1856) को राज सिंहासन से उतार कर फौज के कड़े पहरे में कलकत्ता के फोर्ट विलियम्स में नज़र बन्द कर दिया जिसके फलस्वरूप सन् 1857 में ग़दर हो गया। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने 1 जनवरी सन् 1858 को पूरे भारत का शासन ईस्ट इण्डिया कम्पनी से अपने हाथों में ले लिया और ब्रिटेन की माहारानी विक्टोरिया को भारत की साम्राज्ञी घोषित कर दिया गया।

पंडित लक्ष्मी नारायण मुल्ला के सुपुत्र पंडित काशी नारायण मुल्ला अंग्रेज़ों के शासन काल में आबकारी विभाग में सह आयुक्त हो गये थे। पर आपको अंग्रेज़ों ने बाद में सेवा से मुक्त कर दिया। क्योंकि अधिक मदिरा पान करने के कारण एक बार वह प्रदेश के लेफ़्टिनेन्ट गर्वनर के समारोह में उपस्थित नहीं हो सके जिसे अंग्रेज़ों ने एक अनुशासनहीनता की कार्यवाही माना और आपको तुरन्त कार्य मुक्त कर दिया।

पंडित जगत नारायण मुल्ला इन्हीं पंडित काशी नारायण मुल्ला के सुपुत्र थे। आपका जन्म सन् 1864 में रानी कटरा में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक उर्दू तथा फारसी भाषा की शिक्षा उस समय की परम्परा के अनुसार पास के ही एक मकतब में कुशल एवं अनुभवी मौलवियों की देख रेख में सम्पन्न हुई। आपने तद्पश्चात आगे की शिक्षा के लिये नवाब आग़ामीर के मिडिल स्कूल में प्रवेश लिया जहां से आपने मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की आपने फिर जुबिली हाई स्कूल सें मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने उच्च शिक्षा के लिये तदपश्चात कैनिंग कालेज में प्रवेश लिया जो उस समय तक कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था। आपने कैनिंग कालेज से बी0ए0 तथा बी0एल0 की परीक्षा सन् 1885 के आस पास उत्तीर्ण की। आपने अपनी रानी कटरे की पैतृक हवेली में अपना कार्यालय स्थापित किया और वकालत करना प्रारम्भ किया।

नवाबी शासनकाल में वादों का निपटारा सद्रे दीवानी अदालत और सद्रे फौजदारी अदालत द्वारा किया जाता था। अंग्रेज़ों ने सन् 1856 में शासन तंत्र को अपने हाथ में लेने के पश्चात अवध में अपनी न्याय प्रणाली लागू की। तत्कालीन भारत सरकार के 4 फरवरी 1856 के एक आदेश के अनुपालन में वादों के निपटारें के लिये लखनऊ में ज्यूडिशियल कमिश्नर की अदालत का गठन किया गया जिसका मुखिया ओकानी नाम के एक अंग्रेज़ अधिकारी को बनाया गया पर उसकी 1857 के ग़दर में मृत्यु हो गयी। अंग्रेज़ों ने तदपश्चात पूरे अवध को विभिन्न क्षेत्रों में विभाजित किया जिनका मुखिया कमिश्नर को बनाया गया और हर जिले में एक डिप्टी कमिश्नर उन के आधीन नियुक्त किया गया जिनको हर प्रकार के अधिकार दिये गये जो वादों का निपटारा अपने स्तर से करते थे। चूंकि सन् 1868 में इलाहाबाद में उच्च न्यायालय की पीठ स्थापित हो चुकी थी। अतः लखनऊ में वादों के निपटारे के लिये सबसे बड़ी अदालत ज्यूडिशियल कमिश्नर और फ़ाईनेशियल कमिश्नर की थी जहां मुकदमें होते थे।

पंडित जगत नारायण मुल्ला ने इसी ज्यूडिशियल कमिश्नर की अदालत में अपनी वकालत करनी प्रारम्भ की और अपनी सूझ–बूझ और कठोर परिश्रम के बल पर बहुत शीघ्र नगर के एक प्रतिष्ठित वकील बन गये। आपने नगर की सामाजिक, साहित्यक सांस्कृतिक तथा राजनीतिक गतिविधियों में खुल कर भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। आप उस समय की सम्भ्रान्त परिवारों द्वारा गठित की गयी

संस्था जलसये तहज़ीब के एक सक्रिय सदस्य बने जिसका गठन सन् 1880 के आस पास किया गया था और जिसके सचिव आपके मित्र पंडित सूरज नारायण बहादुर थे। यह संस्था बिरादरी के कुछ कर्मठ बुद्धिजीवियों द्वारा वाद–विवाद तथा बिरादरी से सम्बंधित समस्याओं पर विचारों के आदान–प्रदान के उद्देश्य से गठित की गयी थी। इसके मुख्य सदस्य थे पंडित श्रीकृष्ण तिक्कू, पंडित हरि कृष्ण कौल, पंडित बिशन नारायण दर, पंडित श्याम सुन्दर नारायण मसलदान, पंडित इकबाल कृष्ण शर्गा, पंडित माधो प्रसाद शर्गा इत्यादि।

अंग्रेज़ों ने क़ैसरबाग़ में स्थित नवाब वाजिद अली शाह की ख्वाबगाह परी महल को ध्वस्त करके सन् 1887 में वहां कैनिंग कालेज के नये भवन का निर्माण कराया जिसको अवध के ताल्लुकेदारों ने अमीनाबाद में एक भवन में सन् 1862 में प्रारम्भ किया था और जो बाद में छात्रों की संख्या बढ़ जाने पर क़ैसरबाग़ में स्थित लाल बारादरी के भवन में स्थानान्तरित किया जा चुका था। इसके साथ ही साथ अंग्रेज़ों ने अपने योरोपियन अधिकारियों के मनोरंजन के लिये शाही महल छतर मंजिल में एक इंग्लिश क्लब की स्थापना की जिसमें भारतीयों का प्रवेश वर्जित था। अवध के ताल्लुकेदारों ने नगर के सम्भ्रान्त परिवारों के मनोरंजन के लिये माहाराजा महमूदाबाद के नेतृत्व में गोलागंज में रफ़ाऐ आम क्लब की स्थापना की जिसकी पंडित जगत नारायण मुल्ला ने सदस्यता ग्रहण की और उसके कार्यक्रमों में नियमित रूप से भाग लेने लगे।

19 मई सन् 1901 को लखनऊ में अवध बार एसोसिएशन का गठन हुआ जिसका सेक्ट्री एक अंग्रेज़ बैरिस्टर सेन्ट जार्ज एच0एस0 जैक्सन को बनाया गया। पंडित जगत नारायण मुल्ला और सैय्यद ज़हूर अहमद को इसका उपसचिव नियुक्त किया गया। उस समय अवध बार एसोसिएशन अधिकतर इंग्लिश बार के नाम से प्रसिद्ध थी क्योंकि इसके वकील अधिकतर इंग्लैण्ड से शिक्षा प्राप्त किये हुए थे।

पंडित जगत नारायण मुल्ला सन् 1905 में रानी कटरे मे स्थित अपनी पैतृक हवेली को छोड़कर गोलागंज चले गये और वहां अपने परिवार सहित लाल द्वार वाली हवेली में रहने लगे। आपका यह नया आवास कचहरी के निकट था इस नाते आपको अपने कार्य में अधिक सुविधा होती थी क्योंकि उस समय नगर में आवागमन के साधन बहुत अधिक विकसित नहीं हो पाये थे और मुख्य रूप से डोली, पालकी, इक्का, तांगा और बग्घी ही यातायात के साधन थे जिनसे

व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान को जाया करते थे।

सन् 1910 के आस पास अंग्रेजों ने पंडित जगत नारायण मुल्ला को लखनऊ म्यूनिसिपल बोर्ड का वाईस चेयरमैन नियुक्त किया। आपने बाबू गंगा प्रसाद वर्मा के साथ अमीनाबाद क्षेत्र का समुचित विकास किया जो उस समय एक गांव की भांति था और अमीनाबाद से नक्खास के लिये एक सीधे मार्ग का निर्माण कराया जो अब बाबू गंगा प्रसाद वर्मा मार्ग के नाम से जाना जाता है। उससे पूर्व अमीनाबाद जाने के लिये केवल गोलागंज और रानीगंज के मार्ग थे। आपके नगर में किये गये विभिन्न विकास के कार्यों से प्रभावित होकर अंग्रेजों ने सन् 1920 के आस पास आपको लखनऊ म्यूनिसिपल बोर्ड का चेयरमैन बना दिया।

पंडित जगत नारायण मुल्ला कांग्रेस पार्टी के एक सक्रिय सदस्य थे। आपके संरक्षण में सन् 1916 में क़ैसरबाग की ऐतिहासिक सफ़ेद बारादरी में कांग्रेस पार्टी का अधिवेशन हुआ जिसमें प्रथम बार लखनऊ में महात्मा गांधी पधारे। इस अधिवेशन का आयोजन बहुत ही बड़े पैमाने पर किया गया था जिसमें पडित जवाहर लाल नेहरू समेत अनेक गणमान्य व्यक्तियों ने भाग लिया। आपने इस अधिवेशन में अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में बडा ही ओजस्वी भाषण दिया। लखनऊ के प्रख्यात उर्दू के शायर पडित बृज नारायण चकबस्त जो स्वयं एक क्रान्तिकारी थे ने इस अवसर पर अपने भावों को कुछ इस प्रकार व्यक्ति किया।

"बे गुनाह जुल्म से हो जाते हैं अक्सर माजूर
मगर इन्साफ़ का दरबार भी होता है ज़रूर
क़ौम के जब्र का लेकिन है निराला दस्तूर
यह हो पाबन्द जहालत तो है दुनिया मजबूर
दिल तो क्या रूह भी इस क़ैद से आज़ाद नहीं
यह है वह जुल्म कि जिसकी कहीं फ़रयाद नहीं।"

सुश्री ऐनी बेसेन्ट जो सन् 1893 में वेदों का गूढ़ अध्ययन करने के उद्देश्य से भारत में आयी थी ने सन् 1916 में भारत में "होम रूल" स्थापित करने के लिये होम रूल लीग नाम की एक संस्था का गठन किया। पंडित जगत नारायण मुल्ला ने पंडित मोती लाल नेहरू तथा डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू के साथ सन् 1917 में इस संस्था की सदस्यता ग्रहण की। चूंकि यह तीनों महानुभाव उस समय के प्रतिष्ठित वकील थे अतः उन्होंने संविधान के दायरे में रहते हुए देश को स्वतंत्र

कराने की बात रखी क्योंकि वह कानून और नियमों के विरूद्ध किसी प्रकार का आन्दोलन चलाने के पक्षधर नहीं थे। उनको इस बात का पूर्ण आभास था कि इस प्रकार के आन्दोलन अधिकतर समाज के आराजक और लम्पट तत्वों को प्रोत्साहन देते हैं। जिसके दूरगामी परिणाम समाज के सभ्य और कानून में आस्था रखने वाले व्यक्तियों के लिये हानिकारक होते हैं क्योंकि समाज के उस वर्ग पर ये असामाजिक और हिंसा में विश्वास रखने वाले तत्व हावी हो जाते हैं जो किसी भी देश के लिये कभी भी बहुत उपयोगी नहीं सिद्ध हो सकता। अंग्रेज़ों ने पंडित जगत नारायण मुल्ला के कार्यो से प्रसन्न होकर उनको प्रान्त की लेजिस्लेटिव कौंसिल का सदस्य मनोनीत कर दिया। प्रदेश में जब प्रथम बार सन् 1919 में अन्तरिम सरकार का गठन किया गया तो केवल दो भारतीयों को उसमें मंत्री बनाया गया। जिनमें एक थे पडित जगत नारायण मुल्ला और दूसरे थे सी0वाई0 चिन्तामणि। पर अमृतसर में जलियांवाला बाग काण्ड हो जाने के पश्चात इन दोनों भारतीयों ने अंग्रेज़ों से गहरे मतभेद हो जाने के कारण अपने पदों से त्याग पत्र दे दिये।

जलियांवाला बाग के विभत्स काण्ड के पश्चात अंग्रेज़ों ने पूरे पंजाब प्रान्त में मार्शल ला लागू कर दिया और प्रदेश में सुचारू रूप से कानून और व्यवस्था को बहाल करने के उद्देश्य से हंटर कमीशन की नियुक्ति की। पडित जगत नारायण मुल्ला को इस कमीशन का सदस्य मनोनीत किया गया। पंडित जगत नारायण मुल्ला ने पंजाब प्रान्त में ब्रिटिश सरकार द्वारा चलाये जा रहे पुनर्वास के कार्यक्रमों की समुचित समीक्षा की और प्रभावित व्यक्तियों को सरकार द्वारा उचित मुआवज़ा दिलाने तथा अन्य राहत की सामग्री उपलब्ध कराने का प्रबन्ध किया जो उस समय असहाय और पीड़ित व्यक्तियों के लिये उन का बहुत बड़ा योगदान था जिनका जनरल डायर की बर्बरता के कारण सब कुछ लुट चुका था।

सन् 1920 में महात्मा गांधी की विचार धारा से गहरे मतभेद हो जाने के कारण जब उन्होंने कांग्रेस के नागपुर के अधिवेशन में अंग्रेज़ों के विरूद्ध एक जन आन्दोलन चलाने की घोषणा की तो पंडित जगत नारायण मुल्ला ने डॉ0 हृदय नाथ कुंजरू और डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू के साथ कांग्रेस पार्टी की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया और अपने को कांग्रेस की गतिविधियों से एकदम प्रथक कर लिया।

अंग्रेज़ों ने सन् 1920 में ही एक ऐक्ट द्वारा लखनऊ के कैनिंग कालेज को लखनऊ विश्वविद्यालय में परिवर्तित कर दिया। 17 जुलाई सन् 1921 से इस नवगठित लखनऊ विश्वविद्यालय का प्रथम शिक्षा सत्र प्रारम्भ हुआ और पंडित जगत नारायण मुल्ला को इसका प्रथम वाईस चांसलर होने का गौरव प्राप्त हुआ। आपने अपने कार्यकाल में लखनऊ विश्वविद्यालय का चौमुखी विकास कराया और उसके प्रांगण में अनेक नये भवनों का निर्माण कराया। जिससे विभिन्न विषयों की शिक्षा की समुचित व्यवस्था हो सके और नगर के बाहर के विद्यार्थियों के रहने के लिये उचित सन् साधन उपलब्ध कराये जा सकें।

माहाराजा महमूदाबाद और राजा जहांगीराबाद पंडित जगत नारायण मुल्ला के घनिष्ठ मित्रों में थे। उत्तर प्रदेश की लेजिस्लेटिव कौंसिल में जब तत्कालीन लेफ़टिनेन्ट गर्वनर सर विलियम्स मेरिस ने सन् 1916 में राजा जहांगीराबाद का प्रस्ताव एक प्राईवेट बिल के रूप में प्रस्तुत किया कि म्यूनिस्पल बोर्ड के चुनावों में धर्म के आधार पर सीटें निर्धारित की जायें तो आपने पंडित मोती लाल नेहरू और डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू के साथ इस बिल का ज़ोरदार समर्थन किया जबकी फ़ैजाबाद के पंडित परमेश्वर नाथ सप्रू तथा लखनऊ के पंडित इकबाल नारायण मसलदान ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया। एक विशेष बात यह थी कि पंडित जगत नारायण मुल्ला, पंडित मोती लाल नेहरू तथा डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू की तिकड़ी इसके पूर्व सन् 1915 में कट्टर पंथियों द्वारा गठित हिन्दू सभा के सदस्य बन चुके थे। जिसके डॉ0 हृदय नाथ कुंजरू भी एक सम्मानित सदस्य थे।

पंडित जगत नारायण मुल्ला के समय मे लखनऊ नगर के अन्य प्रतिष्ठित वकील थे बैरिस्टर पंडित बिशन नारायण दर, सर वजीर हसन, बैरिस्टर पंडित इकबाल नारायण मसलदान, बैरिस्टर चौधरी हैदर हुसैन, बैरिस्टर ए0पी0 सेन, मोहम्मद अहमद, बैरिस्टर चौधरी नियामत उल्ला, बैरिस्टर आर0एफ़ बहादुरजी, बैरिस्टर एच0बी0 वालफोर्ड, बैरिस्टर बिशेश्वर नाथ श्रीवास्तव, पंडित गोकरन नाथ मिश्र इत्यादि।

पंडित जगत नारायण मुल्ला ने लखनऊ की कश्मीरी पंडित बिरादरी के उत्थान के लिये अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये। वह हर कश्मीरी पंडित से बिना किसी भेदभाव के व्यक्तिगत रूप से मिलते थे और उसके परिवार का कुशल क्षेम पूछते थे। इस नाते सारी बिरादरी उनका बड़ा आदर और सम्मान करती थी।

आप हर वर्ष अपने एक नये मित्र के साथ इंग्लैण्ड जाते थे और वहां जमकर आनन्द करते थे ताकि भारत आने पर आप और अधिक स्फूर्ति के साथ अपने कार्यो को कर सकें। आपको भ्रमण करने और नये मित्र बनाने में विशेष रूचि थी। इस नाते आपके मित्रों की सूची काफ़ी लम्बी होती थी और नगर का लगभग हर गणमान्य व्यक्ति आपका मित्र हुआ करता था। आपने सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य कियें और समाज में अपने लिये एक विशिष्ट स्थान बनाया।

सन् 1925 में अंग्रेज़ों ने एक नया ऐक्ट पारित कर लखनऊ में एक दो न्यायाधीशों वाली चीफ़ कोर्ट की पीठ स्थापित की जिसका प्रस्ताव सर्व प्रथम प्रदेश के लेफ़्टिनेन्ट गर्वनर सर अल्फ्रेड लायल ने अपने कार्यकाल में किया था पर वह इलाहाबाद में उच्च न्यायालय की पीठ होने के कारण उस समय कार्यान्वित नहीं हो सका था। सन् 1919 में पुनः लखनऊ में पंडित गोकरन नाथ मिश्र द्वारा लेजिस्लेटिव कौंसिल में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की एक खण्डपीठ स्थापित करने का प्रस्ताव लाया गया जो सन् 1925 में अवध कोर्टस ऐक्ट के रूप में पारित हुआ और सर लुई स्टूवार्ट इस चीफ कोर्ट के प्रथम प्रधान न्यायाधीश नियुक्त हुए।

पंडित जगत नारायण मुल्ला लखनऊ नगर में स्थापित इस नयी चीफ कोर्ट में वकालत करने लगे और बहुत शीघ्र नगर के एक चोटी के वकील बन गए। आपने अपने कठोर परिश्रम और विलक्षण बुद्धि के बल पर बहुत अधिक धन अर्जित किया और ख्याति प्राप्त की। आप विशेष रूप से फौजदारी के मुकदमें करते थे और अपनी बहस करने के अन्दाज़ के लिये मुख्य रूप से प्रसिद्ध थे जिसमें आपके सामने सरकारी वकील की किसी भी मुकदमें में दलीलें टिक नहीं पाती थीं और आप उसका अपने तर्क संगत प्रहारों द्वारा बखिया बहुत शीघ्र उधेड़ देते थे जिसके कारण आपका प्रतिपक्षी वकील हक्का बक्का होकर बग़लें झाकने लगता था और सरकारी पक्ष मुक़दमें में फेल होकर धाराशाही हो जाता था और आप मुकदमा बहुत सरलता पूर्वक जीत लेते थे।

पंडित जगत नारायण मुल्ला का विवाह सन् 1882 के आसपास एक रानी कटरा मुहल्ले की कन्या कमला के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके चार पुत्र क्रमशः तेज नारायण, बृज नारायण, आनन्द नारायण और प्रकाश नारायण थे। आपकी छः पुत्रियां भी थीं जिनके नाम थे कैलासो, शम्मो, शिवराज वती, राजन, लक्ष्मी

और उमावती। इनमे कैलासो का विवाह लाहौर निवासी पंडित जीवन लाल काटजू के साथ, शम्मो का विवाह ग्वालियर रियासत के निवासी पंडित इकबाल नारायण हाक्सर के साथ, शिवराजवती का विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित किशन लाल नेहरू के साथ, राजन का विवाह लखनऊ निवासी पंडित मनमोहन नाथ चक के साथ, लक्ष्मी का विवाह फैजाबाद के निवासी पडित सूरज नाथ सप्रू के साथ और उमावती का विवाह जयपुर रियासत के प्रसिद्ध अटल परिवार में हुआ था।

पडित जगत नारायण मुल्ला के सबसे बड़े पुत्र पंडित तेज नारायण मुल्ला का जन्म 13 जुलाई सन् 1887 को लखनऊ के रानी कटरे में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपने अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात लखनऊ में ही अपनी वकालत प्रारम्भ की। आपने एक नये इतिहास की रचना की जब तत्कालीन प्रदेश के लेफ़टिनेन्ट गवर्नर सर हारकोर्ट बटलर ने आपके पिता से मित्रता के कारण आपकी ज़िला जज के पद पर सीधी निरुक्ति कर दी। क्योंकि उसके पूर्व और उसके पश्चात आजतक कोई अन्य वकील सीधे ज़िला जज नहीं बन पाया। आपको बाद में प्रोन्नती करके इलाहाबाद उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बना दिया गया और आप लखनऊ से इलाहाबाद प्रस्थान कर गये।

न्यायमूर्ति पंडित तेज नारायण मुल्ला का विवाह लाहौर के निवासी राजा नरेन्द्र नाथ रैना छिजबल्ली की सुपुत्री कमला के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके पांच पुत्र क्रमशः रतन नारायण, सुरेश नारायण, रवीन्द्र नाथ, महेन्द्र नाथ और सरताज नारायण तथा सात पुत्रियां क्रमशः शान्तिः, मनमोहिनी, सावित्री, मालिनी, निर्मला, रोहन और पार्वती थी। इनमें शान्ति का विवाह पंडित कृष्ण नारायण कौल के साथ, सावित्री का विवाह जोधपुर निवासी पंडित तेज नारायण काक के साथ, मालिनी का विवाह पंडित रामेश्वर नाथ काव के साथ, निर्मला, का विवाह पंडित परमेश्वर नारायण तिक्कू के साथ, रोहन का विवाह पंडित कैलास नारायण चन्ना के साथ तथा पार्वती का विवाह पंडित गोपीनाथ कॉव के साथ सम्पन्न हुआ था। मनमोहिनी आजीवन अविवाहित रही। वह बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में दर्शन शास्त्र की प्रोफेसर थीं।

न्यायमूर्ति पंडित तेज नारायण मुल्ला के सबसे बड़े पुत्र पंडित रतन नारायण मुल्ला अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात जेलर नियुक्त हो गये थे।

आपका विवाह कानपुर के प्रख्यात बैरिस्टर अमोलक राम हून की सुपुत्री लिली के साथ सम्पन्न हुआ था।

न्यायमूर्ति पंडित तेज नारायण मुल्ला के दूसरे पुत्र पंडित सुरेश नारायण मुल्ला इलाहाबाद के एक प्रख्यात बैरिस्टर थे। आप कांग्रेस पार्टी के राज्य सभा के सदस्य भी थे। आपका विवाह लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित मनहरन नाथ शर्गा की सुपुत्री सावित्री के साथ सम्पन्न हुआ था।

न्यायमूर्ति पंडित तेज नारायण मुल्ला के तीसरे पुत्र पंडित रवीन्द्र नाथ मुल्ला एक सरकारी कर्मचारी थे। आपका विवाह लखनऊ के बक्शी परिवार में हुआ था। आप अपने जीवन के उत्तरार्ध में लखनऊ में निवास करने लगे थे।

न्यायमूर्ति पंडित तेज नारायण मुल्ला के चौथे पुत्र पंडित महेन्द्र नाथ मुल्ला थे। आपका जन्म 15 मई सन् 1926 को गोरखपुर में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात नौ सेना में भर्ती हो गये थे। सन् 1971 के भारत पाक युद्ध के समय आप खुखरी युद्ध पोत के कैप्टेन थे और अरब सागर में पाकिस्तान की नौसेना की गतिविधियों पर नज़र रखे हुए थे तथा भारतीय नौ सेना के युद्ध पोतों को रक्षा प्रदान कर रहे थे। अचानक पाकिस्तान के एक युद्ध पोत का राकेट लग जाने के कारण आपका युद्ध पोत क्षतिग्रस्त हो गया और डूबने लगा। आपने बड़े ही धैर्यपूर्वक अपने नौ सैनिकों को पूरी सर्तकता के साथ सुरक्षित स्थान तक पहुंचवाया और स्वयं उस डूबते हुए युद्ध पोत के साथ अपने प्राणों का उत्सर्ग करते हुए उस विशाल समुद्र की गोद में समा गये। आपको मरणोपरान्त महावीर चक्र से सम्मानित किया गया। आपका विवाह पंडित रामचन्द्र हाक्सर की सुपुत्री सुधा के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित जगत नारायण मुल्ला के दूसरे पुत्र पंडित बृज नारायण मुल्ला भी लखनऊ नगर के एक जाने माने वकील थे। आपका विवाह लखनऊ के निवासी पंडित इकबाल कृष्ण गंजूर की सुपुत्री बृजकुमारी के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के केवल एक पुत्री कुक्कू थी जिसका विवाह एक मुट्टू परिवार में हुआ था।

पंडित जगत नारायण मुल्ला के तीसरे पुत्र न्यायमूर्ति पंडित आनन्द नारायण मुल्ला थे। आप उर्दू के एक प्रसिद्ध शायर भी थे। आप लखनऊ संसदीय चुनाव क्षेत्र से एक स्वतंत्र उम्मीदवार के रूप में चुनाव जीत कर सांसद बने। बाद

में आप कांग्रेस पार्टी के राज्य सभा के सदस्य बन गये। आपका विवाह हरदोई जनपद की बालामऊ रियासत के राजा बृजनारायण तंखा की सुपुत्री अन्पूर्णा के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित जगत नारायण मुल्ला के चौथे और अन्तिम पुत्र पंडित प्रकाश नारायण मुल्ला इंजीनियर थे आप प्रदेश सरकार के विद्युत विभाग में कार्यरत थे और लखनऊ में ही रहते थे।

पंडित जगत नारायण मुल्ला ने एक राजसी जीवन व्यतीत किया। आपने अनेक धार्मिक तथा सामाजिक कार्यों के लिये जम कर दान दिया। आपने विधवाओं और आर्थिक रूप से पिछड़े मेधावी छात्रों की उनकी उचित शिक्षा के लिये वित्तीय सहायता की जिसका एक परिणाम यह हुआ कि आप अपने वंशजों के लिये कुछ नहीं छोड़ गये और एकदम खाली हाथ इस संसार से विदा हो गये।

आपको शतरंज खेलने का बहुत शौक़ था। आप नित्य सांयकाल अपने घनिष्ठ मित्र सैय्यद मोहम्मद अहमद के चौक में स्थित आवास पर शतरंज खेलने जाते थे। सन् 1936 के दिसम्बर माह में आप सैय्यद मोहम्मद अहमद के साथ एक दिन शाम को शतरंज खेल रहे थे कि एकाएक आपको भीषण दिल का दौरा पड़ा और आपका वहीं निधन हो गया।

19 मई, 2001 को अवध बार एसोसिएशन का शताब्दी समारोह लखनऊ की उच्चन्यायालय की पीठ के प्रांगण में एक बहुत ही भव्य रूप से मनाया गया। इस समारोह की अध्यक्षता उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति डी0पी0 महापात्र ने की। अवध बार एसोसिएशन के अध्यक्ष श्री वीरेन्द्र भाटिया ने अपनें सम्बोधन में पंडित जगत नारायण मुल्ला के व्यक्तित्व व कृतित्व पर सविस्तार प्रकाश डाला और बार एसोसिएशन के गठन की प्रक्रिया में उनके महत्वपूर्ण योगदान की भूरि-भूरि प्रशंसा की। न्यायमूर्ति डी0पी0 महापात्र ने भी अपने अध्यक्षीय भाषण में पंडित जगत नारायण मुल्ला की कानूनी विद्वता की सराहना की और उनको अपने समय का एक बहुत ही प्रतिभावान वकील बताया। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्यामल कुमार सेन ने पंडित जगत नारायण मुल्ला द्वारा समाज के विभिन्न क्षेत्रों में किये गये कार्यों पर प्रकाश डाला और उनकी योग्यता, ईमानदारी कार्य के प्रति निष्ठा को अद्वितीय बताया जिसके लिये वह सदैव स्मरण किये जायेंगे।

आज पंडित जगत नारायण मुल्ला हमारे मध्य नहीं हैं पर उनके द्वारा समाज के विभिन्न क्षेत्रों में किये गये महत्वपूर्ण कार्य सदैव आने वाली युवा पीढ़ी को प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे। कभी कभी अपने एकान्त के पलों में निम्नलिखित पक्तियां अनायास ही मस्तिष्क पटल पर अंकित हो जाती है।

"है एक मंज़िल रास्ते हैं कई
किधर से जायें ख़बर नहीं
बिछे हैं कांटे संभल के चलना
क्योंकि यह आसां सफ़र नहीं"



जोधपुर रियासत के प्रथम कश्मीरी प्रधानमंत्री

सर सुखदेव प्रसाद काक



18वीं और 19वीं शताब्दी में जो भी कश्मीरी पंडित परिवार कश्मीर घाटी से निकल कर उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्र में आये वह अधिकतर महानगरों या विभिन्न रियासतों में बसे जहां स्वभाविक रुप से अच्छी नौकरियां प्राप्त करने की सम्भावनाऐं अधिक थीं। इन कश्मीरी पंडितों ने अपनी ईमानदारी और निष्पक्ष कार्य प्रणाली के लिये समाज के अन्य वर्गों से आदर और, सम्मान पाया तथा वह अपने लिये समाज में एक बिल्कुल नये वातावरण में उचित स्थान बनाने में सफ़ल हुए। वह अपने परिश्रम द्वारा शासन और प्रशासन के उच्च पदों पर आसीन हुए और उन्होंने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया जिसके लिए वह सदैव स्मरण किये जायेगें।

सर सुखदेव प्रसाद काक के पितामह पंडित भवानी प्रसाद काक मूल रुप से कश्मीर घाटी के अनन्तनाग जिले की कुलगांव तहसील के निवासी थे, जो 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में कश्मीर घाटी से निकल कर मध्य भारत की भोपाल रियासत में आकर बस गये। आप कालान्तर में भोपाल रियासत के नवाब द्वारा उसकी शहज़ादी को पढ़ाने के लिए राजमहल में नियुक्त कर दिये गये थे। आपके कार्य से प्रसन्न होकर नवाब ने आपको दो गांव जागीर के रुप में प्रदान किये पर उसमें नवाब ने एक शर्त यह लगा दी कि यदि आपके वंशज भोपाल रियासत को छोड़ कर किसी अन्य स्थान पर जाकर बसेंगे तो यह जागीर शासन द्वारा ज़प्त कर ली जायेगी।

विश्वस्त सूत्रों से प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार पंडित भवानी प्रसाद काक के कोई पुत्र नहीं था। आपने अपने भाई पंडित भोला नाथ काक के पुत्र

पंडित शिव नारायण काक को गोद लेकर अपना दत्तक पुत्र बना लिया था। जो आपकी मृत्यु के पश्चात दिल्ली चले गये और वहां अपने भाई पंडित शिव प्रसाद काक के साथ बाज़ार सीता राम मुहल्ले में रहने लगे जहाँ काफ़ी बड़ी संख्या में कश्मीरी पंडित परिवार रहते थे। पंडित शिव प्रसाद काक तथा उनके अनुज भ्राता पंडित शिव नारायण काक की शिक्षा देहली कालेज में सम्पन्न हुई।

अंग्रेज़ों ने पंडित शिव नारायण काक को सन् 1846 में दिल्ली से तत्कालीन राजपूताना की सबसे बड़ी रियासत जोधपुर में एक अंग्रेज़ी का अध्यापक बनाकर भेजा। जहां उस समय माहाराजा तख्त सिंह (1843–1873) शासक थे। माहाराजा तख्त सिंह पंडित शिव नारायण काक के ज्ञान से बहुत अधिक प्रभावित हुए और उनको सन् 1847 में माहाराज कुमार जसवंत सिंह का अध्यापक और अभिभावक नियुक्त कर दिया। कालान्तर में माहाराजा तख्त सिंह ने आपको अपना निजी सचिव बना लिया।

29 सितम्बर सन् 1868 को लेफ़टिनेन्ट कर्नल कीलिंग जोधपुर रियासत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गर्वनर जनरल का राजपूताना का ऐ0जी0जी0 बन कर आया और उसने माहाराजा तख्त सिंह के साथ सन्धि पर हस्ताक्षर किये जिसमें रियासत का शासन चलाने के लिये एक पंचायत के गठन का प्राविधान था। इस सन्धि के अनुपालन में दीवान हंसराज जोशी, विजय सिंह मेहता, हाकिम फ़ौजदारी आदालत, पंडित शिव नारायण काक, हरजीवन मेहता, हाकिम राजस्व और सिंधी समर्थ राज हाकिम दीवानी अदालत को इस पंचायत का सदस्य मनोनीत किया गया।

सन् 1871 में जालौर के नागरिकों ने सिरोही में घुस कर बहुत अधिक उत्पात मचाया और हिंसा फैलायी जिस पर पंडित शिव नारायण काक ने पंचायत के अन्य सदस्यों के सहयोग से जोधपुर से वहां जाकर क़ाबू पाया और उनके आपसी विवादों का निपटारा किया। जोधपुर रियासत में 27 जुलाई सन् 1873 को सर्व प्रथम भूमि के क्रय और विक्रय करने के लिए स्टाम्प पेपर छापे गये। इन स्टाम्प पेपरों को पंडित शिव नारायण काक की निगरानी में वहां की मुख्य कोतवाली में सुरक्षित रखा गया। आप भूमि से सम्बन्धित रियासत के सभी अभिलेखों का पूरा ब्योरा रखते थे क्योंकि आप माहाराज तख्त सिंह के सबसे अधिक विश्वासपात्र थे।

सन् 1873 में माहाराजा तख्त सिंह की मृत्यु के पश्चात माहाराजा जसवंत सिंह द्वितीय (1873–1895) जोधपुर रियासत के शासक बने। आपके शासन काल में प्रथम बार सन् 1878 में रियासत में विदेश विभाग का गठन किया गया और इसका विभागाध्यक्ष पंडित शिव नारायण काक को बनाया गया।

राजपूताना की विभिन्न राजपूत रियासतों में उस समय शासन तंत्र को चलाने की कोई समुचित व्यवस्था नहीं थी। माहाराजा तख्त सिंह अधिकतर ज्योतिष्यों के परामर्श से कार्य करते थे। अग्रेज़ों ने विभिन्न शासकों को भारत सरकार से अंग्रेज़ी में पत्राचार करने का आदेश दिया तथा रियासत की शासन प्रणाली को तर्कसंगत बनाने का आग्रह किया। सन् 1873 तक रियासत में सरकारी दस्तावेज़ रखने की कोई व्यवस्था नहीं थी और सन् 1885 तक रियासत का अपना कोई कोषागार नहीं था। रियासत के शासक को व्यय करने के लिए अजमेर का एक बैंकर धन देता था।

पंडित शिव नारायण काक अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में रियासत के नमक तथा आबकारी विभाग के निदेशक हो गये थे। आपका लगभग 70 वर्ष की आयु में 1892 में निधन हो गया।

पंडित शिव नारायण काक ने अपने परिजनों के निवास के लिए चाँद पौल मुहल्ले में एक भव्य हवेली का निर्माण कराया था यह मुहल्ला जोधपुर नगर के ऐतिहासिक किले के प्रांगण में आबाद हुआ था जिसका निर्माण सर्व प्रथम राव जोधा के शासन काल में हुआ था। जोधपुर नगर की स्थापना की बड़ी ही रोचक तथा रोमांचकारी कहानी है। राव जोधा ने चित्तौड़गड़ से पलायन करने के पश्चात 12 मई सन् 1459 को मारवाड़ क्षेत्र की एक पहाड़ी पर इस क़िले की नीवं रखी थी। इसके पूर्व राव जोधा क़े पिता को सिसोदिया राजपूतों ने एक षड़यंत्र के तहत चित्तौड़ के किले में कत्ल करा दिया था। ऐसा कहा जाता है कि किसी शहनायीवादक ने बहुत ही गुप्त रुप से शहनायी की धुन पर यह संदेश राव जोधा को दिया कि आपका जीवन इस समय भीषण संकट में है और आप किसी प्रकार अपनी जान बचा कर इस दुर्ग से पलायन कर जायें। राव जोधा ने शहनायी वादक का यह शहनायी की धुन पर गुप्त संदेश समझ लिया और तुरन्त दुर्ग के गुप्त मार्ग से वहां से पलायन कर गये और जोधपुर नगर की मारवाड़ पहुँचने पर स्थापना की।

राव जोधा के पिता राव रिडमल वास्तव में मारवाड़ के राठौर राजपूतों के

वंशज थे। आपके पिता का नाम राव चूण्डा था। इतिहास के अनुसार राव रिडमल सन् 1407 में मारवाड़ से मेवाड़ चले गये जिसके लिये कदाचित आपको आपके पिता राव चूण्डा ने प्रेरित किया। आप वहाँ किसी प्रकार वहां के शासक माहाराणा कुम्भा के दरबार में अपने कुछ चुने हुए मित्रों को नियुक्त कराने मे सफ़ल हो गये। आप फिर धीरे–धीरे उनके द्वारा मेवाड़ के शासन तंत्र पर अपनी पकड़ मज़बूत करने लगे। आपका यह व्यवहार वहां के शासक तथा सिसौदिया राजपूतों को कुछ अपमानजनक लगा और वह आपके विरुद्ध षडयंत्र रचने लगे। इसी षडयंत्र के तहत एक कार्य योजना बनाकर राव रिडमल को सिसौदिया राजपूतों ने चित्तौड़ के दुर्ग में न्योता देकर उनकी हत्या कर दी। राव रिडमल की मृत्यु के पश्चात उनके दूसरे पुत्र राव जोधा उनके उत्तराधिकारी बने और सन् 1453 में मन्दौर में राज्याभिषेक के उपरान्त मारवाड़ के शासक घोषित किये गये।

पंडित शिव नारायण काक की अंग्रेज़ी भाषा में विद्वता तथा ज्ञान के कारण वह माहाराजा तथा अंग्रेजों द्वारा सदा आदर और सम्मान का पात्र बने रहे। आपने रियासत के विकास से सम्बंधी कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान दिया और अपने को दरबारी षडयंत्रों से दूर रखा आपने शासन सुधारने के प्रयासों में अंग्रेज़ अधिकारियों का खुलकर समर्थन किया। आप अंधविश्वास के कट्टर विरोधी थे और प्रगति में विश्वास रखते थे। आपने रियासत में अनेक सुधारपरक नियम लागू किये जिनसे आम जनता को लाभ मिल सके। आपने रियासत में अंग्रेजों द्वारा नियुक्त किये गये पोलिटिकल ऐजेन्ट के सुझावों को वरीयता दी और उनके हितों की समुचित रक्षा की।

पंडित शिव नारायण काक का विवाह देहली की बाज़ार सीताराम की निवासी सुश्री रुकमा गुटू के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके तीन पुत्र क्रमशः दीना नाथ, सुखदेव प्रसाद तथा लस्सू प्रसाद और चार पुत्रियां थीं। जिनमें सुखबाई का विवाह पंडित सूरज प्रकाश वातल के साथ, गिरवर बाई का विवाह मोहन कृष्ण बक्शी के साथ, मानसरोवर बाई का विवाह पंडित निरंजन नाथ कौल के साथ तथा कलाबाई का विवाह पंडित राधे नाथ कौल के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित सुखदेव प्रसाद काक का जन्म सन् 1862 में जोधपुर के चांदपोल मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा जोधपुर के माहाराजा जसवंत सिंह कालेज में सम्पन्न हुई। आपने तद्पश्चात सन् 1884 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। माहाराजा

जसवंत सिंह द्वितीय ने आपको फिर प्रशिक्षण के लिये पंजाब भेजा जहां अम्बाला में आपने अंग्रेज़ अधिकारियों से भूमि से सम्बंधित अभिलेखों को तैयार करना तथा भूमि के विवादों को निपटाने के कार्य की विधिवत ट्रेनिंग ली जो एक प्रकार से पटवारी से लेकर डिप्टी सुपरिन्टेन्डेंट के कार्य क्षेत्र में आता था। आप अपना यह प्रशिक्षण पूरा करके लगभग एक वर्ष बाद पुनः जोधपुर लौट आये।

माहाराजा जसवंत सिंह द्वितीय ने सन् 1886 में आपको जोधपुर रियासत की सीमाओं को निर्धारित करने के कार्य में लगा दिया और आपको उस कार्य के लिये एक अलग से विभाग गठित कर उसका सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिया। आपने यह कार्य बड़ी ही निष्ठापूर्वक सम्पादित किया जिससे प्रसन्न होकर माहाराजा ने आपको सन् 1887 में कर्नल पौवलेट का निजी सचिव नियुक्त कर दिया, जो उस समय ब्रिटिश शासन की ओर से जोधपुर रियासत की सीमाओं को रेखांकित करने का कार्य कर रहे थे। पंडित सुखदेव प्रसाद काक को रियासत की सीमाओं को निर्धारित करने के लिये जो कमेटी गठित की गयी थी उसका भी सचिव बना दिया गया।

कुछ समय पश्चात पंडित सुखदेव प्रसाद काक को माहाराजा जसवंत सिंह द्वितीय के मुसाहिबे आला सर प्रताप सिंह का जुडिशियल सेक्ट्री नियुक्त कर दिया गया और आप रियासत की न्याय प्रकि्रया का गूढ़ अध्ययन करने लगे।

सन् 1888 में पंडित सुखदेव प्रसाद काक को रियासत के प्रेस और मुख्य कारागार का सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिया गया जिस पद पर आपने लगभग एक वर्ष कार्य किया। आपको उसके पश्चात सन् 1889 में माहाराजा जसवंत सिंह द्वितीय ने रियासत की शासन तंत्र को चलाने वाली कौंसिल का सदस्य मनोनीत कर दिया। इस कौंसिल के अन्य सम्मानित सदस्य थे राय बहादुर, विजय सिंह मेहता, मुन्शी हरदयाल सिंह, कविराज नारायण दास अमृतलाल मेहता और हनुमन्त चन्द्र भण्डारी।

जोधपुर रियासत में सन् 1890 में भीषण आकाल पड गया उसमें आपको जनता तक उचित रुप से राहत सामग्री पहुंचाने का कार्यभार सौंपा गया, जिसको आपने बड़े ही प्रभावशाली ढंग से किया जिसके लिये आपकी बड़ी प्रशंसा हुई और आपको रियासत का एक कर्मठ ईमानदार तथा कर्तव्यपरायण अधिकारी बताया गया। आपकी कौंसिल का सदस्य होने के नाते न्याय से सम्बंधित मामलों में तर्क संगत परामर्श की विशेष रुप से सराहना की गयी।

पंडित सुखदेव प्रसाद काक को सन् 1893 में रियासत के राज के कोषागार का अतिरिक्त भार सौंपा गया। जिसको आपने अपनी विलक्षण बुद्धि द्वारा बहुत ही निष्ठापूर्वक बिना किसी पक्षपात के सम्पादित किया और रियासत की आय में वृद्धि की जिससे प्रभावित होकर अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट ने आपकी बहुत प्रशंसा की कि इस प्रकार का निष्ठावान और सत्य निष्ठ अधिकारी मिलना वास्तव में बहुत कठिन है। उसने लिखा कि आप एक पढ़े लिखे, समझदार और व्यवहार कुशल अधिकारी है जिन पर रियासत को गर्व होना चाहिये क्योंकि आप नियमों और कानून का बिना किसी भेदभाव के पालन करते है और सबको एक समान न्याय देने में विश्वास रखते हैं।

सन् 1894 में पंडित सुखदेव प्रसाद काक का कारागार तथा राजकीय प्रेस के विभागों से स्थानान्तरण कर उनको खालसा गांवों के राजस्व सम्बन्धी दस्तावेजों को उचित रुप से तैयार करने का कार्य दिया गया जिसे आपने बड़ी ही सावधानी पूर्वक किया जिसमें भूमि के अधिकारों को उचित रुप से अभिलेखों में दर्ज करना था। रियासत के अंग्रेज़ रेज़िडेन्ट ने आपकी इस कठिन कार्य के लिये सराहना की कि आपने अपने अन्य व्यस्त कार्यो के साथ इतने कम समय में रियासत के भूमि से सम्बन्धित समस्त अभिलेख तैयार कर लिये जिनमें भूस्वामियों का व्यौरा बड़े ही विवेकपूर्ण रुप से दिया गया था। आपके इस कार्य से प्रभावित होकर अंग्रेजों ने सन् 1895 में आपको राय बहादुर के अलंकरण से विभूषित किया।

चूंकि उस समय राजपूत शासकों में गोद लेने की प्रथा थी जिसके अर्न्तगत वह किसी भी राज कुमार को गोद लेकर अपना दत्तक पुत्र बना लेते थे जो उनका स्वाभाविक रुप से उत्तराधिकारी हो जाता था और उनकी मृत्यु के पश्चात राज सिंहासन पर विराजमान हो जाता था जिसके कारण राजमहलों में अनेक षडयंत्र चला करते थे और अक्सर हत्याऐं भी कर दी जाती थीं। अतः राजपूत शासकों में इस गोद लेने की प्रथा को तर्क संगत बनाने के लिये पंडित सुखदेव प्रसाद काक ने सन् 1895 में "राजपूत ऐडोप्शन बिल" नाम से एक विधेयक दरबार में प्रस्तुत किया जिसकी मारवाड़ और मेवाड़ के समस्त राजपूत शासकों ने प्रशंसा की और इसको रियासत की कौंसिल द्वारा पारित किया गया।

रियासत में यह भूमि सम्बन्धी अभिलेखों को तैयार करने का कार्य लगभग 2 वर्ष सन् 1897 तक चला इसी बीच सन् 1895 में माहाराजा जसवंत सिंह द्वितीय

की मृत्यु हो गयी और उनके पश्चात माहाराजा सरदार सिंह (1895–1911) जोध ापुर के शासक बने। माहाराजा सरदार सिंह ने रियासत का शासन तंत्र चलाने के लिये एक समीती का गठन किया। जिसमें पंडित सुखदेव प्रसाद काक को मनोनीत किया। इस समिती के अन्य सम्मानित सदस्य थे – पंडित माधव प्रसाद गुर्टू, पंडित दीना नाथ काक और पंडित जीवा नन्द।

पंडित सुखदेव प्रसाद काक ने रियासत में राजस्व वसूलने की प्रणाली को और अधिक प्रभाव शाली तथा तर्क संगत बनाया और राज कोष की आय में वृद्धि की। आपको यह कार्य करने में काफ़ी ख्याति प्राप्त हुई।

उस समय सिंचाई के उपयुक्त साधन विकसित न होने के कारण कृषि अधिकतर वर्षा पर निर्भर करती थी। पर्याप्त वर्षा न होने के कारण अकसर भयंकर सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी। जिसमें हज़ारों की संख्या में मनुष्य और पशु मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे। इस सूखे की स्थिति से निपटना और हर व्यक्ति को उसकी आवश्यकता के अनुसार अनाज उपलब्ध कराना बहुत ही कठिन कार्य हुआ करता था क्योंकि कोई समुचित खाद्यान्न वितरण करने की प्रणाली रियासत में उस समय नहीं थी।

सन् 1899–1900 में जोधपुर रियासत में भीषण सूखे की स्थिति उत्पन्न हो गयी। हर ओर भूख–प्यास से हजारों की संख्या में मनुष्य और पशु मृत्यु को प्राप्त होने लगे। माहाराजा ने पंडित सुखदेव प्रसाद काक को इस कार्य में लगाया जिन्होंने अथक परिश्रम करके एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार की कि भविष्य में किस प्रकार सूखे से निपटने के लिये योजना बनायी जाये, जिसमें उपलब्ध सनसाधनों का किस प्रकार उचित प्रयोग किया जाये ताकि इस प्रकार की परिस्थिति न उत्पन्न होने पाये। आपके सूखाग्रस्त क्षेत्रों में किये गये महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिये आपको प्रशस्ति पत्र तथा स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया।

सन् 1900 में माहाराजा सरदार सिंह जोधपुर रियासत से जब युद्ध क्षेत्र के लिये प्रस्थान करने लगे तो उनकी अनुपस्थिति में शासन तंत्र को चलाने के लिये एक कमेटी का गठन किया गया जिसका सदस्य पंडित सुखदेव प्रसाद काक और कवि राज मुरारी दास को बनाया गया जिसका माहराज कुमार सुमेर सिंह को अध्यक्ष मनोनीत किया गया।

इंग्लैण्ड की माहारानी विक्टोरिया का 22 जनवरी सन् 1901 को लन्दन में स्थित बंकिंग्घमं पैलेस में निधन हो गया। उनकी मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र

सम्राट ऐडवर्ड सप्तम का 28 जनवरी सन् 1901 को राज्याभिषेक हुआ। यह ऐतिहासिक अवसर सम्पूर्ण मारवाड़ में बड़े हर्ष और उल्लास के साथ मनाया गया जिसकी सारी व्यवस्था पंडित सुखदेव प्रसाद काक द्वारा की गयी। आपके प्रबन्ध से प्रसन्न होकर माहाराजा ने आपको कैसरे–हिन्द के अलंकरण से सम्मानित किया।

जब 31 जनवरी सन् 1901 को माहाराजा सरदार सिंह भ्रमण करने के लिए इंग्लैण्ड गये तो पंडित सुखदेव प्रसाद काक को मुसाहिबे आला का वरिष्ठ सदस्य बनाया गया। आप उसी वर्ष सर प्रताप सिंह के चीन चले जाने के कारण जोधपुर रियासत के महकमा–ऐ–खास के भी सर्वे सर्वा बन गये और आपने उन दोनों महानुभावों की अनुपस्थिति में रियासत का शासन बड़ी ही सूझ बूझ के साथ चलाया जिससे भारत के तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड कर्ज़न ने प्रसन्न होकर आपको C.I.E. की पदवी से विभूषित करने की संस्तुति ब्रिटिश सरकार को प्रेषित करी। सन् 1903 में दिल्ली में एक भव्य कारोनेशन दरबार का आयोजन किया गया। जिसमें गवर्नर जनरल लार्ड कर्ज़न ने आपको C.I.E. के अलंकरण से सम्मानित किया। आपको साथ ही साथ एक चांदी का पदक भी भेंट किया गया।

2 जनवरी सन् 1909 को माहाराजा सरदार सिंह की वषगाठ बहुत बड़े पैमाने पर मनायी गयी। इस अवसर पर माहाराजा ने 3 गांव रानी, गोल और जसनगर पंडित सुखदेव प्रसाद काक को जागीर के रुप में प्रदान किये और उसके साथ ही साथ आपको हाथ की शाही मोहर लगी हुई कुरब दी तथा आपकी तक्ज़ीम दो गुनी कर दी। आपको इस बात की भी स्वीकृति दे दी गयी कि आपके परिजन सोने के आभूषण पैरों में पहन सकते हैं जो रियासत में हर साधारण व्यक्ति के लिये उस समय वर्जित था।

सन् 1910 में मुन्शी हरनाम दास जो रियासत में मंत्री पद पर कार्य कर रहे थे। रियासत से पुनः ब्रिटिश इण्डिया अपने पुराने पद पर जाकर आसीन हो गये। रियासत में उनके द्वारा रिक्त किये गये मंत्री के पद पर पंडित सुखदेव प्रसाद काक की नियुक्ति कर दी गय़ी जिन्होंने मत्री के रुप में अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह बड़ी ही सूझ–बूझ के साथ किया।

माहाराजा सरदार सिंह की सन् 1911 में मृत्यु के पश्चात माहाराजा सुमेर सिंह जोधपुर रियासत के शासक बने। पर उनका शासन काल केवल 7 वर्ष का

रहा और सन् 1918 म उनका निधन हो गया। उनकी मृत्यु क पश्चात माहाराजा उम्मेद सिंह (1918–1947) जोधपुर के शासक बने। आपने 4 दिसम्बर सन 1918 को रियासत का शासन चलाने के लिये एक रेजिडेन्सी कौंसिल का गठन किया जिसमें पंडित सुखदेव प्रसाद काक को राजस्व सदस्य बनाया गया जो उस समय रियासत की नीतियां निर्धारित करने की सर्वोच्च संस्था थी।

पंडित सुखदेव प्रसाद काक को इस सर्वोच्च संस्था का 13 नवम्बर सन् 1920 को जूडिशियल और पुलिटिकल मेम्बर बनाया गया जबकि एक अंग्रेज़ अधिकारी डी0एल0 ड्रेक ब्रुकमैन को इसका राजस्व सदस्य बनाया गया। लगभग एक सप्ताह पश्चात 20 नवम्बर सन् 1920 को भारत के तत्कालीन वाईसराय तथा गर्वनर जनरल लार्ड चेम्स फोर्ड जोधपुर रियासत में पधारे जिनके सम्मान में माहाराजा उम्मेद सिंह ने रात्रि के भोज का आयोजन किया जिसका पूरा प्रबन्ध पंडित सुखदेव प्रसाद काक और उनके ज्येष्ठ पुत्र पंडित धर्म नारायण काक ने किया। लार्ड चेम्स फोर्ड पूरी व्यवस्था और उसके प्रबन्ध से बहुत अधिक प्रभावित हुए और उन्होने प्रसन्न होकर उपहार स्वरुप पंडित सुखदेव प्रसाद काक और उनके पुत्र को चांदी के पदक भेंट किये।

माहाराजा उम्मेद सिंह ने 3 जून सन् 1921 को अपनी वर्षगांठ बड़ी धूम–धाम से मनायी जिसकी सारी व्यवस्था पंडित सुखदेव प्रसाद काक के संरक्षण में सम्पन्न हुई। अंग्रेजों ने इस अवसर को एक ऐतिहासिक रुप देने के लिए पंडित सुखदेव प्रसाद काक को नाईट हुड के अंलकरण से सम्मानित किया और रियासत में उनकी सेवाओं की सराहना की।

सन् 1921 के अक्टूबर माह में सर सुखदेव प्रसाद काक गम्भीर रुप से अस्वस्थ हो गये और डाक्टरों ने उनको पूर्ण रुप से विश्राम करने का सुझाव दिया। आपके स्थान पर एक अंग्रेज़ अधिकारी लेफ़टिनेन्ट कर्नल लायल को आपका कार्य करने की ज़िम्मेदारी सौंपी गयी। 26 दिसम्बर सन् 1921 को दीवान बहादुर मुन्शी दामोदर लाल को अर्धकालिक रुप से सर सुखदेव प्रसाद काक के स्थान पर ज्यूडिशियल मेम्बर नियुक्त किया गया। जब तक सर सुखदेव प्रसाद काक पूर्ण रुप से स्वस्थ होकर अपना कार्य भार न ग्रहण कर लें।

दीवान बहादुर मुन्शी दामोदर लाल 17 अक्टूबर सन् 1922 को रियासत से अपने पूर्व के पद पर ब्रिटिश इण्डिया चले गये और सर सुखदेव प्रसाद काक पुनः रियासत के ज्यूडिशिलय मेम्बर बन गये। कुछ समय पश्चात 12 जून सन्

1923 को लेफटिनेन्ट कर्नल लायल जो उस समय फ़ाईनेंस मेम्बर थे रियासत को छोड़ कर चले गये और उनके स्थान पर सर सुखदेव प्रसाद काक रियासत के फ़ाईनेन्स मेम्बर बन गये।

माहाराजा उम्मेद सिंह सन् 1923 के अन्त में इंग्लैण्ड चले गये। उनके जाने के पश्चात सर सुखदेव प्रसाद काक को रियासत का शासन तंत्र चलाने की पूरी जिम्मेदारी सौंपी गयी और उनको प्रधान मंत्री बना दिया गया। सर सुखदेव प्रसाद काक इस पद पर अपने सेवा निवृत्त होने तक कार्य करते रहे। आप 19 दिसम्बर सन् 1926 को सेवा निवृत्त हुऐ।

सर सुखदेव प्रसाद काक जोधपुर रियासत से सेवा निवृत्त होने के पश्चात उदयपुर रियासत के माहाराजा भोपाल सिंह के मुशीर–ए–आला बन गये। जब सन् 1933 में लन्दन में तृतीय गोल मेज़ सम्मेलन आयोजित किया गया तो सर सुखदेव प्रसाद काक जोधपुर, उदयपुर तथा जयपुर की रियासतों की ओर से उनके नुमाइन्दे के रुप में उनका पक्ष रखने के लिये इंग्लैण्ड गये। सर सुखदेव प्रसाद काक का 3 वर्ष पश्चात सन् 1936 में लगभग 74 वर्ष की आयु में निधन हो गया।

सर सुखदेव प्रसाद काक का विवाह मोहिनी हुक्कू के साथ सम्पन्न हुआ था जो पंडित जियालाल हुक्कू की पुत्री और बिजनौर रियासत के निवासी पंडित मोती लाल हुक्कू की पौत्री थीं। आपके तीन पुत्र क्रमशः धर्म नारायण, कृपा नारायण और जयनाथ थे। आपके दो पुत्रियां थीं जिनमें सुखराज का विवाह पंडित महेश्वर नाथ कौल के साथ तथा रुप कुमारी का विवाह पंडित मदन मोहन नाथ चक के साथ सम्पन्न हुआ था।

सर सुखदेव प्रसाद काक के ज्येष्ठ पुत्र पंडित धर्म नारायण काक उदयपुर रियासत में माहाराजा गोपाल सिंह के शासन काल में दीवान हो गये थे। आपका विवाह जोधपुर रियासत की सुश्री सुशीला वातल के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके तीन पुत्र कृष्ण प्रसाद, रवीन्द्र नाथ तथा कपिल देव थे और छः पुत्रियां क्रमशः चन्द्र मोहिनी, शकुन्तला, कृष्णावती, पद्मावती, सुलक्षणा, और कमला थीं। जिनमें चन्द्र मोहिनी का विवाह पंडित निरंजन नाथ वांचू के साथ, शकुन्तला का विवाह पंडित महेश्वर नाथ जुत्शी के साथ, कृष्णावती का विवाह पंडित मनकामेश्वर नाथ जुत्शी के साथ, पद्मावती का विवाह पंडित सतेन्द्र नाथ कौल के साथ, सुलक्षणा का विवाह पंडित कपिल रैना के साथ तथा कमला का विवाह पंडित

अवतार नारायण तिक्कू के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित धर्म नारायण काक के ज्येष्ठ पुत्र पंडित कृष्ण प्रसाद काक का विवाह जोधपुर रियासत की सुश्री रुप कुमारी वातल के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दूसरे पुत्र पंडित रवीन्द्र नाथ काक का विवाह लखनऊ निवासी पंडित श्याम सुन्दर नारायण बक्शी की सुपुत्री आशा बक्शी के साथ सम्पन्न हुआ था। जबकि पंडित कपिल देव काक आजीवन अविवाहित रहे।

सर सुखदेव प्रसाद काक के दूसरे पुत्र पंडित कृपा नारायण काक का विवाह जयपुर रियासत के दीवान पंडित जय नाथ अटल की सुपुत्री कैलासो के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के दो सन्तानें राम नारायण काक और हरि नारायण काक है जिनमें राम नारायण का विवाह श्यामा कौल के साथ तथा हरि नारायण काक का विवाह भारत के भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश न्यायमूर्ति कैलासनाथ वांचू की सुपुत्री इन्दु के साथ सम्पन्न हुआ है।

सर सुखदेव प्रसाद काक के तीसरे और अन्तिम पुत्र डॉ जयनाथ काक लाहौर के किंग एडवर्ड मेडिकल कालेज से शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात एक कुशल डॉक्टर बने। आपका विवाह जयपुर निवासी मेजर (डॉ0) प्यारे लाल अटल की सुपुत्री कमला के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके तीन पुत्र सुख कुमार काक, सिद्धार्थ कुमार काक तथा तिलक कुमार काक हैं। इनमें सुख कुमार काक का विवाह लखनऊ निवासी पंडित रामेश्वर नाथ मुट्टू की सुपुत्री माया के साथ, सिद्धार्थ कुमार काक का विवाह सुश्री मंजू कौल के साथ तथा तिलक कुमार काक का विवाह गुड़गांव निवासी पंडित अमर नाथ वाँचू की सुपुत्री कनक के साथ सम्पन्न हुआ है।

सर सुखदेव प्रसाद काक ने एक भरा पूरा सुखमय जीवन व्यतीत किया। वह एक दृढ़ विश्वास वाले व्यक्ति थे और हर कार्य को पूरी निष्ठा और ईमानदारी के साथ करते थे। आप अपने परिश्रम के बल पर प्रशासन के उच्चतम शिखर तक पहुंचे और काफ़ी ख्याति अर्जित की। आपके जोधपुर रियासत के लिये किये गये महत्वपूर्ण कार्य सदैव स्वर्ण अक्षरों में अंकित किये जायेंगें। जिनसे भविष्य में आने वाली पीढ़ियां सदा प्रेरणा लेती रहेंगी। आशा है युवा पीढ़ी निम्नलिखित पंक्तियों का अनुकरण करने का प्रयास करेगी।

आग जिसमें लगन की जलती है।
कामयाबी उसी को मिलती है।।

पंडित मोती लाल नेहरू



राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने देश को अंग्रजों के शासन तंत्र से मुक्त कराने के लिए अपने स्वतंत्रता संग्राम, में 1857 की क्रान्ति के एक दम विपरीत अहिंसा, अवज्ञा तथा असहयोग आन्दोलन को अंग्रेज़ों के विरूद्ध एक मुख्य शस्त्र के रूप में प्रयोग किया पर कदाचित उन्होने उस समय देश प्रेम और देश भक्ति की ज्योति जलाने के अपने प्रयास में देश पर उनके दूरगामी परिणाम क्या होंगें इसकी कभी कल्पना नहीं की। यही एक प्रमुख कारण था कि उस समय के देश के कुछ प्रमुख कानूनविद् और संविधान के ज्ञाता महात्मा गांधी की इस विचारधारा से सहमत नहीं थे, कि देश के कानून और संविधान के विरूद्ध किसी प्रकार का कोई आन्दोलन चलाया जाये क्योंकि वह कानून को तोड़ कर किसी प्रकार का प्रदर्शन करने के पक्षधर नहीं थे। इसी मतभेद के कारण कांग्रेस पार्टी में नरमदल और गर्मदल नाम के दो घटक बने और कुछ दिग्गज देशभक्त नेताओं ने कांग्रेस पार्टी की सदस्यता से अपना त्यागपत्र दे दिया।

पंडित मोती लाल नेहरू भी प्रारम्भ में महात्मा गांधी की विचारधारा से बहुत अधिक सहमत नहीं थे क्योंकि उन पर पाश्चात्य सभ्यता का बहुत अधिक प्रभाव था परन्तु महात्मा गांधी के सम्पर्क में आने के पश्चात और अपने परिवार में तीर्व गति से बदल रहे वातावरण के कारण आपको विवश होकर अपनी मानसिकता को परिवर्तित करना पड़ा और वह महात्मा गांधी के अनुयायी होकर देश के स्वतंत्रता संग्राम में अपनी लाखों रूपयों की वकालत का परित्याग कर कूद पड़े।

पंडित मोती लाल नेहरू के पूर्वज पंडित राज कौल मुख्य रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के रहने वाले थे और कदाचित वहां हब्बाकदल मुहल्ले

में रहते थे। मुग़ल सम्राट फ़र्रूख़सियर (1713–1719) सन् 1716 में भ्रमण करने के उद्देश से कश्मीर गये और उन्होंने वहां के अनेक रमणीक स्थल देखे। सम्राट की वहां एक दिन पंडित राज कौल से भेंट हो गयी, जो संस्कृत तथा फ़ारसी भाषा के विद्वान थे। सम्राट उनकी विद्वता तथा वाक्य चाटुकारिता से बहुत अधिक प्रभावित हुये और उनको दिल्ली आने का निमंत्रण दिया। राज कौल उसी वर्ष सन् 1716 में अपने परिवार सहित कश्मीर घाटी से दिल्ली आ गये और मुग़ल सम्राट फ़र्रूख़सियर ने उनको राजमहल में एक अध्यापक के रूप में नियुक्त कर दिया।

उस समय दिल्ली के लाल किले में शाही बेगमों के स्नान की व्यवस्था के लिये यमुना नदी से स्नान गृहों में जल लाने के लिये लाल किले तक एक नहर का निर्माण कराया गया था। जिससे राजमहलों में जल की आपूर्ती होती थी। इसी नहर के तट पर चांदनी चौक के निकट नवाब सआदत खां ने एक भव्य हवेली का निर्माण कराया था। मुग़ल सम्राट फ़र्रूख़सियर ने पंडित राज कौल को यही हवेली उनके परिजनों के रहने के लिए तथा उसके आसपास के कुछ गांव जागीर के रूप में प्रदान किये। चूंकि पंडित राज कौल इस नहर के तट पर बनी हुई ऐतिहासिक हवेली में रहने लगे इस नाते उन्होंने अपने राज महल से सम्बन्ध के कारण तथा अपनी एक विशेष पहचान बनाने के उद्देश्य से अपना कुलनाम कौल के स्थान पर कौल नेहरू लिखना प्रारम्भ कर दिया। कालान्तर में उनके वंशजों ने कौल नेहरू के स्थान पर अपना कुलनाम नेहरू लिखना अधिक उपयुक्त समझा।

पाकिस्तान के शासक जनरल परवेज़ मुशर्रफ़ की दरियागंज में स्थित ऐतिहासिक नहर वाली हवेली कदाचित वही हवेली है जिसमें कभी पंडित जवाहर लाल नेहरू के पूर्वज पंडित राज कौल रहा करते थे क्योंकि दिल्ली का दरियागंज मुहल्ला उसी नहर के किनारे पर आबाद हुआ था। जिससे यमुना नदी के पानी की लाल किले में आपूर्ति की जाती थी।

पंडित राज कौल के दो पुत्र थे मनसा राम और साहिब राम। विश्वसनीय सूचना के अनुसार पंडित साहिब राम कौल नेहरू दिल्ली से अच्छी नौकरी पाने के उद्देश्य से लाहौर पलायन कर गये। पंडित मनसाराम कौल नेहरू के सुपुत्र पंडित लक्ष्मी नारायण नेहरू बाद में ईस्ट इण्डिया कम्पनी में वकील हो गये थे।

पंडित गंगाधर नेहरू जो पंडित लक्ष्मी नारायण नेहरू के पुत्र थे मुगल

सम्राट बहादुर शाह ज़फर (1837–1857) के शासन काल में दिल्ली के शहर कोतवाल हो गये थे। आपका विवाह पंडित शंकर नाथ जुत्शी जो उस समय राजदरबार के एक प्रसिद्ध कातिब थे की सुपुत्री इन्द्राणी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके तीन पुत्र बंसीधर, नन्दलाल तथा मोती लाल और दो पुत्रियां थीं पटरानी, जिनका विवाह एक तकरू परिवार में तथा माहरानी जिनका विवाह एक जुत्शी परिवार में सम्पन्न हुआ था।

सन् 1857 की क्रान्ति में इस नेहरू परिवार को दिल्ली से पलायन करके आगरे में शरण लेने को बाध्य होना पड़ा। अंग्रेज़ी फौजों और अराजक तत्वों ने दिल्ली में स्थित नेहरू परिवार की हवेली में जम कर लूटपाट की और उसको ध्वस्त किया। जिस समय यह नेहरू परिवार दिल्ली से आगरा पलायन कर रहा था, उस समय पंडित नन्द लाल नेहरू की आयु केवल 12 वर्ष की थी और उनकी पत्नी केवल 6 वर्ष की थीं। उनकी दोनों बहने बहुत अधिक सुन्दर और आकर्षक थीं इस नाते अंग्रेज़ फ़ौजी अफ़सरों को शंका हुई कि कदाचित यह किसी अंग्रेज़ की पुत्रियों को अगवा कर के ले जा रहे हैं, और उन अंग्रेज़ फौजी अफ़सरों ने नेहरू परिवार को रास्ते में ही रोक लिया। पंडित नन्द लाल नेहरू दिल्ली कालेज में अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा ग्रहण किये हुये थे और थोड़ी बहुत अंग्रेज़ी भाषा बोल लेते थे। उनके प्रयास से अंग्रेज़ अफ़सरों ने उनको आगरा प्रस्थान करने की अनुमति प्रदान की।

इस नेहरू परिवार के दिल्ली से आगरा आ जाने के लगभग 4 वर्ष पश्चात सन् 1861 के फ़रवरी माह में पंडित गंगाधर नेहरू की लगभग 34 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी और उसके लगभग 3 माह पश्चात 6 मई सन् 1861 को आगरा में पंडित मोती लाल नेहरू का जन्म हुआ। आपके अग्रज भ्राता पंडित बंसीधर नेहरू उस समय तक प्रदेश की ज्यूडिशियल सर्विसेस में आ गये थे और इस नाते अलग रहते थे। इस संयुक्त नेहरू परिवार के एक प्रकार से पंडित नन्द लाल नेहरू मुखिया थे जो आगरा की सद्रे दीवानी अदालत में वकालत करते थे और लग़भग 10 वर्ष उसके पूर्व राजपूताना की खेतरी रियासत में दीवान रह चुके थे।

पंडित मोती लाल नेहरू की प्रारम्भिक उर्दू, अरबी तथा फ़ारसी भाषा की शिक्षा उस समय की परम्परा के अनुसार आगरा में ही सम्पन्न हुई। फ़िर उच्च शिक्षा के लिये आपने आगरा कालेज में प्रवेश लिया पर आपका ध्यान पढ़ाई में कम और मौज मस्ती में अधिक रहता था। आप अपने विद्यार्थी जीवन में एक दबंग

किस्म के छात्र थे और यदा कदा कक्षा के अन्य छात्रों की जम कर पिटायी कर दिया करते थे। यद्यपि आपकी बुद्धि काफ़ी तीव्र थी, पर आप परीक्षा के समय ताज महल के सुन्दर उद्यानों का भरपूर आनन्द लेते थे। इस कारण भरसक प्रयासों के पश्चात भी आप स्नातक नहीं बन पाये। आप अपने बड़े भाई पंडित नन्द लाल नेहरू के संरक्षण में बेफ़िक्र होकर अपने युवा जीवन का पूर्ण सुख लेते रहे।

सन् 1868 में माहारानी विक्टोरिया के एक आदेश के अनुपालन में उच्च न्यायालय की पीठ आगरा से इलाहाबाद स्थानान्तरित कर दी गयी। कुछ वर्ष पश्चात सन् 1872 के आस पास पंडित नन्द लाल नेहरू अपनी वकालत को और अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से आगरा से इलाहाबाद चले आये और वहां मीरगंज मुहल्ले में एक मकान लेकर अपने परिवार के साथ रहने लगे।

उस समय तक वकालत प्रारम्भ करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा संचालित परीक्षा में उत्तीर्ण होना आवश्यक था। पंडित मोती लाल नेहरू ने यह परीक्षा प्रथम स्थान पाकर उत्तीर्ण की तत्पश्चात आप इलाहाबाद से कानपुर चले गये और वहां के प्रख्यात वकील पंडित पृथ्वी नाथ चक के साथ उनके जूनियर के रूप में कार्य करने लगे। कश्मीरी पंडितों में उस समय अल्प आयु में विवाह कर देने की प्रथा थी उसी चलन के अनुसार सन 1879 के आस पास पंडित मोती लाल नेहरू का पहला विवाह कानपुर निवासी एक नागू परिवार की कन्या के साथ कर दिया गया पर पंडित मोती लाल नेहरू की इस पहली पत्नी की प्रसव के समय सन 1881 में मृत्यु हो गयी क्योंकि उस समय तक प्रसव से सम्बंधित रोगों के उचित उपचार के साधन न तो विकसित हो पाये थे और न ही उचित औषधियों का निर्माण प्रारम्भ हो सका था।

पंडित मोती लाल नेहरू 3 वर्ष कानपुर में वकालत करने के पश्चात सन् 1886 में अपने अग्रज भ्राता पंडित नन्द लाल नेहरू को वकालत में सहयोग करने के उद्देश्य से इलाहाबाद चले गये और उनके परिवार के साथ उनके मीरगंज मुहल्ले में स्थित आवास में रहने लगे। आप वहां अपने भाई के कार्य में हाथ बटाने लगे। सन् 1887 में अकस्मात पंडित नन्दलाल नेहरू का भरी जवानी में केवल 42 वर्ष की आयु में निधन हो गया जिससे पूरे नेहरू परिवार को गहरा धक्का लगा क्योंकि सारे परिवार के भरण पोषण की ज़िम्मेदारी उन्ही के कंधों पर थी। इस दुःखद घटना से एकाएक सारे परिवार का भार पंडित मोती लाल नेहरू के

कंधों पर आ गया। पंडित मोती लाल नेहरू ने अपनी वकालत को सुचारू रूप से चलाने तथा अपने को एक कुशल वकील के रूप में स्थापित करने के लिए कठोर परिश्रम करना प्रारम्भ किया और अपने भ्राता द्वारा लिये हुए मुकदमों की पूरी निष्ठा के साथ पैरवी करने लगे।

पंडित मोती लाल नेहरू का दूसरा विवाह कश्मीर के श्रीनगर जनपद के हब्बाकदल मुहल्ले के निवासी रायबहादुर पंडित प्रेम नाथ ठुस्सू की बहन सुश्री स्वरूप रानी ठुस्सू के साथ सन् 1887 के आस पास सम्पन्न हुआ था। आपको 14 नवम्बर सन् 1889 को अपने मीरगंज के आवास में एक पुत्र रत्न प्राप्त हुआ जिसका नाम आपने जवाहर लाल रखा।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय में लगभग 6 वर्ष जम कर वकालत करने के पश्चात आपकी गणना नगर के प्रतिष्ठित वकीलों में की जाने लगी। आप सन् 1899 में प्रथम बार इंग्लैण्ड गये। आपके अग्रज भ्राता पंडित बंसी धर नेहरू इसके पूर्व सन् 1895 में इंग्लैण्ड का भ्रमण कर चुके थे। आपने इंग्लैण्ड से आने के पश्चात कोई प्रायश्चित नहीं किया क्योंकि आप इस प्रकार की मान्यताओं के कट्टर विरोधी थे और आपने एक प्रकार से उस समय की बिरादरी में स्थापित परम्पराओं को नकारते हुए क्रान्ति का शंखनाद किया। आपने "सत्य सभा" का गठन किया और प्रायंश्चित करने को एक मूर्खता पूर्ण व्यवहार बताया।

सन् 1899 में आपने इलाहाबाद में 1, चर्च रोड पर स्थित एक 14 कमरों का भव्य बंगला क्रय किया और अपने संयुक्त परिवार सहित पुराने मीरगंज मुहल्ले से निकल कर इस नये आवास में रहने लगे जिसका नाम आपने "आनन्द भवन" रखा। इसी आवास में आपकी पुत्रियों कमशः विजय लक्ष्मी का सन् 1900 में तथा कृष्णा का सन् 1907 में जन्म हुआ। आपको एक और पुत्र भी प्राप्त हुआ था जिसका नाम आपने हीरा लाल रखा था। पर कदाचित चेचक हो जाने के कारण उसकी अल्प आयु में ही मृत्यु हो गयी।

पंडित मोती लाल नेहरू के प्रारम्भिक जीवन में ब्रिटिश प्रोफेसरों की संगत में एक रचनात्मक प्रभाव पड़ा जिसके कारण उन्होने अपने जीवन में पाश्चात्य सभ्यता को अंगीकार किया और जिसके कारण "आनन्द भवन" का वातावरण एकदम विशुद्ध विदेशी बना जहां का रहन सहन, भोजन, इत्यादि ग्रहण करने का तरीका अग्रेज़ी सभ्यता पर आधारित था। और इस मारे रूढ़ीवादी कश्मीरी पंडित उनके यहां जाने से कतराते थे। आपकी धर्म पत्नी श्रीमती स्वरूप रानी नेहरू

इसके एकदम विपरीत थीं। वह पूर्ण रूप से विशुद्ध भारतीय संस्कृति में विश्वास रखती थीं और धार्मिक प्रवृत्ति की स्त्री थीं तथा नित्य बड़ी निष्ठापूर्वक एकाग्र मन से पूजा अर्चना करती थीं।

सन् 1903 में कश्मीर घाटी में वितस्ता नदी में भयंकर बाढ़ आ जाने के कारण वहां के कश्मीरी पंडितों को काफ़ी क्षति उठानी पड़ी। पंडित मोती लाल नेहरू ने उनकी सहायता के लिये कश्मीर रीलीफ़ फंड में 1000/- रू0 की धनराशि दान में दी।

पंडित मोती लाल नेहरू ने इलाहाबाद नगर की सामाजिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में खुल कर भाग लेना प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार के कार्यक्रमों में अपने परिवार की महिलाओं को भी भाग लेने की खुली छूट दे दी जो उस समय की प्रचलित पर्दा प्रथा को देखते हुये वास्तव में एक बहुत बड़ा क्रांतिकारी क़दम था। आपने बिरादरी में प्रचलित जाति पाति के बन्धन को तोड़ा और किसी भी व्यक्ति द्वारा पकाये गये भोजन को ग्रहण करने की परम्परा की नीव डाली। एक बार आपने अपने आवास पर डा0 (सर) तेज बहादुर सप्रू को उनकी पत्नी श्रीमती दुर्गा सप्रू के साथ भोजन पर आमंत्रित किया। यह दम्पति जब भोजन ग्रहण करने के लिये बैठा तो श्रीमती दुर्गा सप्रू की निगाह एकाएक पंडित मोती लाल नेहरू के विश्वास पात्र मोहम्मद अहमद पर पड़ी जो पानी बांट रहा था। श्रीमती दुर्गा सप्रू बिना भोजन ग्रहण किये अपने घर चली गयीं और डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू को भी उनके साथ, अपने घर चला जाना पड़ा। इस घटना के पश्चात काफ़ी समय तक पंडित मोती लाल नेहरू और डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू में बात चीत नहीं हुई।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तत्कालीन प्रमुख न्यायधीश सर जान एज ने पंडित मोती लाल नेहरू से इलाहाबाद क्लब की सदस्यता ग्रहण करने का आग्रह किया, जो उस समय अंग्रेज़ों का नगर में एक प्रमुख क्लब था। प्रारम्भ में तो पंडित मोती लाल नेहरू को इस क्लब की सदस्यता ग्रहण करने में कुछ हिचकिचाहट हुई पर बाद में आपने इस क्लब की सदस्यता ग्रहण कर ली।

आपकी इस उन्मुक्त तथा स्वछंद विचारधारा के कारण उस समय की बिरादरी में केवल नेहरू परिवार की महिलाओं नें सार्वजनिक कार्यक्रमों में खुल कर भाग लेना प्रारम्भ किया। आपके भतीजे पंडित बृजलाल नेहरू की पत्नी श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने स्त्रीदर्पण नामक पत्रिका का प्रकाशन सन् 1909 में

प्रारम्भ किया और आपके दूसरे भतीजे पंडित मोहन लाल नेहरू की पत्नी श्रीमती उमा नेहरू ने सन् 1912 में इलाहाबाद म्यूनिस्पल बोर्ड का चुनाव लड़ा। आप प्रथम भारतीय महिला थीं जो चुनाव के मैदान में उतरीं। पंडित मोती लाल नेहरू ने अंग्रेजी में 'Indcpendant' नाम के एक समाचार पत्र का इलाहाबाद से प्रकाशन प्रारम्भ किया जिसके सम्पादक सैय्यद हुसैन थे।

सन् 1915 में पंडित मोती लाल नेहरू ने डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू, पंडित जगत नारायण मुल्ला तथा पंडित हृदय नाथ कुंजरू के साथ हिन्दू महासभा की सदस्यता ग्रहण की। इसी वर्ष प्रदेश के तत्कालीन ले0 गर्वनर सर जेम्स मेस्टन (1865–1943) ने जुलाई माह में लेजिस्लेटिव कौंसिल में एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसमें धर्म के आधार पर म्यूनिस्पल बोर्ड के चुनाव क्षेत्रों का परिसीमन करने का प्राविधान था जो माहाराजा जाहांगीराबाद द्वारा एक प्राईवेट बिल के रूप में लाया गया था। पंडित मोती लाल नेहरू, पंडित जगत नारायण मुल्ला तथा डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू की तिकड़ी ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया जबकि व्यापक समाज में इसका घोर विरोध हुआ और इन तीनों नेताओं के पुतले फूंके गये।

सुश्री ऐनी बेसेन्ट ने सन् 1916 में इंडियन होम लीग नाम की संस्था की स्थापना की जिसकी पंडित मोती लाल नेहरू ने डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू के साथ सदस्यता ग्रहण की। इसी वर्ष 8 फ़रवरी को बसंत पंचमी के शुभ मुहुर्त में पंडित जवाहर लाल नेहरू का विवाह दिल्ली की बाजार सीता राम के निवासी पंडित जवाहर मल कौल की सुपुत्री सुश्री कमलाः (अटल) कौल के साथ ऐतिहासिक हाक्सर वालों की भव्य हवेली में सम्पन हुआ जिसे बहुत ही आकर्षक ढंग से सजाया गया था।

सन् 1916 के अक्टूबर माह में लखनऊ में कैसरबाग की ऐतिहासिक सफ़ेद बारादरी में कांग्रेस पार्टी का अधिवेशन पंडित जगत नारायण मुल्ला के संरक्षण में बहुत भव्य रूप से मनाया गया जिसमें प्रथम बार महात्मा गांधी ने भाग लिया। यही उनकी पंडित जवाहर लाल नेहरू से भेंट हुई और दोनों के बीच आत्मीयता बढ़ी । इस समाचार से पंडित मोती लाल नेहरू जो उस समय तक पाश्चात्य सभ्यता के पुजारी थे कुछ विचलित हुये और उन्होंने महात्मा गांधी को आनन्द भवन आने का निमंत्रण दिया इस प्रकार पंडित जवाहर लाल नेहरू के कारण पंडित मोती लाल नेहरू महात्मा गांधी के सम्पर्क में आये। इस कम में एक घटना और घटी जिसमें पंडित मोती लाल नेहरू की सुपुत्री विजयलक्ष्मी उनके समाचार

पत्र "Independant" के सम्पादक सैय्यद हुसैन के साथ कदाचित निकाह करने के उद्देश्य से घर से चली गयी जिससे इलाहाबाद की बिरादरी में पंडित मोती लाल नेहरू की बड़ी किरकिरी हुई और उर्दू के प्रसिद्ध शायर अकबर इलाहाबादी ने तंज़ करते हुए निम्नलिखित पंक्तियां रचित कीं।

ऐडिटर के साथ हो गयी चम्पत।
इन्डिपेन्डेन्ट क्यों बनाया था।।

पंडित मोती लाल नेहरू का इस संकट की घड़ी में महात्मा गांधी ने पूरा साथ दिया और अपनी कूटनीति के प्रभाव से विजयलक्ष्मी का विवाह एक दक्षिण के ब्राह्मण रंजीत पंडित के साथ सम्पन्न कराया जिससे पंडित मोती लाल नेहरू और महात्मा गांधी के मध्य और अधिक निकटता बढ़ी और दोनो के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित हुये। यद्यपि श्रीमती स्वरूप रानी नेहरू को उनके परिवारिक मामलों में महात्मा गांधी का बहुत अधिक हस्तक्षेप कुछ अच्छा नहीं लगता था।

13 अप्रैल सन् 1919 को बैसाखी के पावन पर्व पर ब्रिगेडियर जनरल रेजीनाल्ड डायर ने अमृतसर के ऐतिहासिक जलियांवाला बाग़ में असंख्य निसहाय व्यक्तियों को गोलियों से भून डाला। इस हृदय विदारक घटना ने पंडित मोती लाल नेहरू को हिला कर रख दिया। समूचे पंज़ाब प्रान्त में मार्शल लॉ घोषित कर दिया गया। कांग्रेस पार्टी ने अंग्रेजों द्वारा पंजाब में चलाये जा रहे पुर्नवास के कार्यक्रमों की समीक्षा के लिये पंडित मोती लाल नेहरू के नेतृत्व में एक दल अमृतसर भेजा जहां पंडित मोती लाल नेहरू ने कांग्रेस पार्टी की ओर से महत्वपूर्ण सामाज़िक कार्य किया और पार्टी को संगठ़ित कर उसके कार्यकलापों को एक गति प्रदान की जिसके कारण प्रथम बार उनको कांग्रेस पार्टी का अध्यक्ष चुना गया। इसी वर्ष इलाहाबाद में आपके आवास आनन्द भवन में 19 नवम्बर को इन्दिरा प्रियदर्शनी नेहरू का जन्म हुआ।

पंडित मोती लाल नेहरू के जीवन में एक विशेष बात यह रही कि कभी भी आपने किसी कश्मीरी पंडितों के संगठन की सदस्यता नहीं ग्रहण की और न ही कभी उनकी किसी पत्रिका में अपने विचार प्रकट किये जबकि कश्मीरी पंडितों द्वारा संचालित़ पत्र और पत्रिकायें सदैव आपकी गतिविधियों को प्रमुखता से प्रकाशित करती रहीं। आप जब भी इलाहाबाद से लखनऊ आते तो अपने गुरू पंडित पृथ्वी नाथ चक के अनुज भ्राता पंडित जानकी नाथ चक के कश्मीरी मुहल्ले में स्थित आवास में ठहरते थे और वहां शतरंज की बाज़ियां खूब जमती थीं पर

विजयलक्ष्मी की घटना के पश्चात से यह सम्बन्ध समाप्त हो गया।

सन् 1920 तक कांग्रेस पार्टी कुछ गिने–चुने सम्भ्रांत परिवारों तक ही सीमित थी। उसका कोई व्यापक जनाधार नहीं बन पाया था। सन् 1920 में कांग्रेस पार्टी के नागपुर में आयोजित अधिवेशन के बाद महात्मा गांधी ने अंग्रेजों के विरूद्ध असहयोग आन्दोलन की घोषणा कर दी जिसके कारण कांग्रेस पार्टी एक व्यापक आधार वाली पार्टी बनी और समाज के विभिन्न वर्गो ने इसमें खुल कर भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। पंडित मोती लाल नेहरू भी उस समय की बिरादरी में स्थापित परम्पराओं के विरूद्ध इस आन्दोलन में कूद पड़े क्योंकि उस समय तक किसी भी कश्मीरी पंडित नेता ने देश के कानून के विरूद्ध कार्य करना उचित नहीं समझा था सम्भवतः यह कदम उनको अपने पुत्र पंडित जवाहर लाल नेहरू के दबाव में उठाना पड़ा जो उस समय तक महात्मा गांधी के उत्तराधिकारी बन चुके थे। इस प्रकार पंडित मोती लाल नेहरू के स्वभाव तथा रहन सहन में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया और वह स्वदेशी विचारधारा के कट्टर समर्थक बन गये। इसी क्रम में इलाहाबाद में आपके आवास आनन्द भवन में विदेशी वस्तुओं की होली जलायी गई।

इसके पूर्व आनन्द भवन में एक बार पंडित मोती लाल नेहरू अपने कक्ष में अपने एक अंग्रेज़ मित्र के साथ चुस्कियां ले रहे थे मेज़ की एक तरफ पंडित जवाहर लाल नेहरू कुछ संजीदा पोज़ बनाये हुये बैठे थे। पंड़ित मोती लाल नेहरू ने मूड में आने के पश्चात वातावरण को आनन्दमय बनाने के उद्देश्य से फ़ारसी का एक शेर पढ़ा और पंडित जवाहर लाल नेहरू से कहा कि वह उसका अंग्रेजी में अनुवाद करके उनके अंग्रेज़ मित्र को समझायें। जब उनके इस आग्रह पर पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया तो पंडित मोती लाल नेहरू ने क्रोध में आकर मेज उलट दी और कक्ष से बाहर चले गये।

अंग्रेजों ने पंडित मोती लाल नेहरू को उत्तर प्रदेश की तत्कालीन लेजिस्लेटिव कौंसिल का सदस्य मनोनीत किया था। पर कांग्रेस के कलकत्ता में आयोजित अधिवेशन के पश्चात महात्मा गांधी द्वारा पूर्ण स्वराज की मांग की घोषणा कर देने के कारण आपने अपने पद से त्याग पत्र दे दिया और स्वतंत्रता आन्दोलन में एक सक्रिय भूमिका निभानी प्रारम्भ कर दी। आपने इलाहाबाद में एक विशाल भूखण्ड पर एक हलब 114 कमरे के स्वराज्यभवन का निर्माण कराया जो कांग्रेस पार्टी की गतिविधियों का एक प्रमुख केन्द्र बना।

इस अवज्ञा आन्दोलन में केवल दो कश्मीरी पंडितों ने पंडित मोती लाल नेहरू का साथ दिया। एक तो उनके पुत्र पंडित जवाहर लाल नेहरू थे और दूसरे थे डॉ0 कैलास नाथ काटजू। पंडित मोती लाल नेहरू ने डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू के साथ मिलकर इंन्डियन नैशनल यूनियन का गठन किया।

पंडित मोती लाल नेहरू को देश बन्धु चितरंजन दास और लाला लाजपत राय का भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ। सन् 1921 में तत्कालीन वाईसराय लार्ड रीडिग के कार्यकाल में इंग्लैण्ड के प्रिंस आफ वेल्स ने भारत की यात्रा की जिसका कांग्रेस पार्टी ने जम कर विरोध किया और देश में उनके विरूद्ध अनेक स्थानों पर प्रदर्शन किये गये। इन प्रदर्शनों में पंडित मोती लाल नेहरू तथा उनके पुत्र पंडित जवाहर लाल नेहरू ने खूब खुल कर भाग लिया जिसके कारण अंग्रेजों ने इन दोनों को 6 दिसम्बर सन् 1921 को जेल में नज़र बन्द कर दिया। पंडित मोती लाल नेहरू को नैनी जेल में बन्द कर दिया गया। और बग़ैर उचित मुकदमें की पैरवी के 6 माह के कारावास की सज़ा सुना दी गयी।

सन् 1922 के फरवरी माह में बिहार में चौरी चौरा काण्ड हो गया जिसमें क्रान्तिकारियों ने लगभग 35 पुलिसकर्मियों को गोली से भून डाला जिसके फलस्वरूप अंग्रेजों का दमन चक्र प्रारम्भ हुआ और अनेक कांग्रेस नेताओं को जेलों में ठूस दिया गया। इस घटना से पंडित मोती लाल नेहरू और महात्मा गांधी में कुछ मतभेद उत्पन्न हो गये और महात्मा गांधी को अपना आन्दोलन स्थगित करना पड़ा।

सन् 1927 में पंडित मोती लाल नेहरू ने पुनः पूरे योरप का भ्रमण किया और सन् 1928 के फ़रवरी माह में वह अपनी विदेश की यात्रा समाप्त करके भारत लौटे। उसी वर्ष साईमन कमीशन भारत आया जिसका कांग्रेस पार्टी ने विरोध किया। कांग्रेस पार्टी ने देश का संविधान लिखने के लिये पंडित मोती लाल नेहरू के नेतृत्व में एक कमेटी गठित की जिसने उस प्रस्तावित संविधान का मसौदा तैयार किया जिसको "नेहरू रिपोर्ट" से जाना जाता है।

सन् 1928 में कलकत्ते में कांग्रेस पार्टी का 34 वां अधिवेशन बहुत ही भव्य रूप से मनाया गया जिसमें पंडित मोती लाल नेहरू को कांग्रेस पार्टी का अध्यक्ष दूसरी बार चुना गया उनको उनके परिवार सहित 34 सफ़ेद घोड़ों की बग्घी में बैठा कर एक भव्य जुलूस में निकाला गया जिसके आगे मोटर साईकिलों पर सवार अनेक युवा कांग्रेसी नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में जुलूस की

अगुवाई कर रहे थे।

लगभग एक वर्ष पश्चात सन् 1929 के लाहौर के कांग्रेस के अधिवेशन में पंडित मोती लाल नेहरू के स्थान पर उनके सुपुत्र पंडित जवाहर लाल नेहरू को कांग्रेस पार्टी का अध्यक्ष चुना गया और पंडित मोती लाल नेहरू ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक अपना कार्यभार अपने होनहार पुत्र को सौंपा।

सन् 1930 में वाईसराय लार्ड इरविन के कार्यकाल में नमक पर टैक्स लगाने के विरूद्ध आन्दोलन हुआ। जिसमें महात्मा गांधी ने अपने साबरमती आश्रम से 78 साथियों के साथ डांडी तक ऐतिहासिक पैदल यात्रा की और नमक बना कर कानून को तोड़ा जिसके फलस्वरूप अंग्रेजों ने पुनः पंडित मोती लाल नेहरू को 30 जून सन् 1930 को कारागार में बन्द कर दिया। जेल में पंडित मोती लाल नेहरू के स्वास्थ में तीव्र गति से गिरावट आने लगी और वह काफ़ी गम्भीर रूप से बीमार हो गये जिसके कारण अंग्रेजों को उन्हें 8 सितम्बर सन 1930 को उपचार के लिए रिहा करना पड़ा।

पंडित मोती लाल नेहरू का प्रारम्भ में इलाहाबाद में ही उपचार चलता रहा पर जब उनको कोई विशेष लाभ नहीं हुआ तो उनकी पत्नी श्रीमती स्वरूप रानी नेहरू उनको कलकत्ते के एक प्रसिद्ध वैद्य कविराज श्यामदास वाचस्पति को दिखाने के लिए ले गयीं क्योंकि पंडित मोती लाल नेहरू कई रोगों से ग्रस्त थे और उनके चेहरे पर सूजन आ गयी थी जो एक अच्छा लक्षण नहीं था। पर वहां भी उनको कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। तब 4 फरवरी, 1931 को पंडित मोती लाल नेहरू को उपचार के लिए लखनऊ लाया गया और स्थानीय किंग जार्ज मेडिकल कालेज में भर्ती कराया गया जहां लगभग दो दिन पश्चात 6 फरवरी 1931 को प्रातःकाल उनका लगभग 70 वर्ष की आयु में निधन हो गया। उनके पार्थिव शरीर को मोटर कार द्वारा पंडित जवाहर लाल नेहरू लखनऊ से इलाहाबाद ले गये जहां संगम के पवित्र तट पर उनका अन्तिम संस्कार कर दिया गया। लाखों की संख्या में इलाहाबाद के निवासियों ने इस देश के महान सपूत को अपनी अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित की।

देश के स्वतंत्र होने के पश्चात इस महान देशभक्त की मधुर स्मृति को जीवित रखने के लिए इलाहाबाद में मोती लाल नेहरू मेडिकल कालेज की स्थापना की गयी। आपकी पत्नी की स्मृति में स्वरूप रानी अस्पताल का निर्माण हुआ तथा आपकी बहू की स्मृति में कमला नेहरू अस्पताल की आधार शिला सन्

1941 में महात्मा गांधी ने रखी। आज यह दिग्गज हस्तियां हमारे बीच नहीं हैं पर उनके द्वारा सम्पादित किये गये महान कार्य सदैव युवा पीढ़ी को सही दिशा में चलने का मार्ग प्रशस्त करते रहेंगे। किसी उर्दू के शायर ने अपनी बेबसी और लाचारी को बहुत ही सुन्दर रूप में अपने शब्दों में कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

मुझसे इन्साफ़ की तलब कैसी बयाबानी है।
जिस अदालत का मैं हाकिम हूं वह दीवानी है।।



प्रतिभा के धनी और राजनीति में निपुण

पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान



यद्यपि कश्मीरी पंडित काफ़ी लम्बे समय तक सत्ता के केन्द्र बिन्दु के निकट रहे पर उनका राजनीति के क्षेत्र में कभी भी बहुत सक्रिय योगदान नहीं रहा क्योंकि कदाचित उनकी अपनी स्थापित मान्यताऐं और परम्पराऐं कुछ दलगत और व्यक्तिगत राजनीति से अधिक ताल मेल नहीं खाती थी इस नाते वह अधिकतर शासन और प्रशासन तंत्र से जुड़े रहे और राजनीतिक दांव–पेंच और उठा–पटक से परहेज़ करते रहे। केवल इलाहाबाद का नेहरू परिवार इसका अपवाद था जिसने ब्रिटिश शासन काल में खुलकर सर्वप्रथम राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ किया और बिरादरी में उस समय व्याप्त रूढ़ीवादी परम्पराओं को नकार कर क्रान्ति का शंखनाद किया जिससे प्रभावित और प्रेरित होकर कुछ अन्य कश्मीरी पंडितों ने भी उनके पद चिन्हों पर चलना प्रारम्भ किया और सक्रिय राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने लगे। चूंकि उस समय केवल कांग्रेस पार्टी ही देश में एक मात्र राजनीतिक पार्टी थी। अतः स्वाभाविक रूप से इन कश्मीरी पंडितों ने नेहरू परिवार के सदस्यों के प्रभाव तथा आग्रह पर कांग्रेस पार्टी की सदस्यता ग्रहण कर ली और देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में बढ़ चढ़ कर भाग लेने लगे। ऐसे ही एक कर्मठ तथा राजनीति में निपुण पुरोधा थे पंडित श्यामसुन्दर नारायण मुशरान जिन्होंने अपने लम्बे संघर्षमय जीवन में ऐसे अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये जिसके लिये आज भी उनके क्षेत्र में उनका नाम बड़े आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है। आपने अपने जीवन काल में बहुत अधिक लोकप्रियता अर्जित की और मध्य प्रदेश की राजनीति में एक बिलकुल नयी कार्य प्रणाली का सूत्र पात्र करके एक नया इतिहास रचा और जन मानस के लिये एक प्रशंसा का पात्र बने।

आपके पूर्वज मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी थे। आपके पितामह पंडित शीतल प्रसाद मुशरान 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कश्मीर घाटी से निकल कर मध्य भारत के नरसिंहपुर नामक कस्बे में आकर निवास करने लगे। आपके पिता राय सांहब पंडित लक्ष्मी नारायण मुशरान कालान्तर में नरसिंहपुर के एक बड़े ज़मीनदार हो गये थे। उनका विवाह फ़ैज़ाबाद के निवासी पंडित मनोहर नाथ सप्रू की सुपुत्री प्राणेशुरी सप्रू के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के दो पुत्र श्याम सुन्दर नारायण तथा आनन्द नारायण और एक पुत्री राजकुमारी (लाडो) थीं जिनका विवाह जावरा रियासत के निवासी पंडित त्रिभुवन नाथ काटजू के सुपुत्र पंडित अमर नाथ काटजू के साथ सम्पन्न हुआ था जो प्रख्यात डॉ0 कैलास नाथ काटजू के अनुज भ्राता थे।

पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान का जन्म 19 नवम्बर सन् 1906 को मध्य प्रदेश के एक छोटे से कस्बे नरसिंहपुर में अपने पैतृक आवास में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा नरसिंहपुर में ही सम्पन्न हुई जहां ब्वायज़ हाई स्कूल से आपने अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपका एफ0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त सन् 1930 के दिसम्बर माह में जोधपुर रियासत के माहाराजा उम्मेद सिंह (1918–1947) के व्यक्तिगत चिकित्सक डॉ0 निरंजन नाथ गुर्टू की सुपुत्री सुश्री विद्यावती गुर्टू के साथ सम्पन्न हुआ। आप अपने विवाह के पश्चात नागपुर चले गये जहां आपने सन् 1931 में नागपुर के कृषि विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि ग्रहण की।

आप कृषि विज्ञान में स्नातक हो जाने के पश्चात अपने परिवार की ज़मानदारी में अपने पिता का सहयोग करने लगे। चूंकि आपके पिताजी अंग्रेज़ों के विश्वास पात्र थे और उनके द्वारा आनरेरी मजिस्ट्रेट बना दिये गये थे इस नाते स्वभाविक रूप से उनके तत्कालीन अंग्रेज़ अधिकारियों से काफ़ी मधुर सम्बन्ध थे। जिसके कारण अंग्रेज़ों ने पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान को नरसिंहपुर के सब जेल में जेलर (कारागार अधिकारी) के पद पर नियुक्त कर दिया पर आप एक संवेदनशील व्यक्ति होने के कारण वहां की कठोर दिनचर्या को बहुत अधिक समय तक झेल नहीं पाये। जेल में एक बार एक कैदी को फ़ांसी देने के दृश्य को देखकर आप मूर्छित हो गये। आपको यह बिलकुल स्पष्ट हो गया कि यह नौकरी आपके स्वभाव के अनुकूल नहीं है। आपने लगभग 3 वर्ष जेलर के पद पर कार्य करने के पश्चात अपनी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और पुनः

खेती–बारी का कार्य करने लगे। आप अपनी वाक्चातुकारिता तथा कुशल व्यवहार के कारण बहुत शीघ्र अपने पैतृक आवास के आस पास के गांवों में लोकप्रिय हो गये और अपने ज्ञान तथा अनुभव के बल पर गांव के किसानों की विभिन्न समस्याओं का निराकरण करने लगे। उस समय के किसानों की दुर्दशा देखकर और महात्मा गांधी की विचारधारा से आप इतने अधिक प्रभावित हुए कि आपने गांधीजी के आहवान पर कांग्रेस पार्टी की सदस्यता ग्रहण कर ली और देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े यद्यपि आपके परिजनों ने इसका कड़ा प्रतिरोध किया क्योंकि आपके पिता अंग्रेज़ों के भक्त थे और उनके द्वारा राय साहब की उपाधि से अलंकृत किये जा चुके थे। आपने इस प्रतिरोध का निर्भीक होकर सामना किया और किसानों को संगठित करके अंग्रेज़ों के विरूद्ध आन्दोलनों में सक्रिय रूप से सन् 1938 से भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। सन् 1940 में आपकी कार्य करने की क्षमता से प्रभावित होकर आपको नरसिंहपुर की कांग्रेस पार्टी की ज़िला ईकाई का अध्यक्ष चुना गया। आपने अपने कार्यकाल में अपने नगर में कांग्रेस पार्टी के ढांचे को संगठित किया और किसानों के आन्दोलनों में मुख्य रूप से बढ़ चढ़ कर भाग लिया। आपने सन् 1942 में महात्मा गांधी द्वारा चलाये गये अंग्रेज़ों के विरूद्ध अवज्ञा आन्दोलन में भी खूब खुल कर भाग लिया तथा विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने के लिये अनेक आन्दोलन चला कर लोगों को प्रेरित किया ताकि वह स्वदेशी के महत्व को समझें और उनमें आत्म सम्मान की भावना जागृत हो।

अंग्रेज़ों के विरूद्ध इन किसान आन्दोलनों में सक्रिय भूमिका निभाने के कारण सन् 1938 और सन् 1942 के मध्य आप चार बार अंग्रेज़ों द्वारा जेल में नज़रबन्द किये गये। आपकी जेल में प्रवास की अवधि एक माह से लेकर सात माह तक की रही। आपने अपना यह जेल प्रवास का समय अधिकतर पुस्तकें पढ़ने या सूत कातने में व्यतीत किया। आपके द्वारा जेल में काते हुए सूत से निर्मित दो साड़ियां आज भी सुरक्षित हैं।

15 अगस्त, सन् 1947 को एक लम्बी अवधि के पश्चात भारत अंग्रेज़ों के शासन तंत्र से मुक्त हुआ और पंडित जवाहर लाल नेहरू देश के प्रथम प्रधानमंत्री बने। 26 जनवरी सन् 1950 को एक स्वतंत्र देश का संविधान लागू हुआ जिसके पश्चात सन् 1952 में देश मे प्रथम आम चुनाव कराये गये। पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान इस चुनाव में अपने विधान सभा क्षेत्र नरसिंहपुर से विजयी

घोषित किये गये और वह इस प्रकार प्रथम बार तत्कालीन मध्य भारत की विधान सभा के सदस्य बने। सन् 1956 में तत्कालीन सेन्ट्रल प्राविन्सेस का पुर्नगठन करके एक नया राज्य मध्य प्रदेश बनाया गया और पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान इस नये प्रदेश की सरकार में उपमंत्री बनाये गये। जिसका नेतृत्व करने के लिये तत्कालीन प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने डॉ0 कैलास नाथ काटजू जैसे कर्मठ और योग्य नेता को चुना था क्योंकि उस समय मध्य प्रदेश की कांग्रेस पार्टी में विभिन्न घटकों में अपने अपने वर्चस्व के लिये उठा पटक प्रारम्भ हो चुकी थी।

पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान ने अपने पांच वर्ष के कार्यकाल में आदिम जाति कल्याण, कृषि तथा पशु कल्याण विभागों का कार्य पूरे दायित्व के साथ निष्ठापूर्वक सम्पादित किया और अनेक महत्वपूर्ण योजनाओं को क्रियान्वित कराया जिनसे मुख्य रूप से प्रदेश के अति पिछड़े क्षेत्रों का समुचित विकास सम्भव हो सके और जंगलों में रहने वाली आदिम जातियों के जीवन स्तर में कुछ सुधार लाया जा सके जो निवस्त्र जंगलों में विचरण करती थीं और जिन जातियों में आदमकाल की प्रथाऐं तब प्रचलित थीं। पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान में संगठनात्मक कार्य करने की एक अभूतपूर्व क्षमता थी इसी कारण आपको सन् 1946 में मध्य प्रदेश की कांग्रेस पार्टी का महासचिव चुना गया। जिस पद पर आप बड़ी ही निष्ठापूर्वक सन् 1954 तक कार्य करते रहे। आप अखिल भारतीय संगठन भारत कृषक समाज से भी सक्रिय रूप से जुड़े रहे। आपने इसी संगठन के दो प्रतिनिधिमण्डलों का नेतृत्व करते हुए अमेरिका और तत्कालीन सोवियत संघ की यात्रा भी की। आप कई वर्ष तक इस भारत कृषक समाज के महामंत्री और बाद में अध्यक्ष रहे। सन् 1968 में वह किसी कार्य से भारत कृषक समाज के वार्षिक अधिवेशन में भाग नहीं ले सके तो आपको तार द्वारा यह सूचना दी गयी कि आपकी अनुपस्थिति में आपको सर्व सम्मति से अध्यक्ष चुना गया है क्योंकि उस समय भारत कृषक समाज की वित्तीय स्थिति बहुत नाजुक थी और संगठन विघटन के कगार पर खड़ा था जिसे आपने अपने प्रयासों से पुनः गतिशील बना दिया। आपके संरक्षण में भारत कृषक समाज के कार्यालय के लिये मध्य प्रदेश में एक नया भवन क्रय किया गया और मध्य प्रदेश की शाखा ने विशेष रूप से प्रगति की क्योंकि संगठन को सुचारू रूप से चलाने के लिये उचित सन–साधनों का अभाव था और कोई उचित व्यवस्था नहीं हो पा रही थी। आपने अपने अथक

प्रयासों द्वारा एक प्रायः मृत संगठन में नव चेतना का संचार कर दिया।

सन् 1962 में आपने मध्य प्रदेश में कांग्रेस पार्टी के संगठन को और अधिक प्रभावशाली बनाने का कार्य सम्भाला और आपको आपकी संगठनात्मक कार्यप्रणाली को चुस्तदुरूस्त करने की क्षमता के कारण कांग्रेस पार्टी का सन् 1965 में प्रदेश अध्यक्ष नियुक्त किया गया। उस समय प्रदेश में कांग्रेस पार्टी का संगठनात्मक ढांचा बिलकुल चरमरा चुका था। प्रदेश की पार्टी का कोष बिलकुल रिक्त हो चुका थां। पार्टी के आफ़िस के कर्मचारी वेतन के अभाव में इधर उधर भटक रहे थे। हर तरफ़ अव्यवस्था व्याप्त थी कोई भी पार्टी का कार्य सुचारू रूप से नहीं हो पा रहा था और कुछ ऐसा प्रतीत होता था कि कदाचित अब कांग्रेस पार्टी का प्रदेश से पूर्ण रूप से सफ़ाया होने वाला है। आपने अपनी सूझ–बूझ अनुभव तथा कठिन परिश्रम द्वारा इस प्रायः मृत समान कांग्रेस संगठन में एक नयी चेतना जागृत की और उसे पुनः एक सक्रिय और गतिशील पार्टी बनाया। आपने दो वर्ष कठिन परिश्रम करके कांग्रेस पार्टी के भोपाल में स्थित प्रदेश कार्यालय को सुसंगठित किया और पार्टी कोष में काफ़ी धन एकत्रित किया जिसके कारण पार्टी की कार्यप्रणाली में एक प्रभावशाली परिवर्तन आया और पार्टीजनों में कार्य करने का उत्साह बढ़ा। पार्टी कार्यालय के लिये नया भवन क्रय किया गया और उसे सुसंगठित और सुव्यवस्थित किया गया।

मध्य प्रदेश में जब सन् 1967 के आम चुनाव के पश्चात द्वारिका प्रसाद मिश्र की सरकार पदासीन हुई तो आपको उसमें मंत्री नियुक्त किया गया और आपकी कृषि के क्षेत्र में विशेष रूचि तथा ज्ञान के कारण आपको कृषि विभाग का दायित्व सौंपा गया जिसे आपने बड़ी ही कुशलता पूर्वक सम्पादित किया। सन् 1969 में कांग्रेस पार्टी का अधिवेशन बंगलूर के ऐतिहासिक लालबाग़ में स्थित "ग्लास हाऊस" में सम्पन्न हुआ। इस ऐतिहासिक लालबाग़ का निर्माण मैसूर रियासत के शासक हैदर अली ने किया था। जिसको बाद में उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने विकसित किया था। अंग्रेज़ों ने अपने शासन काल में सन् 1888 में इस लालबाग़ में 75000 रूपये की लागत से एक भव्य "ग्लास हाऊस" का निर्माण कराया। जिसकी रचना जॉन कैमरन ने लन्दन के हाईड पार्क में सन् 1851 में बने "ग्लास हाऊस" के तर्ज पर की थी। इस भव्य उद्यान में शासक हैदर अली ने ईरान, तुर्की, काबुल, मोरिशस इत्यादि देशों से दुर्लभ पौधों की प्रजातियां मंगवा कर लगवाई थी। इसी ऐतिहासिक स्थल पर कांग्रेस पार्टी का विभाजन हुआ और

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपने को तत्कालीन कांग्रेस पार्टी की सिन्डिकेट से प्रथक कर इन्दिरा कांग्रेस पार्टी का गठन किया। प्रदेश में राजनीतिक उठा पटक और कांग्रेस पार्टी में विभाजन हो जाने के कारण प्रदेश में कांग्रेस पार्टी की सरकार का पतन हो गया और उसके स्थान पर संविद की सरकार बनी जिसके फलस्वरूप आप अपना पांच वर्ष का कार्यकाल पूरा नहीं कर सके।

सन् 1971 में भारत–पाक युद्ध के पश्चात बंग्लादेश का विश्व के मानचित्र पर एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उदय हुआ और भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को दुर्गा का अवतार माना गया। उसके पश्चात देश में आम चुनाव सम्पन्न कराये गये जिसमें भारी मतों से कांग्रेस पार्टी विजयी हुई और मध्य प्रदेश में पुनः कांग्रेस पार्टी की सरकार बनी। पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान को पुनः इस सरकार में मंत्री नियुक्त किया गया और सन् 1971 और सन् 1980 के मध्य आप वित्त, राजस्व और कृषि विभाग के समय–समय पर मंत्री के रूप में कार्य करते रहे। आप सबसे अधिक प्रसन्न कृषि मंत्री के रूप में रहते थे क्योंकि प्रदेश की कृषि से सम्बन्धित विभिन्न परियोजनाओं में आपकी विशेष रूचि थी ताकि प्रदेश को कृषि के क्षेत्र में किसी प्रकार आत्म निर्भर किया जा सके क्योंकि उस समय देश में बहुत अधिक मात्रा में खाद्यानों की आपूर्ति अमेरिका से पी0एल0 480 के अन्तर्गत होती थी जिससे देश के आर्थिक ढ़ांचे पर विदेशी ऋण का बहुत अधिक बोझ था। उनका सदैव यह प्रयास रहता था कि कृषि से सम्बन्धित नये–नये अविष्कारों का पूर्ण लाभ एक आम किसान तक पहुंचे और वह अपनी पैदावार बढ़ा कर उचित लाभ कमा सकें ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार आये और वह हर प्रकार से स्वावलम्बी बने।

सन् 1972 के आम चुनाव के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी पर चुनाव में भ्रष्ट तरीकों का प्रयोग करने का आरोप लगाकर उनके मुख्य प्रतिद्विन्दी समाजवादी पार्टी के नेता राज नारायण ने उनके विरूद्ध इलाहाबाद उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर कर दी। सन् 1974 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति जगमोहन लाल सिन्हा ने श्रीमती इन्दिरा गांधी का चुनाव अवैध घोषित कर दिया पर अपने निर्णय पर उन्होंने स्टे दे दिया। श्रीमती गांधी ने अपने बचाव में अपने सलाहकारों के आग्रह पर 25/26 जून सन् 1975 को सम्पूर्ण देश में अपातकालीन स्थिति घोषित कर दी और विरोधी पार्टियों के दिग्गज नेताओं को "मीसा" के अन्तर्गत जेलों में ठूंस दिया। जिससे पूरे देश में एक अजीब भयाक्रान्त

वातावरण बना और हर व्यक्ति भय के कारण एक दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखने लगा इसी घटनाक्रम में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सन् 1977 में आम चुनाव करा दिया जिसमें उनको पराजय का मुंह देखना पड़ा और सारी विपक्षी पार्टियों ने जय प्रकाश नारायण के नेतृत्व में एक जुट होकर केन्द्र में पहली बार जनता पार्टी की सरकार बनाई। जिसके 23 मार्च, सन् 1977 को मोरारजी देसाई प्रधान मंत्री बने। परन्तु मोरारजी देसाई और उनके गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह में कुछ व्यक्तिगत मतभेदों के कारण इस जनता पार्टी की सरकार का 15 जुलाई 1979 को पतन हो गया और चौधरी चरण सिंह कांग्रेस पार्टी के सहयोग से देश के प्रधानमंत्री बन गये। पर वह भी कुछ माह पश्चात कांग्रेस पार्टी द्वारा दिये गये समर्थन को वापस लेने के कारण बिना संसद का सामना किये अपना त्याग पत्र देकर चले गये। सन् 1980 के मध्यावधि चुनाव के पश्चात भारी मतों से जीत कर श्रीमती इन्दिरा गांधी पुनः भारत की प्रधानमंत्री बनीं।

पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान देश में इस तीव्रगति से बदल रहे राजनीतिक घटनाक्रम पर कांग्रेस पार्टी के एक कमर्ठ तथा अनुशासित सिपाही की भांति अपनी पैनी दृष्टि रखे रहे और पूरी निष्ठा के साथ अपना कार्य करते रहे। आपने अपने मंत्री पद के कार्यकाल में विकास से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण योजनायें लागू कीं। आप सन् 1980 तक प्रदेश सरकार के मंत्री के रूप में कार्य करते रहे।

आपके स्वभाव में एक विशेष बात यह थी कि आप अपने जीवन में चुनौतियों का डटकर पूरे साहस के साथ सामना करते थे जो आपको और अधिक क्रियाशील और उत्साहित बना देती थी। आप सदैव "लाईम लाईट" से दूर रहे क्योंकि आप व्यक्तिगत प्रचार के पक्षधर नहीं थे। आप सदा प्रचार और प्रसार के माध्यमों से दूर रहे और एक सच्चे साधक की भांति अपने कार्य में जुटे रहे। आप समय के मूल्य को भलि भांति समझते थे। इस नाते सदैव कार्यक्रमों में ठीक समय से पहुंचने पर विशेष ध्यान देते थे ताकि आपके कारण किसी को कोई कष्ट न उठाना पड़े। एक बार आपके विधान सभा जाने के लिये मोटर आने में कुछ देर हो गयी आप तुरन्त अपने एक परिचित के साथ उसके स्कूटर पर बैठ कर विधान सभा चले गये ताकि आपके विलम्ब से पहुंचने के कारण सरकारी काम काज में कोई व्यवधान न उत्पन्न हो। यह उस समय के मंत्री का आचरण था जबकि आजकल का मंत्री बिना लावलश्कर और कुछ झुनझुनों के चलना अपना

अपमान समझता है।

आप राजनीति के उतार चढ़ाव का एक दार्शनिक की भांति अवलोकन करते थे और राजनीतिक उठा–पटक को एक शतरंज का खेल समझते थे। आप स्पष्ट रूप से कहते थे कि राजनीति में कोई किसी का मित्र नहीं है सब अपना स्वार्थ सिद्ध करने में लगे रहते हैं। जिसको जहां अपना उल्लू सीधा करने का अवसर मिल जाता है वह तुरन्त उस ओर आकर्षित होता है अतः ऐसी परिस्थिति में किसी पर क्रोध करने की कोई आवश्यकता नहीं। उसे उसके हाल पर छोड़ देना चाहिये।

आप शान्त तथा गम्भीर स्वभाव के व्यक्ति थे। आपको सरल और सादा जीवन पसन्द था। इस नाते संसारिक तड़क भड़क से दूर रहते थे। आप एक मृदुभाषी तथा व्यवहार कुशल व्यक्ति थे और हर व्यक्ति को उचित आदर और सम्मान देते थे। आपको भ्रमण करने का बेहद शौक था। आप नाना प्रकार के व्यंजन करने के बहुत शौक़ीन थे और दुग्ध देने वाले पशुओं को पालने में आपकी विशेष रूप से रूचि थी। आपने अपने आवास में जर्सी नस्ल की गायें पाल रखी थीं जो काफ़ी बड़ी मात्रा में दूध देती थीं। आपको कृषि से बेहद प्रेम था जो एक प्रकार से आपकी आत्मा थी।

मध्य प्रदेश की कांग्रेस पार्टी के दो दिग्गज नेताओं द्वारिका प्रसाद मिश्र और श्यामा चरण शुक्ल के मध्य सदैव 36 का आंकड़ा रहा। इन दोनों नेताओं के पार्टी में घटक निरन्तर एक दूसरे पर हावी होने का प्रयत्न करते थे और वर्चस्व को लेकर आपस में उठा पटक चलती रहती थी। एक बार प्रदेश में सरकार के नेतृत्व में फेर बदल की चर्चा बहुत ज़ोरों से चल रही थी। अटकल बाजियों का बाज़ार गर्म था। उसी बीच पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी से मिलने उनके निमंत्रण पर दिल्ली गये। आप जब श्रीमती इन्दिरा गांधी से भेंट करने के पश्चात भोपाल लौटे तो पत्रकारों ने आपको आपके आवास पर घेरा और तरह–तरह के प्रश्न दाग़ने प्रारम्भ किये। आप पत्रकारों के प्रश्नों की बौछार को बड़े ही शान्त भाव से झेलते रहे और अपने चेहरे पर किसी प्रकार के भाव नहीं प्रकट किये। जब पत्रकार आपसे कुछ विशेष बात नहीं निकलवा पाये तो एक पत्रकार ने कुछ खीजकर प्रश्न किया कि मुशरान साहब यह बताईये कि प्रधानमंत्री से आपकी प्रदेश के मुख्य मंत्री को बदलने के सम्बन्ध में क्या बात हुई? आपका उसको विनम्र उत्तर था "No comments"

यह घटना उस समय की राजनीति में स्थापित माप दण्डों के स्तर को स्वयं दर्शाती है। आजकल का नेता अपने पेट में कुछ पचा नहीं पाता है और अधिकतर प्रचार पाने के लिये अनर्गल प्रलाप करता रहता है। आप अपने जीवन के अन्तिम समय तक सक्रिय रूप से कार्य करते रहे आपका सन् 1981 में लगभग 75 वर्ष की आयु में अपने भोपाल के आवास में निधन हो गया।

आपके पुत्र लेफ़टिनेन्ट कर्नल अजय नारायण मुशरान आजकल मध्य प्रदेश की सरकार में वित्त मंत्री हैं। पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान की दो पुत्रियां रत्नप्रभा और मीरा हैं जिनमें रत्न प्रभा का विवाह लेफ़टिनेन्ट जगमोहन नाथ नागू के सुपुत्र लेफटिनेन्ट कर्नल प्रेम नाथ नागू के साथ तथा मीरा का विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित जयकरन नाथ उगरा के सुपुत्र राजनाथ उगरा के साथ सम्पन्न हुआ है।

लेफटिनेन्ट कर्नल अजय नारायण मुशरान का विवाह लाहौर के निवासी पंडित रामलाल जी हांडू की सुपुत्री शान्ता के साथ सम्पन्न हुआ है। आप अपने पिता द्वारा स्थापित मूल्यों और आदर्शों का पूरी निष्ठा के साथ पालन कर रहे हैं और प्रदेश के चौमुखी विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। आप उन परम्पराओं को विकसित करने का प्रयास कर रहे हैं जिनकी आधारशिला कभी आपके पिताजी ने रखी थी। ऐसे महापुरूष इस संसार में यदा–कदा ही जन्म लेते हैं। जिनकी मधुर स्मृतियों को लोग अपने हृदय में सदैव संजोय रहते हैं। ऐसी महान आत्माओं को शत शत नमन। हिन्दी के कवि आत्म प्रकाश शुक्ल द्वारा रचित निम्नलिखित पंक्तियां इस सन्दर्भ में बहुत ही भावपूर्ण प्रतीत होती है।

"एक ही अनुभव हुआ है आदमी की ज़ात से
जिन्दिगी काटे नहीं कटती महज़ जज़बात से
आह भरने से नहीं सैय्याद पर होता असर
टूटता पाषाण है पाषाण के आघात से"



कुशल प्रशासक और निपुण शायर

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू "आसी"



लखनऊ नगर सदैव से सभ्यता और संस्कृति का केन्द्र रहा है। ऐसी मान्यता है कि जब मर्यादा पुरशोत्तम श्री राम ने देवी सीता को वन गमन का आदेश दिया था तो उनको लेकर कुछ समय लक्ष्मण जी ने इसी नगर में गोमती नदी के तट पर विश्राम किया था। वह स्थान आज भी लक्ष्मण टीले के नाम से जाना जाता है। कुछ प्राचीन ग्रन्थों में इसी कारण इस ऐतिहासिक नगर का लक्ष्मणपुरी के नाम से उल्लेख किया गया है। पुरातत्व विभाग को बंथरा के निकट दादुपुर में खुदाई में जो अवशेष मिले हैं वह इस बात की पुष्टि करते हैं कि लखनऊ की सभ्यता लगभग 1500 वर्ष ईसा पूर्व की है जिसे वैदिक काल माना जाता है।

ऐसी मान्यता है कि जिस स्थान पर लक्ष्मण जी ने आकर देवी सीता के साथ विश्राम किया था वहां कभी भव्य शिव मन्दिर हुआ करता था जिसके चारों ओर वाजपई ब्राह्मणों की बस्ती थी। जिन वाजपई परिवारों के आवास ऊँचाई पर थे वह ऊँचे वाजपई और जिनके आवास नीचे ढलान पर थे वह खाले के वाजपई कहलाते थे।

मुग़ल सम्राट औरंगज़ेब (1658–1707) जब सन् 1685 में लखनऊ पधारा और उसने टीले वाली मस्जिद का निर्माण प्रारम्भ करवाया तो वह वाजपई परिवार उस क्षेत्र से पलायन करके रानी कटरे में जाकर बसे और वहां इस प्रकार वाजपई टोला नाम का एक मुहल्ला आबाद हुआ।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू के पूर्वज पंडित रूप चन्द्र मुट्टू उन कुछ गिने चुने कश्मीरी पंडितों में एक थे जो कश्मीर घाटी से निकल कर अवध में नवाब शुजाउद्दौला (1753–1775) के शासन काल में लखनऊ के इसी रानी कटरा मुहल्ले के निकट खेत गली में आकर बसे। आपके दो पुत्र थे दया नाथ और लक्ष्मी नारायण।

पंडित दया नाथ मुट्टू ने काफ़ी लम्बी आयु करी। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने जब अपने जीवन के 100 वर्ष पूर्ण किये तो उनकी वर्षगांठ उनके परिजनों द्वारा बहुत बड़े पैमाने पर मनायी गयी जिसमें उस समय की सारी बिरादरी को उपहार स्वरूप सोने के लड्डू बांटे गये। जो स्वयं उस समय एक बहुत बड़ी ऐतिहासिक घटना थी। पंडित दया नाथ मुट्टू के पुत्र का नाम पंडित भोला नाथ मुट्टू तथा पौत्र का नाम पंडित प्रेम नाथ मुट्टू था।

पंडित प्रेम नाथ मुट्टू कालान्तर में अवध के नवाब के यहां दरबार में चकलेदार नियुक्त हो गये थे। आपका मुख्य कार्य काश्तकारों से लगान वसूलना था। आपके चार पुत्र थे जिनके नाम क्रमशः केदार नाथ, ज्वाला नाथ, दीनानाथ और जानकी नाथ थे।

पंडित ज्वाला नाथ मुट्टू के दो पुत्र थे जिनके नाम थे गोपाल नाथ तथा गोपी नाथ। पंडित गोपाल नाथ मुट्टू के चार पुत्र क्रमशः पृंथ्वी नाथ, हरिहर नाथ, जगमोहन नाथ तथा मनोहर नाथ थे। चूंकि पंडित जानकी नाथ मुट्टू का अपना कोई पुत्र नहीं था। इसलिये उन्होंने अपने अग्रज भ्राता पंडित ज्वाला नाथ मुट्टू के पौत्र हरिहर नाथ को गोद लेकर अपना दत्तक पुत्र बना लिया था।

पंडित हरिहर नाथ मुट्टू का जन्म 19 अक्टूबर 1872 को खेत गली में स्थित अपने पैतृक आवास में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक उर्दू तथा फारसी भाषा की शिक्षा उस समय की परम्परा के अनुसार कुशल तथा अनुभवी मौलवियों के संरक्षण में सम्पन्न हुई। आपने तद्पश्चात राजकीय जुबिली हाईस्कूल से सन् 1889 में अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने फिर उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से कैनिंग कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने क्रमशः 1891 में एफ0ए0 तथा सन् 1893 में बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की।

आपकी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात पहली नियुक्ति बरेली में कोर्ट ऑफ वार्ड्स के कार्यालय में हुई जहां आपने लगभग 6 वर्ष सराहनीय कार्य किया। आपके कार्य से प्रसन्न होकर अंग्रेज़ों ने आपको सन् 1901 में प्रोन्नती करके डिप्टी

कैलेक्टर बना दिया। आपने एक डिप्टी कैलेक्टर के रूप में प्रदेश के विभिन्न जनपदों में लगभग 20 वर्ष बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य किया। जिससे प्रभावित होकर अंग्रेज़ों ने सन् 1921 में आपको राय साहब की उपाधि से विभूषित किया और आपको कानपुर के आयकर विभाग का सहआयुक्त नियुक्त कर दिया। आप प्रथम भारतीय थे जो ब्रिटिश शासन काल में इस पद पर आसीन हुए। आपने इस पद की गरिमा के अनुकूल बड़ी ही निष्ठा तथा पूरी ईमानदारी के साथ कार्य किया जिससे प्रसन्न होकर अंग्रेज़ों ने दो वर्ष पश्चात सन् 1923 में आपको राय बहादुर की पदवी से सम्मानित किया और आपको आयकर आयुक्त बना दिया।

आपने लगभग 6 वर्ष कानपुर में आयकर विभाग में आयुक्त के रूप में कार्य किया। आप एक लम्बे सेवाकाल के पश्चात 55 वर्ष की आयु में सन् 1927 में सेवानिवृत्त हुए। आप सेवा निवृत्त होने के पश्चात कानपुर से अपनी जन्म स्थली लखनऊ चले आये जहां कुछ वर्ष निवास करने के पश्चात आप बनारस (वाराणसी) चले गये।

आप जब आयकर आयुक्त थे तो आप प्रदेश के तत्कालीन मुख्य सचिव मिस्टर क्रिस्टी से सदाचार के नाते भेंट करने गये। इस अंग्रेज़ आई0सी0एस0 अधिकारी ने आप पर व्यंग्य करते हुए प्रश्न किया "Yes Pandit out with your Matlab" आपको उसके इस भद्दे व्यवहार से बहुत क्रोध आया आपने उसको तुरन्त उत्तर दिया "I came for a courtesy call to pay my respect" और "Thanks" कहकर एक वायु के तीव्र झोंके के समान उसके कक्ष से बाहर चले गये। आप फिर दूसरी बार अपने जीवन काल में उससे नहीं मिले।

आपने सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात बीकानेर रियासत में वित्त आयुक्त के रूप में तथा टेहरी गढ़वाल राज में कर सलाहकार के रूप में कुछ वर्ष कार्य किया।

सन् 1939 में प्रथम बार जब तत्कालीन यूनाईटेड प्रोविन्सस (उत्तर प्रदेश) में कांग्रेस पार्टी की सरकार गठित हुई तो तत्कालीन प्रदेश के प्रधानमंत्री पंडित गोविन्द वल्लभ पंत ने प्रदेश में व्यवसाय कर लागू करने की योजना बनाई जिसके नियम और कानून बनाने के लिए पंडित हरिहर नाथ मुट्टू को परामर्श हेतु आमंत्रित किया गया पर एका एक द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ जाने के कारण यह अन्तरिम सरकार अंग्रेज़ों द्वारा भंग कर दी गयी और पंडित गोविन्द वल्लभ पंत की योजना एक साकार रूप नहीं ले सकी।

सन् 1941 में आप पुनः कानपुर वापस आ गये जहां न्यू विक्टोरिया मिल्स के मालिकों ने आपको अपना कर सलाहकार नियुक्त कर दिया। आप इस पद पर सन् 1955 तक कार्यरत रहे। आप चूंकि एक धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे और नित्य पूजा–अर्चना में विश्वास रखते थे इस नाते आपने अपने निवास के लिये पवित्र गंगा नदी के तट पर एक मकान लिया। जिसमें आप अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक निवास करते रहे। आपका उसी आवास में 13 जनवरी सन् 1957 को लगभग 85 वर्ष की आयु में निधन हो गया।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू अपनी पूज्यनीय माता जी श्रीमती मैना रानी (राधिका रानी) मुट्टू का अपने बचपन से ही बड़ा आदर और सम्मान करते थे। आप अपने सेवा काल में जब भी अन्य नगरों को प्रस्थान करते तो वहां से नित्य अपनी माता जी को अपने कुशल–क्षेम का पत्र अवश्य लिखते थे।

लखनऊ नगर चूंकि उस समय उर्दू अदब और शेर–शायरी का एक प्रमुख केन्द्र हुआ करता था। अतः आपका उर्दू की शेर–शायरी के प्रति आकर्षण बिलकुल स्वाभाविक था। आप काफ़ी कम आयु से शेर कलम बन्द करने लगे थे। आप अपने द्वारा कहे गये शेर "आसी" उपनाम या तख़ल्लुस से कलमबन्द करते थे आपकी भाषा और अपने भावों को प्रकट करने के लिए प्रयोग की गयी शैली का अनुमान बहुत ही सहज रूप से उनके द्वारा कलम बन्द की गयी ग़ज़ल के निम्नलिखित शेर से लगाया जा सकता है। जिसमें शायर अपनी महबूबा की ओर मुखातिब होते हुए कुछ इस प्रकार अपनी भावनाओं को प्रकट करता है।

"जब यार न हो पास, तो अपना सलाम है।
मैय को गुलों को बाग़ को अब्रे बहार को"

मुख्य रूप से उसी शायरी को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। जिसकी भाषा प्रवाहमय हो और जो व्यक्ति के ह्रदय पर एक गहरा प्रभाव डाले। भाषा का अंलकरण और शायरी का शिल्प भी अपना एक अलग महत्व रखते हैं पर जो शायर अपनी भावनाओं को बहुत ही सहज रूप से सरल भाषा में प्रकट करता है वह जनमानस में बहुत शीघ्र लोकप्रिय हो जाता है क्योंकि उसके कलाम को समझने के लिये बहुत अधिक मानसिक कसरत करने की आवश्यकता नहीं होती। राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू भी कुछ इसी विचारधारा के शायर थे। अतः आप अपनी शायरी में बहुत अधिक विशुद्ध और परिमार्जित भाषा का प्रयोग नहीं करते थे। जिसमें फारसी भाषा के शब्दों की भरमार हो उदाहरण के लिये आपके

द्वारा रचित निम्नलिखित पंक्तियां प्रस्तुत हैं।

रोका जिगर पे जब से है चित्तों के वार को
आता नहीं क़रार दिले बेक़रार को।।
मैं जानता हुँ आपके कौल व करार को
समझाऊँ किस तरह दिले उम्मीदवार को।।
देखा जमाल यार जिधर को उठी निगाह
क्यों कीजिए तलाश अब साये यार को।।
जोशे जुनूं में हमको तो सेहरा हुआ नसीब
गुलशन पसन्द आया है उस गुलेज़ार को।।

आपने अपनी शायरी में कभी कोई बहुत बड़ी फलसफ़ाना बात नहीं कही पर आपने हर शेर में अपने हृदय के भावों को एक सहज रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा की ताकि पाठक वर्ग बिना किसी कठिनाई के उनका पूर्ण आनन्द ले सके और उसे शेर का भावार्थ समझने के लिये अधिक मानसिक कसरत करने की आवश्यकता न पड़े। आप फ़रमाते हैं –

हमको सूरत न दिखाते लेकिन,
ग़ैर से भी न दर परदाह ईशारे होते।
ज़बां इतना तो असर तूने दिखाया होता,
हम तो उनके मगर वह भी हमारे होते।।

मुझे अपने बचपन में आपसे व्यक्तिगत रूप से मिलने का सौभाग्य एक या दो बार अपने कानपुर के सिविल लाईन्स मुहल्ले में स्थित ननिहाल के आवास हिदायत मंज़िल में हुआ जहां आप कभी कभी मेरे नाना पंडित रामेश्वर नाथ दर के साथ वार्तालाप करने के उद्देश्य से सांयकाल पधारते थे और विभिन्न विषयों पर उनके साथ घण्टों चर्चा करते थे। आप बड़े ही व्यवहार कुशल और आकर्षक व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे तथा बहुत ही ग़म्भीरता के साथ अपना पक्ष प्रस्तुत करते थे।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू का विवाह सन् 1890 के आस पास पंडित बंसीधर नेहरू की सुपुत्री खिमावती के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके तीन पुत्र क्रमशः बृज मोहन, रामेश्वर नाथ तथा लक्ष्मण और छः पुत्रियां क्रमशः कुंवर किशोरी, रूप किशोरी (चुन्नी), स्वरूप किशोरी (निक्की), कमला शान्ता और दुर्गा थीं। इनमें कुंवर किशोरी का विवाह पंडित इन्द्र कृष्ण वली के साथ, रूप किशोरी

का विवाह लखनऊ निवासी पंडित बृज मोहन नाथ चक के साथ, स्वरूप किशोरी का विवाह लखनऊ निवासी पंडित जगत नारायण बहादुर के साथ, शान्ता का विवाह वाराणसी निवासी पंडित कुंवर कृष्ण शिवपुरी के साथ तथा दुर्गा का विवाह चन्डीगढ़ निवासी पंडित चन्द्र मोहन नाथ कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। कमला का विवाह पंडित आनन्द नारायण शिवपुरी के साथ सम्पन्न होना निश्चित हुआ था परन्तु शादीखाने में मेंहदी की रस्म के पश्चात उसकी अकस्मात मृत्यु हो जाने के कारण वह सम्भव न हो सका।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू के सबसे बड़े पुत्र पंडित बृज मोहन नाथ मुट्टू की लगभग 4 वर्ष की आयु में चेचक निकल आने के कारण मृत्यु हो गयी थी।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू के दूसरे पुत्र पंडित रामेश्वर नाथ मुट्टू हैं आप बोर्ड ऑफ डायरेक्ट टैक्सेस के चेयरमैन के पद से सेवा निवृत्त हुये हैं। आपका विवाह लखनऊ निवासी पंडित इन्द्र कृष्ण गंजूर की सुपुत्री सावित्री के साथ सम्पन्न हुआ था। आप आजकल लखनऊ में लालबाग़ मोहल्ले में अपनी ऐतिहासिक हवेली में रहते हैं।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू के तीसरे और सबसे छोटे पुत्र पंडित लक्ष्मण मुट्टू आजकल सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात पंजाब प्रान्त के भटिंडा नगर में रहते हैं। आपका विवाह ग्वालियर रियासत के निवासी पंडित गोविन्द नारायण हाक्सर की सुपुत्री सुश्री स्वरूप हाक्सर के साथ सम्पन्न हुआ था।

राय बहादुर पंडित हरिहर नाथ मुट्टू एक आदर्श पुरूष और स्वाभिमानी व्यक्ति थे। आपने सदा सादा जीवन और उच्च विचार के मूल मंत्र में विश्वास किया तथा सदैव अपने जीवन में मानवीय मूल्यों को आत्मसात करने का प्रयास किया। आपने अपनी सामर्थ के अनुसार बिरादरी के सदस्यों की सदैव सहायता की तथा इस बात का विशेष ध्यान दिया कि आपके आचरण से कभी किसी को कोई ठेस न लगे। आपका अपने धर्म के प्रति अटूट विश्वास था। इस नाते आप सत्य के पुजारी थे और मायावी छल कपट और तिकड़म बाज़ी से अपने को दूर रखते थे। यद्यपि आपके जीवन के उत्तरार्ध में व्यापक समाज में नैतिक मूल्यों का पतन प्रारम्भ हो गया था। आप अपनी ईमानदारी और व्यवहार क़ुशलता के लिये पूरे समाज में प्रसिद्ध थे। आपने कभी अपने पुत्रों और पुत्रियों में कोई अन्तर नहीं किया। आपके घर में जब कोई कन्या जन्म लेती थी तो आप प्रसन्न होकर कहते

थे कि कन्या के रूप में मां भगवती पधारी हैं। आपको असत्य का सहारा लेने तथा घूस लेने से बहुत अधिक घृणा थी। आप कभी भी अपनी आत्मा के विपरीत कोई कार्य नहीं करते थे चाहे आप पर कितना भी अधिक दबाव क्यों न डाला जाये। आपने सदैव अपने जीवन में उन सिद्धांतों और मूल्यों को वरीयता दी जो एक व्यक्ति को सारे समाज में आदर और सम्मान का पात्र बनाते हैं तथा अपने कार्यों के लिये सदैव समाज द्वारा स्मरण किये जाते हैं। ऐसी ही महान विभूतियों के लिये किसी कवि ने निम्नलिखित भावपूर्ण पंक्तियां रची हैं।

"कोई चलता पग चिन्हों पर
कोई पग चिन्ह बनाता है
पग चिन्ह बनाने वाला ही
युग–युग तक आदर पाता है।"



अभिनेता प्रेम अदीब



भारतवर्ष में फ़िल्मों का निर्माण किस प्रकार प्रारम्भ हुआ यह एक बहुत ही रोचक कहानी है। सर्व प्रथम फ्रांस के पेरिस नगर में वहां के प्रसिद्ध छायाकार ल्यूमियेग़ बन्धुओं ने सन् 1894 में एक नयी तकनीक विकसित कर चलती फिरती तसवीरों का प्रदर्शन किया जिसने सब को आश्चर्यचकित कर दिया। लगभग 2 वर्ष बाद वह अपनी इस नयी तकनीक का प्रदर्शन करने के लिए फ्रांस से भारत आये और 7 जुलाई 1896 को उन्होंने बम्बई (मुम्बई) के वाटसन होटल में नगर के कुछ गणमान्य व्यक्तियों के सम्मुख अपनी इन चलती फिरती तस्वीरों का प्रदर्शन किया जिसे देख कर सब अचम्भे में पड़ गये कि तस्वीरें भी सजीव हो सकती हैं।

इस नयी तकनीक से प्रभावित और प्रेरित होकर प्रो0 स्टीवेनसन ने सन् 1898 में कलकत्ते (कोलकाता) के स्टार थियेटर में पहली मूक फिल्म "Panorama of Calcutta" प्रदर्शित की। तद् पश्चात सन् 1899 में सावे दादा ने दो नयी मूक फिल्मों "The Wrestler" और "The Man and the Monkey" का प्रदर्शन किया।

धुन्दिराज गोविन्द फालके जिनका जन्म सन् 1869 में नासिक में हुआ था पहले भारतीय थे जिन्होंने पूर्ण रुप से प्रथम स्वदेशी फ़ीचर फ़िल्म राजा हरिश्चन्द्र का निर्माण किया जिसको सर्व प्रथम सन् 1913 में बम्बई (मुम्बई) के कौरोनेशन थियेटर में प्रदर्शित किया गया। आपने इस फ़िल्म के निर्माण के लिये दादर में अपना स्टूडियो स्थापित किया और उसे आवश्यक उपकरणों से सुसज्जित किया। क्योंकि उस समय तक महिलायें फिल्म में कार्य नहीं करती थीं अतः फिल्म में तारामती का किरदार सुलंके नाम के एक बालक ने निभाया। आप बाद में दादा

साहब फ़ालके के नाम से प्रसिद्ध हुए और आपको भारतीय फ़िल्मों का जनक माना जाता है। दुर्गा बाई गोखले वह पहली महिला कलाकार थीं जिन्होंने मूक फिल्मों में अभिनय करना आरम्भ किया।

सन् 1913 में "राजा हरिश्चन्द्र" के पदर्शन के साथ भारत में मूक फिल्मों का युग प्रारम्भ हुआ पर उसके कुछ वर्षों के पश्चात ही विदेशों में बोलती फ़िल्मों का निर्माण प्रारम्भ हो गया जिससे प्रेरित होकर इम्पीरियल फिल्म कम्पनी के ख़ान बहादुर अर्देशिर ईरानी ने भारत में पहली बोलती फिल्म "आलम आरा" का निर्माण किया। जिसे 14 मार्च सन 1931 को बम्बई (मुम्बई) के मैजिस्टिक थियेटर में प्रदर्शित किया गया। इस फिल्म को देखकर लोग एक दम पागल हो गये और कई सप्ताह तक थियेटर पर अपार जन समूह उमड़ता रहा। इस फ़िल्म की नायिका ज़ुबेदा थीं। इन बोलती फ़िल्मों के निर्माण से मूक फिल्मों के निर्माण को गहरा झटका लगा और सन् 1934 के पश्चात से मूक फिल्मों का निर्माण एक दम बन्द हो गया।

इन बोलती फिल्मों का प्रभाव सबसे अधिक स्वाभाविक रुप से समाज के युवा वर्ग पर पड़ा और अनेक नवयुवक फिल्मों में कार्य करने के स्वप्न देखने लगे। यद्यपि उस समय तक फिल्मों में काम करना कोई बहुत अच्छा कार्य नहीं माना जाता था। युवा प्रेम अदीब के मन में भी एक फिल्मी कलाकार बनने की इच्छा जागृत हुई और वह लगभग 16 वर्ष की आयु में अपने परिजनों की इच्छा के विरुद्ध सन् 1932 में इस चमत्कारित दुनिया में अपने भाग्य की परीक्षा लेने अपने घर से निकल पड़े।

प्रेम अदीब का जन्म 10 अगस्त सन् 1916 को उत्तर प्रदेश के सुलतानपुर जिले में हुआ था जहां आपके पिता पंडित राम प्रसाद अदीब दीवानी के एक जाने माने वकील थे और वहां जी0टी0 रोड पर स्थित रुद्र नगर मुहल्ले में निवास करते थे। आपकी माता जी का नाम कमला था जो जोधपुर रियासत के निवासी पंडित लक्ष्मण प्रसाद राजदान की सुपुत्री थीं।

प्रेम अदीब के पूर्वज पंडित जगन नाथ प्रसाद दर कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के कन्याकदल मुहल्ले में निवास करते थे। ब्रिटिश शासन काल में पंडित जगन नाथ प्रसाद दर के सुपुत्र पंडित देवी प्रसाद दर फ़ैज़ाबाद के तहसीलदार नियुक्त हो गये थे। आप उर्दू के एक प्रख्यात शायर थे और अपने शेर 'अदीब' तखल्लुस से कलम बन्द करते थे। आपके पुत्र पंडित राम प्रसाद अदीब ने अपना

कुलनाम दर के स्थान पर अदीब लिखना अधिक उचित समझा और उनके वंशज बाद में अपना कुलनाम 'अदीब' लिखने लगे। आप फ़ैज़ाबाद से सुलतानपुर आ गये और वहां आपने अपनी वकालत प्रारम्भ कर दी।

पंडित राम प्रसाद अदीब ने तीन विवाह किये थे जिनमें सुश्री कमला राज़दान उनकी तीसरी पत्नी थीं। आपके कुल सात पुत्र क्रमशः श्याम प्रसाद अदीब, कुंवर प्रसाद अदीब, कृष्ण प्रसाद अदीब, विष्णु प्रसाद अदीब, राजेन्द्र प्रसाद अदीब, बृजेन्द्र प्रसाद अदीब, और प्रेम अदीब तथा दो पुत्रियाँ सरस्वती और विद्यावती थीं जिनमें सरस्वती का विवाह एक तिक्कू परिवार में और विद्यावती का विवाह एक गंजू परिवार में हुआ था। प्रेम अदीब की प्रारम्भिक शिक्षा सुलतानपुर में ही सम्पन्न हुई आपने अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा सन् 1932 में अपने ननिहाल जोधपुर रियासत के महाराजा जसवन्त सिंह कालेज से उत्तीर्ण की और अपने परिजनों को बिना कोई सूचना दिये घर से एक फिल्मी कलाकार बनने की इच्छा को लिये हुए निकल पड़े। आपके पिताजी उस समय कश्मीरी पंडितों में प्रचलित परम्परा के अनुसार आपको एक कुशल वकील बनाना चाहते थे पर कदाचित विधाता को कुछ और ही मंजूर था।

भारत में उस समय कलकत्ता, लाहौर और बम्बई फिल्म निर्माण के तीन प्रमुख केन्द्र हुआ करते थे। फिल्मों का निर्माण अधिकतर बड़ी–बड़ी फिल्म कम्पनियों द्वारा किया जाता था जिनके अपने फिल्म निर्माण के लिये भव्य स्टूडियो हुआ करते थे जैसे मिनर्वा, न्यू थियेटर्स, बाम्बे टाकीज़, फिल्मिस्तान इत्यादि। कलाकार अधिकतर इन कम्पनियों द्वारा मासिक वेतन पर नियुक्त किये जाते थे। क्योंकि उस समय तक स्टार प्रथा विकसित नहीं हो पायी थी जिसकी नींव फिल्म जगत में सर्वप्रथम चन्द्रमोहन वातल ने डाली।

प्रेम अदीब अपना घर परित्याग करने के पश्चात सर्व प्रथम कलकत्ते गये और वहां न्यू थियेटर्स के मालिक बी0एन0 सरकार से काम की तलाश में मिले पर आपको कलकत्ते में काफ़ी संघर्ष करने के पश्चात भी कोई सफ़लता हाथ नहीं लगी। आप निराश होकर फिर कलकत्ते से अपना भाग्य परखने के लिये लाहौर चले गये। आप लाहौर में लगभग एक दो वर्ष विभिन्न फिल्म कम्पनियों के काम की तलाश में चक्कर लगाते रहे पर वहां भी आपको कोई विशेष सफ़लता हाथ नहीं लगी। अन्त में आप हताश होकर सन् 1935 के आसपास लाहौर से अपना भाग्य परखने के लिये बम्बई चले गये।

बम्बई में एक दिन आप एक ईरानी होटल में बैठे हुए चाय की चुस्कियां ले रहे थे और अपने भविष्य के बारे मे चिंतन तथा मनन कर रहे थे कि एका एक आपकी वहां रखे हुए एक समाचार पत्र पर दृष्टि पड़ी जिसमें राजपूताना फिल्मस का एक नयी प्रस्तावित फिल्म **रोमान्टिक इण्डिया** के लिए एक नये चेहरे की तलाश का विज्ञापन प्रकाशित था। आपने तुरन्त इस फिल्म कम्पनी से सम्पर्क स्थापित किया और उसके मालिक को उस फिल्म में कार्य करने के लिए अपना प्रार्थना पत्र दिया। प्रारम्भिक साक्षात्कार तथा अन्य औपचारिकतायें पूर्ण करने के पश्चात आपका चयन हो गया और आपकी 100 रुपये माहवार के वेतन पर नियुक्ति हो गयी। आपकी यह प्रथम फिल्म सन् 1936 में प्रदर्शित हुई जिसमें आपके साथी कलाकार थे नूरजहां, जीवन दर तथा राधा रानी। इस फिल्म को मोहन सिन्हा ने निर्देशित किया था। इसी वर्ष आपकी एक अन्य फ़िल्म **प्रतिमा** दरयानी प्रोडक्शन्स के बैनर तले प्रदर्शित हुई जिसमें आपके साथी कलाकार थे इन्दु कुमारी, सरदार अख़तर और वज़ीर। इसका निर्देशन राम दरयानी ने किया था।

प्रेम अदीब सन् 1937 में अपनी फिल्म **ख़ान बहादुर** के प्रदर्शन के पश्चात सिने जगत में अपने प्रभावशाली अभिनय के लिए प्रसिद्ध हुए। यह फिल्म एक स्थापित बैनर मिनर्वा द्वारा बनायी गयी थी। जिसका निर्देशन प्रख्यात अभिनेता और निर्देशक सोहराब मोदी ने किया था। इसमें प्रेम अदीब की नायिका नसीम बानो थीं।

आपने सन् 1938 में सोहराब मोदी और नसीम बानो के साथ मिनर्वा के बैनर तले **डाईवोर्स** और विष्णुकला प्रोडक्शन्स द्वारा निर्मित फ़िल्म **घूंघटवाली** करी जिसमें आपकी नायिका थीं अनसुईया और जिसको के0राठौर ने निर्देशित किया था।

सन् 1939 में प्रेम अदीब की दो फ़िल्में प्रदर्शित की गयीं जिसमें एक थी **साधना** जो सागर फिल्मस द्वारा निर्मित की गयी थी और जिसका निर्देशन वी0सी0देसाई ने किया था। इस फिल्म की नायिका शोभना सामर्थ थी। दूसरी फिल्म थी **भोला भाला** यह भी सागर फिल्मस द्वारा निर्मित की गयी थी पर इसका निर्देशन ज़िया सरहदी ने किया था इस फिल्म की नायिका थी माया बैनर्जी तथा अन्य कलाकार थे जगदीश सेठी और कन्हैया लाल।

प्रेम अदीब की फिल्म **सुभाग्या** सन् 1940 में प्रदर्शित की गयी जिसका

निर्माण हिन्दुस्तान साइन कम्पनी ने किया था। इसका निर्देशन सी0एम0 लुहार ने किया था। इसके मुख्य कलाकार थे शोमना सामर्थ, के0एन0 सिंह तथा गुलाब। प्रेम अदीब सन 1941 में अपनी फिल्म **दर्शन** के प्रदर्शन के पश्चात सिने प्रेमियों में काफी लोकप्रिय हो गये। यह फिल्म सी0एम0 लुहार के निर्देशन में प्रकाश पिक्चर्स द्वारा निर्मित की गयी थी जिसमें मुख्य भूमिका में ज्योति और अमीर बाई करनाटकी थीं। प्रेम अदीब ने इस फिल्म के प्रदर्शन के पश्चात काफी ख्याति अर्जित की और अपने निवास के लिये अंधेरी (पूर्व) में एस0वी0 रोड पर कमल कुंज में एक फ्लैट क्रय किया।

प्रेम अदीब की सन् 1942 में तीन फिल्में प्रदर्शित हुयीं। यह थीं **स्टेशन मास्टर** जिसको प्रकाश पिक्चर्स ने सी0एम0 लुहार के निर्देशन में निर्मित किया था जिसमें रतनमाला, जगदीश सेठी और जीवन मुख्य भूमिका में थे, **चूड़ियां** जिसमें माया बनर्जी और जीवन थे। जिसका निर्देशन के0जी0 परमार ने किया था और प्रकाश पिक्चर्स द्वारा निर्मित **भरत मिलाप** जिसमें मुख्य भूमिका में शोमना सामर्थ और दुर्गा खोटे थीं जिसका निर्देशन विजय भट्ट ने किया था।

सन् 1943 में प्रेम अदीब का विवाह लाहौर निवासी पंडित राजेश्वर नाथ कौल की सुपुत्री किशन के साथ सम्पन्न हुआ। यह विवाह लाहौर के कश्मीरियों के महानायक राजा नरेन्द्र नाथ (रैना छिजबल्ली) के प्रसिद्ध आवास 'Fair Fields' में सम्पन्न हुआ था जो लाहौर के कश्मीरी पंडितों की गतिविधियों का उस समय एक मुख्य केन्द्र हुआ करता था। इसी वर्ष प्रेम अदीब की विवाह के पश्चात प्रख्यात फिल्म **रामराज्य** प्रदर्शित की गयी जिसका निर्माण प्रकाश पिक्चर्स ने किया था और जिसके निर्देशक विजय भट्ट थे। इस फिल्म में प्रेम अदीब के साथ थे। शोमना सामर्थ, उमाकान्त और बद्रीप्रसाद यह फिल्म 100 सप्ताह से अधिक चली और प्रेम अदीब मर्यादा पुरशोत्तम राम के रुप में इतने अधिक देश में लोकप्रिय हुए कि उनका छायाचित्र विज्ञापनों में श्री राम के स्थान पर खुलकर प्रयोग किया जाने लगा।

महात्मा गांधी को फिल्मों से बहुत ही अधिंक खुन्दक थीं। वह फिल्म देखना महा पाप समझते थे क्योंकि भारत में फिल्म निर्माण की तकनीक विदेशों से आयी थी। महात्मा गांधी ने अपने पूरे जीवन कालं में केवल एक फिल्म देखी और वह प्रेम अदीब की फिल्म **राम राज्य** थी।

प्रेम अदीब की तीन फिल्में **चांद**, **पुलिस** और **भाग्यलक्ष्मी** सन् 1944 में

प्रदर्शित की गयीं। **चांद** फिल्म का निर्माण डी0डी0 कश्यप के निर्देशन में प्रभात टाकीज़ द्वारा किया गया था जिसमें बेगम पारा और सप्रू थे, **पुलिस** प्रकाश पिक्चर्स द्वारा शान्ति कुमार के निर्देशन में बनायी गयी थी जिसमें नायिका रतन माला थीं और **भाग्यलक्ष्मी** का निर्माण लक्ष्मीं पिक्चर्स द्वारा डी0 एस0 बदामी के निर्देशन में किया गया था जिसमें मुख्य भूमिका में शान्ता आप्टे और आग़ा थे।

प्रेम अदीब की फिल्म **विक्रमादित्य** सन् 1945 में प्रदर्शित की गयी। यह फिल्म विजय भट्ट के निर्देशन में प्रकाश पिक्चर्स द्वारा निर्माण की गयी थी। इस फिल्म में प्रेम अदीब ने कालिदास के पात्र का जीवन्त अभिनय किया था। और पूरी फिल्म में अन्य कलाकारों पर भारी पड़े। एक बार इस फिल्म की शूटिंग में प्रेम अदीब के अभिनय को देख कर पृथ्वीराज कपूर जो विक्रमादित्य का किरदार कर रहे थे को अनायास ही विजय भट्ट से पूछना पड़ा कि आप फिल्म विक्रमादित्य बना रहे हैं कि कालीदास क्योंकि वह प्रेम अदीब के रोल को कुछ अधिक ही महत्व दे रहे थे। इसी वर्ष प्रेम अदीब की एक और फिल्म **आम्रपालीं** प्रदर्शित की गयी जिसकी नायिका सविता देवी थीं। इसका निर्माण मुरली मूवीज़ द्वारा नन्दलाल जसवन्त लाल के निर्देशन में किया गया था।

सन् 1947 में प्रेम अदीब की पांच फिल्में प्रदर्शित की गयीं। यह थीं **क़सम** जो एम0डी0बेग के निर्देशन में प्रेम पिक्चर्स द्वारा निर्माण की गयी थी। जिसमें नजमा, राज अदीब, कान्ता और शशिकला थे, **कृष्ण सुदामा** जो बजाज के निर्देशन में नैशनल आर्टिस्ट द्वारा निर्माण की गयी थी जिसमें दुलारी और करन दीवान थे **मुलाक़ात** जो ताजमहल पिक्चर्स द्वारा निर्माण की गयी थी तथा जिसका निर्देशन मुन्शी दिल नें किया था जिसमें नसीम बानों, और शाहनवाज़ मुख्य भूमिका में थे, **सती तोरल** जिसका निर्माण लक्ष्मी प्रोडक्शन्स तथा निर्देशन नन्दलाल जसवन्त लाल ने क़िया था और जिसमें शोभना सामर्थ, जीवन और रेहाना साथी कलाकार थे, तथा उसी बैनर तले बनी **वीरांगना** जिसमें शोभना सामर्थ, जीवन और प्रभा मुख्य भूमिका में थे और जिसका निर्देशन नन्दलाल जसवन्त लाल ने किया था।

प्रेम अदीब की तीन फिल्में **ऐक्ट्रेस**, **अनोखी अदा** और **राम बाण** सन् 1948 में प्रदर्शित की गयी थी। फिल्म **ऐक्ट्रेस** का निर्माण फिल्मिस्तान द्वारा किया गया था इसके निर्देशक थे नज़म नक़वी। इसमें रेहाना, मीना और डेविड मुख्य कलाकार थे, **अनोखी अदा** का निर्माण और निर्देशन महबूब ख़ां ने किया

था। इसमें साथी कलाकार थे नसीम बानों और सुरेन्द्र और प्रकाश पिक्चर्स द्वारा विजय भट्ट के निर्देशन में **राम बाण** का निर्माण किया गया था जिसमें शोभना सामर्थ, उमाकान्त और जानकीदास सहकलाकार थे।

सन् 1949 में प्रेम अदीब की तीन फिल्में **भोली, हमारी मंज़िल** और **मां का प्यार** प्रदर्शित हुई थीं। **भोली** मुरली मूवीज़ द्वारा राम दरयानी के निर्देशन में निर्माण की गयी थी। जिसमें गीताबाली, शशीकला, गोप, नवाब और जीवन थे, **हमारी मंजिल** फ़ेमस पिक्चर्स के बैनर तले बनायी गयी थी जिसके निर्देशक ओ0पी0दत्ता थे। इसमें निरुपा राय, यशोधरा काटजू और गोप थे और कृष्णा मूवीज़ द्वारा **मां का प्यार** का निर्माण किया गया था जिसका निर्देशन राम दरयानी नें किया था इसमें सह कलाकार थे सुलोचना चटर्जी, रंजीत कुमार, मनोरमा औंर गोप।

प्रेम अदीब की सन 1950 में कृष्णा मूवीज़ द्वारा राम दरयानी के निर्देशन में बनी फिल्म **भाई बहन** प्रदर्शित की गयी जिसमें गीताबाली, निरुपा राय, भारत भूषण, गोप और यशोधरा काटजू थे तथा **प्रीत का गीत** प्रदर्शित हुई जो कलाकार द्वारा गिरीश त्रिवेदी के निर्देशन में निर्माण की गयी थी जिसमें सुलोचना, गुलाब, शशीकला और कुक्कू सह कलाकार थे। यह फिल्में सिने प्रेमियों में काफ़ी लोकप्रिय हुई।

प्रेम अदीब की चार फिल्में **भोला शंकर** जिसका निर्माण प्रकाश पिक्चर्स द्वारा विश्राम के निर्देशन में किया गया था जिसमें विजयलक्ष्मी, महिपाल और साधना बोस थे, **लव–कुश** जिसका निर्माण भानू पिक्चर्स द्वारा नाना भाई भट्ट के निर्देशन में किया गया था जिसमें निरुपा राय और अमीरबाई करनाटकी थे, **मलहार** जिसका निर्माण डॉर्लिंग फिल्मस द्वारा हरीश के निर्देशन में किया गया था जिंसमें शम्मी और मोती सागर थे तथा **राम जन्म** जिसका निर्माण मोशन पिक्चर्स द्वारा नाना भाई भट्ट के निर्देशन में किया गया था और जिसमें निरुपा राय, शोभना सामर्थ और त्रिलोक कपूर मुख्य भूमिका में थे प्रदर्शित की गयी थीं। यह सब फिल्में सिने प्रेमियों द्वारा काफ़ी सराही गयी थीं।

सन् 1952 में प्रेम अदीब की फिल्में **इन्द्रासन** जिसका निर्माण ग्रीन लैण्ड पिक्चर्स द्वारा राजा नेने के निर्देशन में किया गया था जिसमें रंजना, दुर्गा खोटे तथा पारो थी **मोरध्वज** जिसका निर्माण नव आनन्द चित्र द्वारा बलवन्त भट्ट के निर्देशन में किया गया था जिसमें दुर्गा खोटे, तिवारी और शशि कपूर थे तथा

राजा हरिश्चन्द्र जिसका निर्माण त्रिवेदी प्रोडक्शन्स द्वारा रमन0वी0देसाई के निर्देशन में किया गया था जिसमें सुमित्रा, ललिता पवार, गोप और तिवारी थे प्रदर्शित हुई थीं।

प्रेम अदीब की सन् 1954 में जो फिल्में प्रदर्शित हुई वह थीं **हनुमान जन्म** जिसका निर्माण रवि प्रोडक्शन्स ने राजा नेने के निर्देशन में किया था। इसमें रंजना, पारो और आग़ा थे, **महाप्रजा** जिसका निर्माण अमर ज्योति पिक्चर्स द्वारा शान्ति कुमार के निर्देशन में किया गया था जिसमें रतनमाला और शशी कपूर थे, **रामायण** जिसका निर्माण प्रकाश पिक्चर्स द्वारा विजय भट्ट के निर्देशन में किया गया था इसमें शोभना सामर्थ और साहू मोदक थे तथा **शहीदे आज़म भगत सिंह** जिसका निर्माण पूनम प्रोडक्शन्स द्वारा जगदीश गौतम के निर्देशन में किया गया था।

प्रेम अदीब ने **शहीदे आज़म भगत सिंह** में भगत सिंह की मुख्य भूमिका में बहुत ही प्रभाव शाली अभिनय किया था जिसकी बहुत अधिक प्रशंसा हुई थी। एक बार इस फिल्म की शूटिंग के समय आपको एक दृश्य में आग के ऊपर अपना हाथ रख कर शपथ लेनी थी। आप इस दृश्य में वास्तविकता लाने के लिए भगत सिंह के चरित्र में इतनी गहरायी में उतर गये कि आपने अपना हाथ ही जला लिया उस दृश्य को करने के पश्चात पूरी यूनिट ने आपकी अभिनय करने की क्षमता का लोहा मान लिया और निर्देशक ने आत्म विभोर होकर आपको अपने गले लगा लिया।

प्रेम अदीब की चार फिल्में **भगवत महिमा** जिसका निर्माण फिल्मिस्तान द्वारा वी0पंचोटिया के निर्देशन में किया गया था जिसमे कृष्णा कुमारी, सुन्दर, मदन पुरी थे। **गंगा मैय्या** जिसका निर्माण कला केन्द्र ने चन्द्र कान्त के निर्देशन में किया था जिसमें सुमित्रा, जीवन और आशा माथुर थे, **प्रभू की माया** जिसका निर्माण फिल्मिस्तान द्वारा वी0पंचोटिया के निर्देशन में किया गया था जिसमें मुबारक, कान्ता और उमादेवी थे तथा **कृष्ण विवाह** जिसका निर्माण चित्र वीना द्वारा जसवन्त झावेरी के निर्देशन में किया गया था जिसमें निरुपा राय, दुर्गा खोटे और जीवन थे सन् 1955 में प्रदर्शित की गयी थी।

सन् 1956 में प्रेम अदीब की दो फिल्में प्रदर्शित हुई वह थीं **देहली दरबार** जिसका निर्माण गांधी और चोस्की द्वारा चन्द्रकान्त के निर्देशन में किया गया था जिसमें सुमित्रा देवी, रेहाना, उल्लाहस, वीना और हेलेन थे तथा **राम नवमी**

जिसका निर्माण सुभाग प्रोडक्शन्स द्वारा रमन वी0 देसाई के निर्देशन में किया गया था जिसमें रत्नमाला, निरुपा राय और तिवारी मुख्य भूमिका में थे।

सन् 1957 में प्रेम अदीब की छः फिल्में प्रदर्शित की गयीं वह थीं **आधी रोटी** जिसका निर्माण गांधी और चोस्की ने चन्द्रकान्त के निर्देशन में किया था जिसमें सुलोचना, रुप कुमार, उल्लाहस और भगवान थे, **चांदी पूजा** जिसका निर्माण मन मोहन देसाई ने रमन बी0 देसाई के निर्देशन में किया था जिसमें शान्ता आप्टे, मनोहर देसाई और सप्रू मुख्य भूमिका में थे, **कृष्ण सुदामा** जिसका निर्माण तस्वीरिस्तान ने शान्ति कुमार के निर्देशन में किया था इसमें मुख्य अन्य कलाकार थे निरुपा राय, बलराज साहिनी और राजकुमार, **नीलमणि** जिसका निर्माण गीता प्रोडक्शन्स द्वारा कुन्दन कुमार के निर्देशन में किया गया था जिसमें नलनी जयवंत, राज कुमार, ललिता पवार और एस0एन त्रिपाठी थे, **पाकदामन** जिसका निर्माण वाडिया ब्रदर्स द्वारा सुभाष मुखर्जी के निर्देशन में किया गया था जिसमें चित्रा, सुदेश कुमार और मोती सागर थे तथा **राम हनुमान युद्ध** जिसका निर्माण रविकला चित्र द्वारा एस0एन0त्रिपाठी के निर्देशन में किया गया था जिसमें साथ में थे निरुपा राय और मनोहर देसाई।

प्रेम अदीब की तीन फिल्में सन् 1958 में प्रदर्शित हुईं। वह थीं **गोपी चन्द** जिसका निर्माण वसुन्धरा चित्र के बैनर तले ईश्वरी लाल के निर्देशन में किया गया था। जिसमें नायिका श्यामा थीं तथा साथ में थे साहू मोदक और दुर्गा खोटे, **राम भक्त विभीषण** जिसका निर्माण रजनी चित्र ने समर चैटर्जी के निर्देशन में किया था जिसमें शान्ता आप्टे, निरुपा राय और साहू मोदक थे तथा **तीसरी गली** जिसका निर्माण आदर्श लोक ने कुन्दन कुमार के निर्देशन में किया और जिसमे श्यामा, अभी भट्टाचार्या तथा गोप अन्य कलाकार थे।

प्रेम अदीब की फिल्म **सम्राट पृथ्वीराज चौहान** सन 1959 में प्रदर्शित हुई। यह फिल्म दिनेश फिल्मस द्वारा हर सुख भट्ट के निर्देशन में निर्माण की गयी थी। इसमें अनिता गुहा, जयराज, उल्लाहस और सप्रू अन्य कलाकार थे। यह प्रेम अदीब के जीवन की अन्तिम फिल्म थी।

25 दिसम्बर सन् 1959 को प्रेम अदीब के साढू भाई पंडित इक़्बाल नाथ मुट्टू ने वरली के फ़ेस सी में अपने आवास पर एक भव्य पार्टी का आयोजन किया जिसमें भाग लेने के लिए प्रेम अदीब अपनी पत्नी श्रीमती किशन अदीब के साथ गये। वहां अकस्मात मस्तिष्क की एक कोशिका के फट जाने के कारण आपका

निधन हो गया आपकी दो फिल्में **अंगुलीमाल** जिसका निर्माण थाई इन्फ़ोरमेशन सेन्टर ने विजय भट्ट के निर्देशन में किया था जिसमें निम्मी, भारत भूषण, अचला सहदेव, अनीता गुहा और हेलेन अन्य कलाकार थे तथा **भक्तराज** जिसका निर्माण श्री नित्यानन्द चित्र द्वारा बी0एम0व्यास के निर्देशन में किया गया था जिसमें सुलोचना, ललिता पवार, डेविड और दारा सिंह मुख्य भूमिका में थे आपकी मृत्यु के पश्चात सन् 1960 में प्रदर्शित हुई थी।

यद्यपि प्रेम अदीब ने अपने जीवन काल में सभी प्रकार की फिल्मों में जमकर अभिनय किया और अपनी अमिट छाप छोड़ी जिसमें सामाजिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, पौराणिक तथा संवेदन शील फिल्में शामिल थीं पर आप धार्मिक फिल्मों में अधिक प्रसिद्ध हुए और उनके नायक माने जाते रहे। इसका एक मुख्य कारण आपका आकर्षक और सौम्य व्यक्तित्व था जो देवताओं के समान लगता था और इस लिये आपको देवताओं की भूमिका में अधिक अनुबन्धित किया जाता था। आपने अपने जीवन काल में लगभग 60 फिल्मों में अभिनय किया और उस समय की लगभग सभी प्रमुख सिने अभिनेत्रियों के साथ कार्य किया आपके साथ जिन नायिकाओं ने मुख्य रुप से कार्य किया वह थीं नसीम बानों, शोभना सामर्थ, निरुपा राय, शान्ता आप्टे, रत्नमाला, और दुर्गा खोटे। आपके प्रिय निर्देशक थे विजय भट्ट, सी0एम0लुहार, राम दरयानी, सोहराब मोदी और नन्दलाल जसवंत लाल।

आपके अभिनय के प्रारम्भिक दौर में फिल्मों में पार्श्व गायन का चलन विकसित नहीं हुआ था। उस समय फिल्म के नायक को अपना गीत स्वंय गाना पड़ता था अतः फिल्मों में वह कलाकार नायक की भूमिका निभाते थे जो एक अच्छे गायक भी होते थे। प्रेम अदीब एक अच्छे गायक भी थे और आपको गीतों को गाने में विशेष रूचि थी। आपने कुछ फिल्मों मे अपने गीत स्वय गाये थे।

प्रेम अदीब के भारत में फिल्म निर्माण के प्रारम्भिक वर्षों में किये गये विशेष योगदान के लिये मुम्बई की सिने एव टेलीवीज़न आर्टिस्ट एसोसिएशन (CINTAA) ने जुहू में स्थित हौलिडे इन में 2 अक्टूबर सन् 2000 को एक भव्य समारोह अयोजित किया जिसमें फिल्म जगत से जुड़ी हुई अनेक दिग्गज हस्तियों ने भाग लिया इस समारोह में प्रेम अदीब को मरणोपरांत उनकी पत्नी को एक स्मृति का तथा एक प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया गया प्रेम अदीब की कोई अपनी सन्तान नहीं है। आज कल उनकी पत्नी श्रीमती किशन अदीब जिनकी इस समय

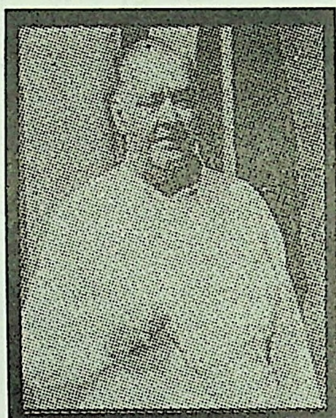
आयु लगभग 80 वर्ष है अंधेरी पूर्व क्षेत्र में एस0वी0रोड पर कमल कुंज में फलैट न01 और 2 में निवास करती हैं। एक उर्दू के प्रख्यात शायर ने आज की युवा पीढ़ी को अपने शब्दों में कुछ इस प्रकार संदेश दिया है।

"आज के दौर में चलती नहीं है ज़िन्दिगी सपनों से
जलते हुए शोलों पर जो चलता है जी लेता है।"

□□□

हिन्दी रंगमंच के प्रथम कश्मीरी निष्ठावान रंगकर्मी

पंडित अवतार कृष्ण गंजूर



भारतवर्ष में रंगमंच की परम्परा आदिकाल से चली आ रही है। वेदों में विभिन्न उत्सवों तथा पर्वो पर सगीत तथा नृत्य का उल्लेख मिलता है। इन संगीत बद्ध नृत्यों में संवादों का भी यदा कदा सम्प्रेक्षण होता था। जो एक प्रकार से नाटक का ही एक स्वरूप था। सर्व प्रथम भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र नाम के ग्रन्थ की रचना कर रंगमंच के विभिन्न आयामों का विधिवत गूढ़ विश्लेषण किया और रंगमंच को उचित प्रकार से परिभाषित किया पर चूंकि उस समय संस्कृत मुख्य भाषा हुआ करती थी। अतः सर्वप्रथम संस्कृत नाटकों का मंचन प्रारम्भ हुआ।

लखनऊ में नवाब वाजिद अली शाह के शासन काल में सर्व प्रथम कैसरबाग़ की सफ़ेद बारादरी में अमानत लखनवी द्वारा रचित इन्दर सभा का मंचन सन् 1848 में हुआ जिससे नगर में रंगमंच की परम्परा की नींव पड़ी और उसके पश्चात पारसी थियेटर कम्पनियों द्वारा नियमित रूप से गोलागंज में एक खुले मैदान में मंच बना कर नाटक मंचित किये जाने लगे और इस प्रकार नाटकों में पारसी शैली विकसित हुई क्योंकि यह नाटक भव्य मंच का निर्माण कर मंचित किये जाते थे और इनमें पात्र अपने संवाद एक विशेष लय के साथ ऊंचे स्वर में बोलते थे। इन नाटकों में विभिन्न दृश्य परदों के माध्यम से दर्शाये किये जाते थे।

आधुनिक हिन्दी रंगमंच के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को माना जाता है जिन्होंने प्रथम बार भारतीय, पाश्चात्य, शास्त्रीय, लोक, पारसी और बाग्ला रंगमंच की तत्कालीन विभिन्न धाराओं से एक ऐसे रंगमंच की कल्पना की जो वास्तव में प्रवाहमय और आज के संदर्भ में सबसे अधिक उपयोगी, उपयुक्त और

तर्कसंगत सिद्ध हुआ है। आपने एक प्रयोगधर्मी के रूप में सिद्धांत शास्त्र की रचना से हट कर एक व्यवहारिक रंगमंच को जन्म दिया जो जनमानस में नाटक की आत्मा का बिना किसी आडम्बर के सही सम्प्रेक्षण कर सके और दर्शकों को प्रभावित करें। आपको रंगमंच की शास्त्रीय व्याकरण में कमी भी बहुत अधिक विश्वास नहीं रहा और आपने नाटक को लोकप्रिय बनाने पर अधिक महत्व दिया जो समाज में व्याप्त कुरीतियों की ओर जनमानस का ध्यान आकर्षित कर सके और उन्हें एक स्वस्थ मनोरंजन के साथ साथ संदेश देने में भी सफ़त हो।

हिन्दी का पहला मचित नाटक पडित शीतला प्रसाद त्रिपाठी द्वारा रचित "जानकी मंगल" को माना जाता है। जिसका मंचन सर्वप्रथम 3 अप्रैल सन् 1868 को बनारस (वाराणसी) के रायल थियेटर में किया गया था और तब से 3 अप्रैल को हिन्दी रंगमंच दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस नाटक में लक्ष्मण की भूमिका स्वयं भारतेन्दु ने अभिनीत की थी। इसी कारण 3 अप्रैल को हिन्दी रंगमंच दिवस के रूप में मनाया जाने लगा।

अवध में सन् 1856 में नवाबी शासन का अन्त हो गया। सन् 1857 की क्रान्ति की विफलता के पश्चात 1 जनवरी सन् 1858 से पूरे भारत का शासन तंत्र ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ से ब्रिटेन की पार्लियामेन्ट ने अपने हाथ में ले लिया और माहारानी विक्टोरिया भारत की साम्राज्ञी घोषित की गयीं। देश भक्ति और देश प्रेम की भावना से ओत प्रोत व्यक्तियों ने तब अपनी राष्ट्रीय भावनाओं को प्रकट करने के लिये रंगमंच को माध्यम बनाया ऐसे नाटकों का मंचन किया जाने लगा जो जनमानस में राष्ट्रीय चेतना को जागृत कर अंग्रेज़ों के विरूद्ध उचित वातावरण का निर्माण करें। नाटकों के कथानक मुख्य रूप से इसी उद्देश्य को लेकर लिखें जाने लगे और उनके मंचनों द्वारा देश भक्ति की भावना को एक जन आन्दोलन का रूप देने का प्रयास किया जाने लगा। अंग्रेज़ अधिकारी इस प्रकार के नाटकों के मंचन से काफ़ी विचलित हुए और उन पर अंकुश लगाने के लिये प्रदेश में सन् 1887 में ड्रामा ऐक्ट सर्वप्रथम लागू किया गया। जिसमें नाटक के मंचन से पूर्व उसकी स्क्रिप्ट को ज़िला मजिस्ट्रेट द्वारा अनुमोदित कराने का प्राविधान था ताकि कोई आपत्तिजनक नाटक का मचन सम्भव न हो पाये। जिसमें अंग्रेज़ों के विरूद्ध किसी प्रकार की टीका टिप्पणी की गयी हो। इसका एक परिणाम यह हुआ कि सामाजिक व्यवस्था पर कटाक्ष करने वाले नाटकों पर एक प्रकार से प्रतिबन्ध लग गया और केवल पौराणिक या धार्मिक कथाओं पर

आधारित नाटकों का मंचन होने लगा।

ब्रिटिश शासन काल में लोक रंगमंच की परम्परा अबोध गति से चलती रही जिसमें राम लीला तथा अन्य धार्मिक पर्वों पर नौटंकी इत्यादि का मंचन नियमित रूप से मनोरंजन के लिये आयोजित किया जाता था। पंडित अवतार कृष्ण गंजूर अपने बाल्यकाल से ही इन प्रदर्शनों को बड़े उत्साह के साथ देखते थे और उनसे प्रभावित तथा प्रेरित होकर रंगमंच के प्रति आकर्षित हुए यद्यपि उस समय सम्भ्रान्त परिवारों में इस प्रकार के कार्यक्रमों में भाग लेना बहुत अधिक अच्छा नहीं माना जाता था।

पंडित अवतार कृष्ण गंजूर का जन्म उत्तर प्रदेश के फैज़ाबाद जनपद में सन् 1901 के नवम्बर माह में हुआ था। आपके पूर्वज पंडित लम्बोदर गंजूर मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी थे। पंडित लम्बोदर गंजूर के दो पुत्र थे हरि कृष्ण और दया निधान। पंडित हरि कृष्ण गंजूर फैजाबाद में सब जज हो गये थे। आपके तीन पुत्र क्रमशः सूरज कृष्ण, तेज कृष्ण और दया कृष्ण थे।

पंडित दया कृष्ण गंजूर ने महात्मा गांधी से प्रभावित होकर कांग्रेस पार्टी की सदस्यता ग्रहण कर ली थी और कांग्रेस पार्टी की गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे थे। आप चन्द्रभान गुप्त के निकट सहयोगियों में से एक थे और अंग्रेज़ों के कट्टर विरोधी थे। आपके तीन पुत्र क्रमशः अवतार कृष्ण, प्रद्युमन कृष्ण और बृज कृष्ण तथा दो पुत्रियां बिशन और किशन थीं जिनमें बिशन का विवाह पंडित श्याम नारायण गुर्टू के साथ तथा किशन का विवाह लखनऊ निवासी पंडित बृज बिहारी लाल कौल शर्गा के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित अवतार कृष्ण गंजूर की प्रारम्भिक शिक्षा फ़ैजाबाद में ही सम्पन्न हुई। आपने फिर अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा सन् 1917 में बनारस (वाराणसी) से उत्तीर्ण की। आपने फिर इलाहाबाद के म्योर सेन्ट्रल कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1919 में अपनी एफ0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। उच्च शिक्षा के लिये आपने लखनऊ के कैनिंग कालेज में सन् 1919 में प्रवेश लिया पर सन् 1920 में कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन के पश्चात महात्मा गांधी ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध अवज्ञा आन्दोलन की घोषणा कर दी और आपके पिता ने एक क्रान्तिकारी होने के नाते आपकी पढ़ाई छुड़ा दी जिसके कारण आप बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण नहीं कर सके।

आपने अपनी बाल्यावस्था में ही फैजाबाद में राम लीला में अभिनय करना प्रारम्भ कर दिया था। जिससे धीरे–धीरे आपका रंगमंच के प्रति प्रेम बढ़ता गया और आप एक सक्रिय रंगकर्मी बन गये। आप कांग्रेस पार्टी की सन् 1921 में सदस्यता ग्रहण करके उसके एक अनुशासित एवं कमठ कार्यकर्ता बन गये। आपके परिवार के एक बहुत ही घनिष्ठ मित्र श्रीकृष्ण नारायण अग्रवाल जो एक कुशल व्यवसायी और लखनऊ की शाहनजफ़ रोड पर स्थित कृष्णा मोटर्स के पार्टनर थे ने आपको लखनऊ आने का निमंत्रण दिया जिसे आपने सहर्ष स्वीकार कर लिया और आप सन् 1924 में लखनऊ आ गये तथा लाल बाग़ में एक किराये के मकान में जगपाल कृष्ण गंजू लेन में रहने लगे। श्रीकृष्ण नारायण अग्रवाल ने आपको कृष्णा मोटर्स में मैनेजर के पद पर नियुक्त कर दिया।

आपने लखनऊ आने के पश्चात अपनी एक विधिवत रंगमडली गठित की और अपने कार्यालय के समय के पश्चात नियमित रूप से सांयकाल नाटकों का पूर्वाभ्यास करने लगे। चूंकि आप शौक़िया रंगमंच करते थे अतः अधिकतर उस पर व्यय अपनी आय से वहन करते थे। आपके द्वारा अभिनीत तथा निर्देशित नाटकों के मंचन उस समय गोलागंज में रफ़ाऐ आम क्लब के सामने खुले मैदान में होते थे जहां नाटक के मंचन की पूरी व्यवस्था की जाती थी।

आपने धीरे–धीरे नाटक की हर विधा में दक्षता हासिल की। आप मंच सज्जा, रूप सज्जा, मंच निर्माण इत्यादि में भी निपुण थे और एक प्रकार से पूर्ण रूप से नाटक के प्रति एक समर्पित रंगकर्मी थे। उस समय हर वर्ष किंग जार्ज मेडिकल कालेज में वार्षिक उत्सव पूरे एक सप्ताह बड़ी धूम धाम के साथ मनाया जाता था। जिसमें विभिन्न रंगारंग कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता था। उनमें नाटकों का भी मंचन होता था जिनका निर्देशन अधिकतर पंडित अवतार कृष्ण गंजूर करते थे। आपके द्वारा निर्देशित नाटकों की दर्शक भूरि–भूरि प्रशंसा करते थे।

आपका आकर्षक व्यक्तित्व, लम्बा कद, गोरा वर्ण तथा सुडौल गठा हुआ शरीर रंगमंच के लिये बहुत उपयोगी था जो स्वयं दर्शक वर्ग पर एक विशेष प्रभाव डालता था। आपके द्वारा सन् 1934 में अभिनीत नाटक विलवा मंगल रंग प्रेमियों द्वारा बहुत ही सराहा गया।

आपने नाटक जूलियस सीज़र में मुख्य भूमिका बहुत ही प्रभाव शाली ढंग से अभिनीत की जिसके लिये आपने अपने पास से पोशाक बनवाई। जिसमें सोने

के फूल टंके हुए थे। आपने अभिनय तथा निर्देशन के लिए विभिन्न पुरूस्कार तथा पदक भी जीते।

फिल्म जगत के प्रसिद्ध संगीतकार नौशाद अली उस समय लाटूश रोड पर स्थित एक दुकान में हारमोनियम की मरम्मत करते थे। वह नित्य सांयकाल आपके नाटकों के पूर्वाभ्यास को देखने आते थे और आपके नाटकों में संगीत देते थे। लखनऊ आकाशवाणी के एस0एस0एस0 ठाकुर और बाबू राधे बिहारी लाल श्रीवास्तव आपके रंगमंच के क्षेत्र में सहयोगी थे। आप सन् 1947 तक रंगमंच से सक्रिय रूप से जुड़े रहे पर देश के स्वतंत्र होने के पश्चात आपने रंगमंच से एक प्रकार से सन्यास ले लिया और अपना समय अपने परिजनों के साथ व्यतीत करने लगे। आपकी इच्छा एक कुशल वकील बनने की थी जो पूर्ण नही हो सकी।

आपने कृष्णा मोटर कम्पनी में मैनेजर के पद पर लगभग 25 वर्ष कार्य किया। आपने फिर श्री प्रेम टण्डन की प्रीमियर मोटर कम्पनी के जनरल मैनेजर के पद पर कार्य करना प्रारम्भ किया पर श्री प्रेम टण्डन की मृत्यु के पश्चात आपने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। आपका लखनऊ में लगभग 81 वर्ष की आयु में सन् 1982 की जनवरी माह में निधन हो गया।

पंडित अवतार कृष्ण गंजूर का विवाह सन् 1920 के आसपास इन्दौर रियासत के दीवान पंडित प्यारे कृष्ण कौल की सुपुत्री प्रकाश मोहिनी कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र बाल कृष्ण तथा गोपाल कृष्ण ओर दो पुत्रियां कमल और कुसुम हैं। इनमें कमल का विवाह पंडित राजनाथ चक तथा कुसुम का विवाह पंडित श्याम मोहन नेहरू के साथ सम्पन्न हुआ है।

पंडित बाल कृष्ण गंजूर को अपने विद्यार्थी जीवन से ही हास्य प्रधान नाटकों के प्रति एक विशेष आकर्षण था। आपने कई हास्य नाटक लिखे और उनमें अभिनय भी किया जिनमें अफ़ीमचियों का मेनिफेस्टो और त्रुटियां ये दो नाटक बहुत अधिक लोकप्रिय हुए। आपके कई हास्य नाटक लखनऊ आकाशवाणी तथा विविध भारती द्वारा मंचित और प्रसारित किये गये। आपके पांच प्रमुख हास्य नाटकों का संग्रह "मुर्ग की बांग" शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित किया गया। आपको हाकी, फुटबाल तथा वालीबाल मे भी रूचि रही और अपने कालेज की इन खेलों की टीमों के सदस्य रहे। स्थानीय रवीन्द्रालय में मंचित "दिल्ली की आखिरी शमा" नामक नाट्य मुशायरे में आपने यल का अभिनय किया। आपका विवाह बाराबंकी के निवासी पंडित लक्ष्मी नारायण राजदान की पुत्री सुश्री लीला

राजदान के साथ सम्पन्न हुआ है। इस दम्पति की दो पुत्रियां कविता (सोना) और नमिता (मोना) हैं। जिनमें कविता का विवाह मन्दसौर के निवासी पंडित श्याम मोहन नाथ दर के सुपुत्र प्रशान्त दर के साथ सम्पन्न हुआ है।

पंडित गोपाल कृष्ण गंजूर अपने मित्रों तथा परिजनों में बब्बू के नाम से जाने जाते थे। आप भी बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। आपके सम्पर्क में जो भी व्यक्ति आता वह आपके आकर्षक व्यक्तित्व और वाक्य पटुता से बहुत अधिक प्रभावित होता था। आपको अपनी बाल्यवस्था से ही हर व्यक्ति की आवाज़ को नकल करने का शौक था। जिसके कारण आप एक mimicry करने वाले कलाकार बन गये। आपके इस गुण को देखकर आपके पिताजी ने आकाशवाणी में आपको नाटकों में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित किया। आपने आडीशन दिया और आपका आकाशवाणी के नाटकों के लिये चयन हो गया। अंग्रेज़ी के नाटक "ममीज़ फुट" में आप नायक के रूप में चुने गये। इसमें आपने अपनी आवाज़ के जादू का कमाल दिखाया। जब आपने एक 80 वर्ष के व्यक्ति के चरित्र को अपनी आवाज़ बदलने की क्षमता का परिचय देते हुए मंच पर साकार कर दिया जिसके लिये आपकी भूरि भूरि प्रशंसा की गयी। आप अपने समय के लखनऊ आकाशवाणी के एक प्रख्यात नाट्य कलाकार थे।

आप अपने लखनऊ विश्वविद्यालय के छात्र जीवन में हिन्दी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं के नाटकों में खुल कर अभिनय करते थे। आप विश्वविद्यालय के बाक्सिंग कैप्टेन भी रहे तथा टेनिस भी बड़े चाव से खेलते थे। आपको अपने पिता के समान कसरत करने का बहुत शौक़ था। आप शतरंज के एक माहिर खिलाड़ी थे।

आपने लखनऊ के फ्लाईंग क्लब से पायलेट बनने के लिये विधिवत प्रशिक्षण लिया। आपने 2 घण्टे में सीधी उड़ान भरने का रिकार्ड स्थापित किया जो आज भी आपके नाम अंकित है। आपने फिर इलाहाबाद में बमरौली में स्थित सेन्ट्रल ऐविऐशन क्लब से कामर्शियल पायलेट बनने का लाइसेन्स प्राप्त किया और इण्डियन ऐयर लाईन्स के पायलट बने। आप कुछ वर्ष पश्चात मलाया ऐयरलाईन्स के पायलट बन गये। आपको फिर जेट विमान उड़ाने के प्रशिक्षण के लिये अमेरिका के सियाटल नामक स्थान पर भेजा गया। आप अपना छः सप्ताह का प्रशिक्षण समाप्त करने के पश्चात वहां से एक नया जेट विमान उड़ाकर मलाया पहुंचे। आप वहां की राजधानी क्वालालम्पुर से नियमित उड़ाने

भर कर सिंगापुर, जावा और सुमात्रा जाते थे।

आप 4 दिसम्बर, सन् 1977 को क्वालालम्पुर से उड़ान भर कर सिंगापुर जा रहे थे कि बीच आकाश में आपका विमान हाई जैक हो गया। आपकी बहुत शान्त स्वभाव से हाई जैकर्स से बातें हो रही थीं कि वह जहां चाहें वहां विमान को उतार दिया जाये। परन्तु अचानक एक हाई जैकर ने आपके साथी पायलेट पर गोली दाग दी। और तुरन्त पलट कर आप पर गोली दाग दी। विमान एकदम बेकाबू हो गया और थोड़ी देर पश्चात उसमें एक धमाका हुआ और वह एक आग का गोला बन कर सिंगापुर में समुद्र के किनारे दलदल में एक मलबे के रूप में गिर कर धंस गया। लगभग 908 यात्री और विमान चालक दल के सदस्य अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए। किसी के शरीर के कोई अंग का पता नहीं चला। इस प्रकार एक होनहार और प्रतिभाशाली नवयुवक का दुःखद अन्त हो गया। मलेशिया की सरकार ने क्वालालम्पुर में इस घटना की स्मृति में एक स्मारक का निर्माण कराया है जिसमें पंडित गोपाल कृष्ण गंजूर का नाम मुख्य पायलट के रूप में अंकित है। आपने अपने जीवन काल में अनेक मेधावी छात्रों तथा विधवाओं की आर्थिक सहायता की पर कभी किसी से उसकी चर्चा नहीं की। आपके दो विवाह हुए थे। आपकी पहली पत्नी दिल्ली की विदु वातल थीं जिनसे आपके एक पुत्र विनोद गंजूर तथा एक पुत्री मुनमुन हैं। आपकी दूसरी पत्नी दिल्ली की विमान परिचारिका सुनीता चोपड़ा हैं। जिनसे आपके एक पुत्र विवेक गंजूर और एक पुत्री अनीता हैं। आजकल विदु अमेरिका में और श्रीमती सुनीता गंजूर मलेशिया में निवास कर रही हैं।

पंडित अवतार कृष्ण गंजूर एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। आपको कसरत और तैराकी का विशेष शौक़ था। आप मलखम्ब पर कसरत के तरह तरह के करतब करते थे। आप अपनी युवावस्था मे फैजाबाद से अयोध्या तक नित्य सरयू नदी में तैराकी करते हुए अपने अन्य साथियों के साथ जाते थे। आपने अपने जीवन के हर पल का भरपूर आनन्द लिया और व्यापक समाज में नये कीर्तिमान स्थापित किये। आपके जैसा निष्ठावान तथा समर्पित रंगकर्मी यदा कदा ही जन्म लेता है। जिसने लखनऊ नगर के रंगकर्म को ब्रिटिश शासन काल में एक नयी दिशा दी जो वास्तव में स्मरण करने योग्य है। किसी कवि ने ठीक ही लिखा है।

"भीड़ के साथ चल न पायें कभी
शब्द के हाथ छल न पायें कभी
उंगलियां उठ गयीं जिस ओर चले
वक्त के साथ ढल न पायें कभी।"



कश्मीर की प्रथम सन्त कवित्री

लल द्यद–देवी लल्लेश्वरी



कश्मीर घाटी का एक हिन्दू राज्य से एक मुस्लिम राज्य में किस प्रकार परिवर्तन हुआ यह एक बहुत ही रोचक कहानी है। कश्मीर का अन्तिम हिन्दू शासक सुहदेव (1301–1320) बहुत ही निकम्मा, अदूरदर्शी तथा विलासता पूर्ण जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति था। जिसके कारण राज्य के शासन तंत्र पर उसकी कोई कड़ी पकड़ नहीं थी और जिसका पूर्ण लाभ उठाते हुए उसके दरबारी विभिन्न षड़यंत्रों में व्यस्त रहते थे। उसी के शासन काल में सन् 1313 में शाहमीर खुर्रम खानी नामक एक मुस्लिम युवक का कश्मीर घाटी में प्रवेश हुआ जो बहुत ही शीघ्र राजा सुहदेव का विश्वास पात्र बन गया और राजा ने उसको अपने दरबार में नियुक्त कर लिया।

राजा सुहदेव की लचर नीतियों और उसके प्रति जनता के बढ़ते असंतोष का पूर्ण लाभ उठाते हुए सन 1320 में चंगेज़ खां के वंशज अली जुल कदर खां ने कश्मीर पर उत्तर से आक्रमण कर दिया। लगभग उसी समय तिब्बत के एक भूटिया सरदार के पुत्र रिंचेन ने कश्मीर पर पूर्व से आक्रमण कर दिया। राजा सुहदेव इन दोनों आक्रमणों से एकदम बौखला गया क्योंकि वह मानसिक रूप से इस प्रकार की विषम परिस्थिति का डटकर सामना करने के लिये बिलकुल तैयार नहीं था। उसका सेनापति रामचन्द्र युद्ध में मारा गया। राजा सुहदेव ने भयभीत होकर कश्मीर से पलायन कर लद्दाख में शरण ली और रिचेन ने कश्मीर पर विजय प्राप्त करने के पश्चात अपने को कश्मीर का शासक घोषित कर दिया उसने रामचन्द्र की पुत्री कोटा रानी से विवाह कर उसको अपनी पत्नी बना लिया।

लगभग 4 वर्ष कश्मीर पर शासन करने के पश्चात सन् 1324 में रिचेन की

मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्यु के पश्चात राजा सुहदेव के अनुज भ्राता उदयनदेव जो किश्तवाड़ में पलायन कर शरण ले चुका था, पुनः कश्मीर आकर अपने को वहां का शासक घोषित कर दिया और रिचेन की विधवा कोटा रानी से विवाह करके उसे अपनी पत्नी बना लिया।

सन् 1338 में राजा उदयन देव की मृत्यु के पश्चात उसकी पत्नी कोटा रानी ने राज्य की बागडोर सम्भाली पर उसके प्रमुख दरबारी शाहमीर खुर्रमखानी ने एक षडयंत्र द्वारा उसको राजसिंहासन से हटा कर एक किले में नज़रबन्द कर दिया और अपने को कश्मीर का शासक घोषित कर दिया। शाह मीर खुर्रमखानी ने भी कोटा रानी से विवाह करने का प्रस्ताव रखा पर कोटा रानी ने अपनी अस्मत बचाने के उद्देश्य से विष ग्रहण कर आत्म हत्या कर ली। इस प्रकार सन् 1339 में शाहमीर खुर्रमखानी सुलतान शमसुद्दीन शाह नाम से कश्मीर का शासक बना और वहां मुस्लिम शासन काल प्रारम्भ हुआ।

लगभग 3 वर्ष शासन करने के पश्चात सन 1342 में सुलतान शमसुद्दीन शाह की मृत्यु हो गयी। उसके पश्चात उसका भाई अलाउद्दीन शाह (1342–1354) कश्मीर का शासक बना। फिर क्रमशः शहाबुद्दीन (1354–1373) तथा कुतुबुद्दीन (1373–1389) कश्मीर के शासक बने। सन् 1389 में सुलतान सिकन्दर ने कश्मीर के शासन की बागडोर अपने हाथ में संभाली और इतिहास में नरसंहार का एक नया कीर्तिमान स्थापित किया जिसके कारण वह सिकन्दर बुतशिकन (मूर्तिभंजक) नाम से प्रसिद्ध हुआ। ऐसा कहा जाता है कि उसके शासन काल में केवल 11 कश्मीरी पंडितों के परिवार घाटी में बचे थे जिन्होंने किसी प्रकार घने वनों तथा पहाड़ों कि गहरी गुफ़ाओं में छिप कर अपने प्राणों की रक्षा की थी।

जब–जब इस संसार में धर्म का विनाश होता है और मानवता पर दानवता हावी होने का प्रयास करती है तब–तब इस धरती पर महान आत्माऐं आध्यात्मिक ज्ञान की ज्योति को लेकर अवतरित होती हैं और अपने कार्यकलापों द्वारा सारे समाज को एक सूत्र में पिरो कर पुनः मानवीय मूल्यों को स्थापित करती हैं। ऐसी ही एक महान सन्त कवित्री देवी लल्लेश्वरी थीं जिनका जन्म कश्मीर में राजा सुहदेव (1301–1320) के शासन काल में सन् 1320 में श्रीनगर से लगभग 20 किलोमीटर दूर पांपुर नाम के ग्राम में एक कुलीन सम्भ्रान्त ब्राह्मण परिवार में हुआ था जो स्थल पूरे विश्व में जाफ़रान (केसर) के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है।

देवी लल्लेश्वरी का जन्म एक ऐसे संक्रमण काल में हुआ जब प्राचीन और–

नवीन जीवन के मूल्यों के मध्य सीमाऐं रेखांकित की जा रही थीं, जब वर्तमान अपने अतीत के प्रति रुष्ट होकर उसे पूर्ण रुप से कालचक्र में विलीन कर देना चाहता था। यह एक ऐसे धर्म संकट का समय था जब अतीत का मोह न होते हुऐ भी मनुष्य अपने वर्तमान के प्रति बहुत अधिक उत्सुक नहीं था। पुरानी परम्पराऐं और नवीन मूल्यों के मध्य एक लक्ष्मण रेखा सी खिंच रही थी। यह आवश्यकता अनुभव की जा रही थी कि इस प्रचीन और नवीन के बीच एक इस प्रकार के सेतु की स्थापना की जाये जो इस प्रथकतावादी प्रकृति के बीच एक कड़ी बन कर इस परम्परा को प्रवाहमय बनाये रखें।

देवी लल्लेश्वरी के शैशव काल में कश्मीर घाटी में हर ओर घोर निराशा व्याप्त थी। उचित मार्गदर्शन के अभाव में लोग दिशा विहीन होकर इधर उधर भटकने को लाचार थे। उस समय उनके सम्मुख कोई ऐसा पथ प्रदर्शक नहीं था जो उनको आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा उनका मनोबल बढ़ा कर उनको एक सही दिशा में चलने का मार्ग प्रशस्त करता और उनके भीतर छिपी हुई परमशक्ति का उन्हें बोध कराता जो उनके प्रायः मृत शरीर में धर्म के प्रति एक नयी चेतना जागृत करती। देवी लल्लेश्वरी के काव्यत्व ने यह दायित्व सौम्यता से निभाया। इसमें प्राचीन के प्रति आग्रह था और नवीन के प्रति आसक्ति जिसने घाटी के सम्पूर्ण वातावरण को भक्ति रस में डुबो दिया।

देवी लल्लेश्वरी का उस समय की परम्परा के अनुसार काफ़ी कम आयु में एक कुलीन ब्राह्मण परिवार के लड़के से विवाह कर दिया गया परन्तु उनको अपने ससुराल में कोई सुख नहीं प्राप्त हुआ क्योंकि उनकी सास स्वभाव से बहुत ही क्रोधी तथा पाषाण हृदय वाली स्त्री थी। वह जब देवी लल्लेश्वरी के खाने के लिये भोजन परोसती तो उनकी थाली में एक पत्थर का बट्टा रख कर उस पर बत्ता और हाक का साग डालतीं ताकि देखने वाला यह समझे कि बहू अधिक भोजन करती है। देवी लल्लेश्वरी बहुत ही विनम्र भाव से भोजन करने के पश्चात थाली से उस बट्टे को निकाल कर धोकर रख देतीं। घर के वातावरण से पीड़ित होकर देवी लल्लेश्वरी ने घर को परित्याग करने का दृढ़ निश्चय किया और वह परम ब्रह्म की खोज में निकल पड़ीं।

यों तो देवी लल्लेश्वरी के जीवन से सम्बन्धित अनेक आश्चर्यचकित कर देने वाली घटनायें और कहानियां प्रचलित हैं पर उनकी प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिये इस समय उचित लिखित सामग्री उपलब्ध नहीं है क्योंकि बहुत से

बहुमूल्य ग्रन्थ और हस्तलिखित पाण्डुलिपियां अब प्रायः नष्ट हो चुकी हैं और जो कुछ थोड़ा बहुत बचा था वह कश्मीर में पिछले 12 वर्षों में आतंकवाद की भेंट चढ़ चुका है।

अपने गुरूदेव सिद्ध पंडित सूर्यकान्त जी की सादर कृपा से और देवी लल्लेश्वरी के निरन्तर शम–दम, अध्ययन, योग साधना से उन्हें शिव भक्ति के दर्शन हुए तथा ब्रह्म ज्ञान प्राप्त हुआ। वह अपनी योग साधना के बल पर एक उच्चतम कोटि की योगी, सन्त, ऋषि एवं परम ज्ञानी बनीं। परमपिता परमेश्वर शिव का अपरोक्ष ज्ञान प्राप्त करके वे अपने जीवन काल में ही परम कैवल्य, सहज आत्म ज्ञान स्थिति में प्राप्त होकर शुद्ध चैतन्य रूप हो गयी थी। वह सम्पूर्ण घाटी में विचरण करती थीं और उन्हें सर्वत्र शिव के दर्शन होते थे।

देवी लल्लेश्वरी ने कश्मीर घाटी में ऋषि परम्परा में नव चेतना जागृत कर उसे प्रवाहमय बनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया और घाटी में भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात किया। उन्होंने समाज को पुनः शिवभक्ति की ओर आकर्षित किया। उन्होंने अनेक गांवों और नगरों का भ्रमण करके अपने उपदेशों द्वारा भक्तजनों को जीवन के मूल्यों के महत्व के बारे में सचेत किया ताकि वह प्रचलित भ्रान्तियों से मुक्त होकर अपने आत्मबल को पहचाने और अपनी शक्ति को व्यर्थ नष्ट न करें। उन्होनें जाति–पाति के बन्धनों से मुक्त होकर सबको अपने ज्ञान का अमृत पान कराया ताकि सारा समाज एक सूत्र में बंधे।

देवी लल्लेश्वरी ने अपनी इस भक्ति विचारधारा को कश्मीर घाटी में और अधिक व्यापक आधार देने के उद्देश्य से वहां के मुस्लिम सूफ़ी सन्त नूरूद्दीन जिनको हिन्दू नन्द ऋषि के नाम से जानते हैं का भरपूर सहयोग लिया और उनकी सहायता से पूरी घाटी में लगभग 200 आध्यात्मिक केन्द्रों की स्थापना की जिससे इस भक्ति आन्दोलन को समुचित गति प्रदान की जा सके। इन केन्द्रों पर एक ज्ञानी संत के संरक्षण में नित्य पूजा अर्चना तथा भक्ति संगीत होता था तथा भक्तों में प्रसाद का वितरण होता था। विशेष अवसरों पर सामूहिक भोज का भी प्रबन्ध होता था तथा मुख्य उत्सवों पर सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते थे।

देवी लल्लेश्वरी ने अपने भक्ति रस के मार्ग द्वारा हिंसा और आतंकवाद पर विजय प्राप्त की क्योंकि उनकी स्पष्ट धारणा थी कि व्यक्ति के विरूद्ध हिंसा वास्तव में परम शिव के विरूद्ध हिंसा है। जो न केवल निन्दनीय है अपितु मानव

को दानव में परिवर्तित कर देती है जो उसके समूल विनाश का मार्ग प्रशस्त करती है। उनके उपदेश अधिकतर छन्दों में होते थे जिन्हें वाख कहते हैं। यही वाख इस भक्ति रस की धारा के मूल मंत्र बने। देवी लल्लेश्वरी 1344–1355 के बीच पूरी कश्मीर घाटी में प्रख्यात हुई। उनकी जन्म स्थली स्यिमपुर शिवभक्ति का एक प्रमुख तीर्थ स्थान बनी।

देवी लल्लेश्वरी अपने आध्यात्मिक ज्ञान के बल पर शिव दर्शन करने के पश्चात निवस्त्र रहने लगी थीं। उनकी दो घनी काले केशों की लटायें सदैव उनके वक्ष स्थलों को ढके रहती थीं। एक बार इस्लाम धर्म के प्रचारक शाह हमदान जो ईरान से इस्लाम धर्म के प्रचार और प्रसार के लिये कश्मीर घाटी में आया था से साक्षात्कार हो जाने पर उनके पेट से एक मांस के लोथड़े (लल) ने लटक कर उनकी लाज बचाई तब से उनको लल देद्य भी कहा जाने लगा। वह अपनी लाज बचाने के लिये एक बार एक नानबाई के जलते हुए तंदूर में भी कूदीं और उसमें से सोने के वस्त्र धारण करके बाहर निकली। ऐसी ही अनेक अदभुत और आश्चर्य चकित कर देने वाली लीलाऐं उनके जीवन से जुड़ी हैं पर उन पर दुर्भाग्यवश अभी तक किसी ने विधिवत शोध कार्य नहीं किया है।

देवी लल्लेश्वरी को कश्मीरी भाषा की प्रथम कवित्री माना जाता है। जिन्होंने अपने भक्तों को उपदेश कविता के माध्यम से दिये अंग्रेज़ विद्वान सर जी० ग्रिरसन ने सर्व प्रथम सन् 1914 में देवी लल्लेश्वरी के 258 वाखों का संग्रह किया। इनमें से 140 वाखों की प्रामाणिकता की पुष्टि हो पायी है। इससे कुछ वर्ष पूर्व कोपवाड़ा के एक महान सन्त पंडित धर्मदास दरवेश ने देवी लल्लेश्वरी के 120 वाखों को संग्रहित किया था। जिन्होंने बाद में उनको पंडित मुकुन्द राम शास्त्री को सौंप दिया जो फिर उनके द्वारा अंग्रेज़ विद्वान सर ग्रिरिसन को प्रदान किये गये।

देवी लल्लेश्वरी के यह भक्ति रस से ओत–प्रोत वाख शिव महिमा का वर्णन करते हुए आध्यात्मिक ज्ञान के दर्शन की एक झांकी प्रस्तुत करते हैं। यह वाख, शिव भक्ति दर्शन, साधना पद्धति, आध्यात्मिक तथा लौकिक सिद्धांतों तथा नैतिक विचार धारा के ज्ञान का मूल मंत्र है। इन वाखों में और भगवद् गीता के श्लोकों में भावनात्मक समरसता है जो मुख्य रूप से शैव दर्शन के अमृत से ओत–प्रोत है। उदाहरण के लिये देवी लल्लेश्वरी कहती हैं।

अकुय आंकार युस नामि धरे
कुम्बय ब्रह्माण्ड्स स्वमं गरे
अकुय मंत्र युस च्यतस करे
तस सास मन्त्र क्यांहज़न करे

अर्थात एक ओंकार को जिसने नामिस्थान में धारण किया, अपने आपको उसे ब्रह्माण्ड के समान समझा, एक ही मंत्र ऊँ का जिसने चिंतन किया, उसको हज़ार मंत्र से क्या काम है। इस वाख के भाव की मधुर झंकार निम्नलिखित गीता के श्लोक में साफ़ परिलक्षित होती है।

सर्वद्वारानि संयम्य मनो ह्रादि निरूध्य च।
मूर्ध्न्यार्धायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्।।

(श्रीमद् भगवद् गीता 8–12)

अर्थात सब इन्द्रियों के द्वारों को रोक कर मन को हृदय में स्थिर करके अपने प्राण को मस्तिष्क में स्थापन करके योग धारणा में स्थित हुआ।

देवी लल्लेश्वरी कहती हैं :–

अब्यांसी सविकास लय वथू
अगनस सगुण क्यूल समिच्रटा
शून्य गोल त अनामय म्वतू
युहुय उपदेश छुय भटा

अर्थात योगाभ्यास से संसार का प्रपंच ब्रह्म में लय हो जाता है, मानो सगुण शून्य अर्थात् निगुर्ण में लीन हो जाता है, शून्य भी जब विलीन हो जाता है तो अनामय परमात्मा ही शेष रहता है, हे ब्राह्मण सत्य उपदेश यही है। देवी लल्लेश्वरी चेतावनी देते हुए कहती हैं :–

कुस मरितस कसू मारन?
मारि कुस तय मारन कस?
युस हर त्रांविध गर गर करे
अढ सुय मरे त मारन तस?

अर्थात कौन मरेगा और किसको मारेंगे? मरेगा कौन और मारेगें किसे? जो हर–हर अर्थात शिव के चिन्तन को छोड़ कर घर के धन्धों में फंसेगा वही मरेगा और उसी को मारेंगे।

इसी भाव को श्रीमद् भगवद् गीता में निम्नलिखित श्लोक में कुछ इस

प्रकार प्रकट किया गया हैं –

न जायते प्रियते व कदाचिन
नायं भूत्वा भविता व न भूयः
अजो नित्याः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे।

(श्रीमद् भगवद् गीता 2–20)

अर्थात यह आत्मा किसी काल में भी न जन्मता है न मरता है अथवा न आत्मा होकर के होने वाला है। यह अजन्मा नित्य शाश्वत पुरातन है। शरीर के नाश होने से उसका नाश नहीं होता है।

देवी लल्लेश्वरी की धारणा के अनुसार शिव की अर्चना–साधना अत्यन्त सहज तथा स्वाभाविक है।

कुष पोष तिल दीफ़ जल ना गछे,
युस सदभाव गुरू कथमनि ह्यये
शम्भुहस स्वरि पननियछे,
सथ दापिज़ा सहज़ा क्रय।।

अर्थात कुशा, पुष्प, तिल, दीप और जल की परम ब्रह्म को आवश्यकता नहीं है जो शुद्ध मन से शम्भू का स्मरण करें। यही एक सच्ची क्रिया है। शिव साधना में शम–दम अर्थात इन्द्रियों का संयम एवं मन का शमन आवश्यक है।

देवी लल्लेश्वरी के उपदेश गृहस्थ एवं सन्यासी दोनों के लिये है। उनके उपदेश हैं कि ऊँ मंत्र को हृदय में धारण करके उसका चिन्तन करो। गायत्री मंत्र का प्रत्येक श्वास के साथ जाप करो। अहम भाव को त्याग कर तत्वरूप ब्रह्म का ध्यान करो। संसार अनित्य एवं नश्वर है। उसकी माया में लिपायमान मत हो। अपने पुरूषार्थ से ज्न्म तथा मृत्यु के चक्र से मुक्त होने का प्रयास करो। गृहस्थ जीवन में रहो पर शिव का ध्यान करते रहो। सब प्राणियों का सदा कल्याण करो। मन की शुद्धि के लिये शम–दम करो एवं वासना का त्याग करो। [illegible], काम [illegible] अहंकार को वंश में करो तथा मन के घोड़े को ज्ञान की रास से अपने वश में करो। जिसने ऐसा किया उसे ईश्वर की प्राप्ती अवश्य होगी। तुम शिव के दास हो।

चिदानन्द एवं ज्ञान स्वरूप ब्रह्म को जिसने जान लिया वही व्यक्ति जीवन मुक्त है। लोभ–मोह की निवृत्ति से ज्ञानालोक प्राप्त होता है। निरन्तर योगाभ्यास से शिव की कृपा प्राप्त होती है। फल की कामना न करते हुए निस्वार्थ भाव से

कतर्व्य कर्म करो एवं मानव जाति की एक दास के भाव से सेवा करो तथा अपने जीवन को सरल और सादा बनाने का प्रयास करो।

देवी लल्लेश्वरी ने आध्यात्मिक ज्ञान के उच्चतम शिखर पर पहुंचने के पश्चात अपने इस नाशवान शरीर को त्यागने का मन बनाया और सन् 1391 में लगभग 71 वर्ष की आयु में उन्होंने विजयश्वरा में निर्वाण प्राप्त किया। उनके भक्तों के अनुसार उनके पार्थिव शरीर से एक अलौकिक दिव्य ज्योति निकली जो वायुमण्डल में विलीन हो गयी। इस महान सन्त कवित्री की समाधी आज भी उस स्थान पर विद्यमान है जो शैव दर्शन का एक प्रमुख केन्द्र माना जाता है। इस महान आत्मा का जनमानस को संदेश था।

शिव छुय थलि थलि रोजान।
मोज़ान हयोन्द त मुस्लमान।।

अर्थात चूंकि परमात्मा एक है अतः हिन्दू और मुसलमान इसके नाम पर बांटे नही जा सकते, उन्हें भी एक बनकर रहना होगा। इस दिव्य चेतना को देवी लल्लेश्वरी ने उजागर किया जब मानव पशु बन कर घोर हिंसा का दामन थाम रहा था। यह उस निर्भीक सन्त कवित्री का साहस ही था जिसने विजय घोष के लिये उसमें आत्मा फूंक दी।

देवी लल्लेश्वरी की कवितायें मुख्य रुप से रहस्यवादी कोटि में आती हैं। उनके रहस्य दर्शन में जिज्ञासा है, कौतुहल है, आत्म विश्वास है और आत्म सम्पर्ण है।

"आमि पनह सदरस नावि छस लमान,
कति बोज़ि दय म्योन, म्यति दियितार।
आम्यन टाक्यन्य दोन्य ज़न शमान,
जुव छुम भ्रमान छरह गछह"।।

यह वह मनोस्थिति है जब ससीम आत्मा असीम के प्रति आकृष्ट होकर अपने पग आगे बढ़ाती है परन्तु इस नश्वर संसार के बन्धन उसका मार्ग अविरुद्ध करते हैं और इससे उसको इस बात का आभास नहीं होता कि उसका लक्ष्य क्या है। यह व्याकुलता की अवस्था है जब आत्मा अपने वातावरण से ऊपर उठने का तो प्रयत्न करती है पक्षपूर्ण रुप से अपने आपको सांसारिक माया मोह से अलग नहीं कर पाती ।

देवी लल्लेश्वरी के रहस्यवाद पर कश्मीर के अभेद शिव दर्शन का प्रभाव

साफ़ दृष्टिगोचर होता है ओर कहीं कहीं पर तो इस सदैव दर्शन के परिभाषिक शब्दों को भी इस जागरुक कवित्री ने अपनाया है।

"अम्यसी सविकास लय वथिव,
गगनस सगुन म्यूल सम च्रटा।
शन्य गोल त अनामय मोतुय,
योहय वोपदीश छुव बट।।"

।। शुभमस्तु ।।



एक निष्ठावान कुशल प्रशासक

पंडित जयकरन नाथ उगरा



कश्मीरी पंडितों ने लगभग पिछले 300 वर्षों में समय–समय पर कश्मीर घाटी से प्रतिकूल परिस्थितियों में देश के अन्य अंचलों में पलायन करने के पश्चात सदैव इस बात का प्रयास किया कि वह सत्ता के केन्द्र बिन्दु के निकट रहें। कदाचित उस समय की नज़ाकत को देखते हुये उन्हें यही उपयुक्त लगा कि इस प्रकार उनकी एवं उनके परिजनों की सुरक्षा की समुचित व्यवस्था शासन तंत्र के संरक्षण में सम्भव हो सकेगी और एक बिलकुल नये वातावरण में अपने को व्यापक समाज में स्थापित करने में उन्हें बहुत अधिक कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा साथ ही साथ सत्ता के निकट रहने से उनका मान सम्मान बढ़ेगा और वह समाज के अन्य वर्गों के लिए आदर का पात्र बनेंगें। वह अपनी इस सोंच में काफी सीमा तक सफ़ल भी हुये क्योंकि मुग़ल शासन काल, अवध में नवाबी शासन काल तथा उसके पश्चात अंग्रेजों के शासन काल में अनेक कश्मीरी पंडित उच्च्य पदों पर आसीन रहे और समाज में अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रहे। उन्होनें समाज के विभिन्न क्षेत्रों में अपने महत्वपूर्ण कार्यकलापों द्वारा अनेक नये कीर्तिमान स्थापित किये और जन मानस में अपार लोकप्रियता अर्जित की। वह अपने कुशल व्यवहार, निष्पक्ष आचरण, तथा भेद भाव रहित नीतियों के कारण जनमानस का विश्वास जीतने में सफ़ल रहे और उसकी प्रशंसा का पात्र बने। ऐसे ही एक प्रतिभावान प्रशासक पंडित जयकरन नाथ उगरा थे जिन्होने अपने कार्यकाल में आम जनता से इतना अधिक आदर और सम्मान पाया जो कदाचित हर प्रशासक के लिए सम्भव नहीं। उनकी विलक्षण बुद्धि तथा जटिल से जटिल समस्या पर निर्णय लेने की क्षमता वास्तव में अद्वितीय थी जिसने उनको समाज

में बहुत अधिक लोकप्रिय बना दिया था।

पंडित जयकरन नाथ उगरा के पूर्वज मुख्य रुप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी थे। अवध में अंग्रेजों का 1857 की क्रान्ति के पश्चात पूर्ण रुप से शासन स्थापित होने पर पंडित जयकरन नाथ उगरा के पितामह पंडित दीना नाथ उगरा कश्मीर घाटी से निकल कर कदाचित अंग्रेजों द्वारा किसी जनपद में तहसीलदार नियुक्त कर दिये गये थे।

पंडित दीना नाथ उगरा सेवा निवृत्त होने के पश्चात लखनऊ आ गये और अमीनाबाद क्षेत्र में जंगलीगंज मुहल्ले में अपने परिवार के साथ निवास करने लगे। आपके दो पुत्र थे जिनके नाम थे दुखहरन नाथ उगरा तथा गोकरन नाथ उगरा। इनमें अग्रज भ्राता पंडित दुखहरन नाथ उगरा का विवाह ग्वालियर रियासत के निवासी पंडित पृथ्वी नाथ भान की सुपुत्री सावित्री भान के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के कोई सन्तान नहीं थी। पंडित गोकरन नाथ उगरा ब्रिटिश शासन काल में अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात डिप्टी कैलेक्टर हो गये थे। आपके दो विवाह हुए थे। आपकी पहली पत्नी देहली के बाजार सीता राम के एक रैना परिवार की कन्या थीं जिनसे आपको एक पुत्री जनक दुलारी उत्पन्न हुई। जिनका विवाह लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित बैजनाथ कौल के सुपुत्र पंडित राजेश्वर नाथ कौल के साथ सम्पन्न हुआ था। पंडित राजेश्वर नाथ कौल लखनऊ के राजकीय ट्रेनिंग कालेज के बाद में प्राचार्य हो गये थे।

पंडित गोकरन नाथ उगरा की दूसरी पत्नी देहरादून के प्रसिद्ध तंखा परिवार की कन्या थीं। आपको अपनी दूसरी पत्नी से केवल एक पुत्र रत्न प्राप्त हुआ जिसका नाम आपने जयकरन रखा।

पंडित जयकरन नाथ उगरा का जन्म 31 जनवरी सन् 1905 को जंगलीगंज में स्थित अपने पैत्रिक आवास में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा लखनऊ में ही सम्पन्न हुई। आपने अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा वाला कदर रोड पर स्थित कुईन्स कालेज से सन् 1921 में उत्तीर्ण की। आपने तत्पश्चात अपनी आगे की शिक्षा के लिए लखनऊ क्रिश्चियन कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1923 में एफ0ए0 की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। आपने फिर उच्च शिक्षा के लिए लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया जहां से आपने बी0ए0 की परीक्षा सन् 1925 में उत्तीर्ण की आपने अपने विश्वविद्यालय के छात्र जीवन में अनेक गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया। आपने विश्वविद्यालय में संचालित यू0टी0सी0

का भी विधिवत प्रशिक्षण लिया। आपने बी0ए0 की परीक्षा में पूरे विश्वविद्यालय में सब से अधिक अंक प्राप्त कर प्रथम स्थान पाया जिसके लिये आपको कुलाधिपति ने गोल्ड मेडल से सम्मानित किया।

आपने लखनऊ विश्वविद्यालय से एम0ए0 तथा एल–एल0बी0 की परीक्षा सन् 1927 में एक साथ उत्तीर्ण की जो उस समय तक विश्वविद्यालय में प्राविधान था और अब समाप्त हो चुका है। आपकी प्रारम्भ में पुलिस विभाग में नौकरी करने की इच्छा थी पर आपके पितामह पंडित दीना नाथ उगरा का मत था कि आप उसके स्थान पर सिविल सेवा को वरीयता दें। परन्तु इसके पूर्व कि आप कुछ अपनी नौकरी के सम्बन्ध में निर्णय ले पाते प्रदेश के तत्कालीन लैफटिनेन्ट गर्वनर सर विलियम मौरिस ने आपको आपकी योग्यता से प्रभावित होकर डिप्टी कैलक्टर नियुक्त कर दिया। आप इस प्रकार सन् 1927 में प्रदेश की प्रशासनिक सेवा में आगये। आपकी सर्वप्रथम नियुक्ति मथुरा जनपद में एक डिप्टी कैलेक्टर के पद पर हुई।

आप अपने सेवा काल में अनेक जनपदों में नियुक्त रहे और पूरी निष्ठा के साथ अनेक सराहनीय कार्य किये। सन् 1948 में जब अयोध्या में राम जन्मभूमि का विवाद उत्पन्न हुआ तो तत्कालीन प्रदेश के मुख्यमंत्री पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने प्रदेश के सारे आला अफ़सरों में आपको चुना और आपको विस्फोटक स्थिति पर काबू पाने के लिए फैज़ाबाद जनपद का जिला मजिस्ट्रेट बना कर भेजा और आपको प्रन्नोति कर के एक आई0ए0एस0 आधिकारी बना दिया गया। आपने अयोध्या की विस्फोटक स्थिति को बड़ी ही सूझ बूझ के साथ नियंत्रित किया और साम्प्रदायिक सौहार्द बनाने में सफ़लता हासिल क़ी। आपके इंस सराहनीय कार्य की उस समय के समाचार पत्रों में भूरि–भूरि प्रशंसा की गयी और मुख्य मंत्री पंडित गोविन्द बल्लभ पंत आपकी कार्य करने की क्षमता से बहुत अधिक प्रभावित और प्रसन्न हुऐ कि आपने पूरे प्रदेश को एक अति संवेदनशील वातावरण में साम्प्रदायिकता की आग में झुलसने से बचा लिया।

आपकी कार्यप्रणाली से प्रभावित होकर सन् 1959 में प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री डॉ0 सम्पूर्णानन्द ने आपको पदोन्नती करके कमिश्नर बना दिया। आप उस समय के प्रदेश की प्रशासनिक सेवा के इतिहास में प्रथम अधिकारी थे जो डिप्टी कैलेक्टर से कमिश्नर के पद पर आसीन हुऐ थे। यह वास्तव में उस समय एक बहुत बड़ा सम्मान था, जो कुछ गिने चुने अधिकारियों को ही प्राप्त हो पाता

था। आपने कुछ वर्ष कानपुर नगर महापालिका में मुख्य नगर अधिकारी के पद पर भी कार्य किया और उस नगर की अनेक जन समस्याओं का समाधान किया। आप सन् 1960 में एक लम्बे कार्यकाल के पश्चात सेवा निवृत्त हुए आप सेवा निवृत्ति के पश्चात सरकार द्वारा इन्डस्ट्रियल ट्रिब्यूनल के अध्यक्ष नियुक्त कर दिये गये। उस पद पर कुछ वर्ष कार्य करने के पश्चात सरकार ने आपको प्रदेश के लोक सेवा आयोग का सदस्य मनोनीत कर दिया। आप इस पद पर आसीन होने के पश्चात इलाहाबाद में अपने परिवार के साथ रहने लगे।

आपने अपने लम्बे सेवाकाल में अनेक विवादास्पद मुद्दों पर निर्भीक होकर स्वतंत्र, तर्कसंगत तथा विवेकपूर्ण निर्णय लिये जिसके कारण कई बार आपके अपने वरिष्ठ अधिकारियों से गहरे मतभेद भी हो गये पर आपने सदैव निष्पक्ष निर्णय लेने को प्राथमिकता दी और कभी भी दबाव में आकर कोई कार्य नहीं किया। आपके इसी व्यवहार के कारण सन् 1944 में तत्कालीन अंग्रेज मुख्य सचिव से तीखी झड़प भी हो गयी। आपने देश के स्वतंत्र हो जाने के पश्चात पंडित गोविन्द बल्लभ पंत, डा0 सम्पूर्णा नन्द तथा लाल बहादुर शास्त्री के साथ कार्य किया आपके तत्कालीन न्याय और कानून मंत्री सैय्यद अली ज़हीर के साथ भी किसी नियम को लेकर मतभेद उत्पन्न हो गया पर बाद में सय्यद अली ज़हीर को आपके द्वारा फ़ाईल पर की गयी टिप्पणी से सहमत होना पड़ा। आपको सरकारी नियमावली की गहरी जानकारी थीं और इस नाते फ़ाईल पर बहुत ही सटीक टिप्पणी लिखते थे। जिसको बदल पाना बड़े–बड़े अधिकारियों और मंत्रियों के लिए सम्भव नहीं हो पाता था। आपकी विलक्षण बुद्धि के कारण पंडित गोविन्द बल्लभ पंत आपसे कांग्रेस पार्टी की राजनीति में भी व्यक्तिगत रुप से परामर्श लेते थे।

आप जब सन् 1945 में लखनऊ में सचिवालय में नियुक्त थे तो प्रदेश का तत्कालीन अंग्रेज़ लेफटिनेन्ट गर्वनर हेलेट जो भारत की स्वतंत्रता का कट्टर विरोधी था ने एक वरिष्ठ अधिकारियों की कमेटी गठित की जिसको सरकार की नीतियों को जनता में प्रसारित करने के लिए एक मसौदा तैयार क़रना था। जिसका मुख्य उद्देश्य द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति पर सरकार का पक्ष उचित रुप से प्रस्तुत करना था। इसके लिए वरिष्ठ आई0सी0एस0 अधिकारी मोहम्मद वसीम अब्बासी का चयन किया गया। श्री अब्बासी को इस बात की पूरी स्वतंत्रता देदी गयी कि वह आपने सचिव के लिए किसी उपयुक्त अधिकारी का चयन कर

सकते है। श्री अब्बासी पंडित जयकरन नाथ उगरा की कार्य प्रणाली से भलि भांति परिचित थे और उनकी निर्भीक विचारधारा से बहुत अधिक प्रभावित थे। श्री अब्बासी ने इस कार्य के लिए पंडित जयकरन नाथ उगरा का चयन किया जो उनके लिए उस समय काफ़ी गौरव की बात थी।

पंडित जयकरन नाथ उगरा को बाल्यावस्था से ही घुड़सवारी का बेहद शौक़ था। आपने घुड़सवारी का विधिवत प्रशिक्षण लिया था और एक कुशल घुड़सवार बने। आप 7 वर्ष की आयु से ही घुड़सवारी करने लगे थे। आपको टेनिस खेलने का भी बहुत शौक़ था। आपको हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेज़ी भाषा के साहित्य से बहुत अधिक लगाव था और उनसे सम्बन्धित पुस्तकें बड़ी रुचि के साथ पढ़ते थे। अपने कार्य क्षेत्र में आप रेवन्यु मामलों के ज्ञाता माने जाते थे। आपके द्वारा फाइलों पर की गयी टिप्पड़ियां नये आई0ए0एस0 तथा पी0सी0एस0 अधिकारियों को उनके प्रशिक्षण के समय मार्ग दर्शन का कार्य करती हैं कि किस प्रकार शांसन तंत्र चलाया जाता है।

आपका विवाह लखनऊ के प्रख्यात उर्दू भाषा के शायर पंडित बृज नारायण चकबस्त के अग्रज भ्राता पंडित माहराज नारायण चकबस्त की सुपुत्री ब्रज किशोरी के साथ 23 वर्ष की आयु में 17 नवम्बर सन् 1928 को लखनऊ में सम्पन्न हुआ था। आपके सबसे बड़े पुत्र पंडित मनकरन नाथ उगरा हैं जिनका विवाह बनारस विश्वविद्यालय के ट्रेनिंग कालेज के भूतपूर्व संकायाध्यक्ष डा0 प्रताप नारायण राजदान की सुपुत्री सुश्री अनुराधा राजदान के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति के एक पुत्र बृजेश उगरा हैं जो आजकल अमरीका में निवास कर रहे हैं। आपका विवाह नोयडा के निवासी डा0 आनन्द मोहन जुत्शी की पुत्री मीरा के साथ सम्पन्न हुआ है। पंडित मनकरन नाथ उगरा की पुत्री श्यामा का विवाह सीतापुर निवासी पंडित श्याम सुन्दर नारायण मसलदान के सुपुत्र शैलेन्द्र मसलदान के साथ सम्पन्न हुआ हैं।

पंडित जयकरन नाथ उगरा के दूसरे पुत्र पंडित राज नाथ उगरा हैं। आपका विवाह भोपाल निवासी पंडित श्याम सुन्दर नारायण मुशरान की सुपुत्री सुश्री मीरा के साथ सम्पन्न हुआ था इस दम्पति के एक पुत्र विक्रम तथा एक पुत्री शारदा है।

पंडित जयकरन नाथ उगरा के तीसरे पुत्र पंडित प्राण नाथ उगरा हैं। आपका विवाह लखनऊ निवासी पंडित मदन मोहन पंडित की सुपुत्री चन्द्रा के

साथ सम्पन्न हुआ था, इस दम्पति के दो पुत्र विनायक और लोकेश हैं। विनायक उगरा का विवाह फ़ैजाबाद निवासी पंडित आर0सी0कौल की सुपुत्री हिमानी के साथ सम्पन्न हुआ है।

पंडित जयकरन नाथ उगरा के अन्तिम और चौथे पुत्र अवधेश उगरा हैं। आपका विवाह आगरा निवासी पंडित हरि कृष्ण वातल की पुत्री गायत्री के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र जयंत और माधव है।

पंडित जयकरन नाथ उगरा की पुत्रियों में सबसे बड़ी शोभा है जिनका विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित प्रकाश नारायण सप्रू के सुपुत्र पंडित तेज नारायण सप्रू के साथ सम्पन्न हुआ था। इसके बाद सुभद्रा हैं जिनका विवाह कलकत्ता निवासी पंडित कुंवर कृष्ण कौल के सुपुत्र पंडित हरि कृष्ण कौल के साथ सम्पन्न हुआ था और उसके पश्चात सुमित्रा हैं जिनका अभी विवाह नहीं हुआ है।

पंडित जयकरन नाथ उगरा ने अपने जीवन के हर पल का भरपूर आनन्द लिया और अपने कार्यकलापों द्वारा काफ़ी ख्याति अर्जित की। उन्होंने शासन तंत्र को चलाने के नये मापदण्ड स्थापित किये जो नये प्रशासकों के लिए सदैव प्रेरणा का श्रोत रहेंगे और उनके लिए एक मार्ग दर्शक का कार्य करेंगें। आपका लगभग 88 वर्ष की आयु में 31 जनवरी 1993 को अपनी वर्षगांठ के दिन इलाहाबाद में 18/2 स्टैन्ली रोड पर स्थित अपने आवास में निधन हो गया। आपके पार्थिव शरीर को संगम के पवित्रतट पर पंचतत्व में विलीन कर दिया गया और इस प्रकार हमारी बिरादरी का एक महानायक हमसे सदा के लिए बिछड़ गया। किसी हिन्दी के कवि ने अपने भावुक मन से प्रभावित होकर बहुत ही सुन्दर पंक्तियां कुछ इस प्रकार रचित की हैं।

"देश के प्रेम में माता के स्नेह में
वेदियों पर जो जलें दीप उनको नमन"



कूटनीति में पारन्गत एक क्रान्तिकारी

मिर्ज़ा मोहन लाल जुत्शी



इस संसार में कुछ व्यक्ति समाज की स्थापित परम्पराओं और मान्यताओं का आदर करते हुए उन्हीं के अनुसार अपने आचरण को ढालने का प्रयत्न करते हैं और उसी को अपने जीवन का सार समझते हैं। वहीं दूसरी ओर कुछ व्यक्ति अपने क्रान्तिकारी कार्यकलापों द्वारा व्यापक समाज में नयी परम्पराऐं और मान्यताऐं स्थापित करने का साहस करते हैं पर अपने इन प्रयासों में वह या तो समाज के उच्चतम शिखर तक पहुंच कर सबके लिये वन्दनीय हो जाते हैं या फिर स्वयं अपना सर्वनाश कर धूल धूसरित हो जाते हैं और समाज द्वारा सदा के लिये भुला दिये जाते हैं। इस प्रकार के क्रान्तिकारी कदम में कोई मध्यम मार्ग नहीं होता अतः क्रान्ति का शंखनाद अधिकतर वही व्यक्ति करता है जो अपने को मानसिक रूप से हर प्रकार के कष्ट झेलने के लिये तैयार कर लेता है क्योंकि उसका मार्ग कांटों से बिछा होता है और हर पग पर उसको कठिन संघर्ष का सामना करना पड़ता है।

कुछ व्यक्ति अपनी धुन के इतने पक्के होते हैं कि वह समाज से अलग चलने में ही विश्वास रखते हैं और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये हर प्रकार की कठिनाई का निडर होकर सामना करने के लिये सदैव तत्पर रहते हैं और उसके लिये हर प्रकार का बलिदान देने के लिये अग्रसर रहते हैं क्योंकि उनके भीतर कदाचित कुछ नया करने की ललक होती है। ऐसे ही एक युग पुरुष थे पंडित मोहन लाल जुत्शी जिन्होंने अपने कार्यकलापों से न केवल कश्मीरी पंडितों के इतिहास में एक नये अध्याय की रचना की अपितु अपने जीवन काल में ही सबके लिये एक कौतुहल का विषय बन गये।

मोहन लाल का जन्म सन् 1812 में दिल्ली की बाज़ार सीताराम के कूंचऐ काश्मीरीयान में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपके पूर्वजों के सम्बन्ध में इस समय कोई ठोस प्रमाणित जानकारी उपलब्ध नहीं है। विभिन्न शोधकर्ताओं के अपने अलग–अलग मत हैं पर आपके परिजनों द्वारा दी गयी सूचना के आधार पर आपके पूर्वज मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के हब्बा कदल मुहल्ले के निवासी थे जो मुग़ल सम्राट जहांगीर (1605–1627) के शासन काल में कश्मीर घाटी से निकल कर सर्व प्रथम दिल्ली आये पर कुछ व्यवहारिक कठिनाईयों के कारण कुछ वर्ष पश्चात पुनः श्रीनगर वापस लौट गये।

मुग़ल सम्राट शाहजहां (1627–1658) के शासन काल में सन् 1645 के आस पास पुनः आपके पूर्वज पंडित लक्ष्मी नाथ जुत्शी श्रीनगर से दिल्ली आ गये और चांदनी चौक के निकट रहने लगे। आप दिल्ली के निकट करनाल के एक धनी जमीनदार के यहां अध्यापन का कार्य करके अपने परिवार का भरण पोषण करने लगे।

उस समय की प्रचलित प्रथा के अनुसार दिल्ली के मुग़ल सम्राट का एक भव्य शाही जुलूस वर्ष में एक बार लाल किले से नगर के मुख्य मार्गों से गुज़रता हुआ पुनः लाल किले पर पहुंच कर समाप्त होता था। जिसको देखने के लिये जन सैलाब उमड़ता था। पंडित गोपी नाथ जुत्शी जो पंडित लक्ष्मी नाथ जुत्शी के पुत्र थे भी कौतुहल वश इस शाही जुलूस को देखने के लिये अपने आवास से चांदनी चौक पहुंचे और वहां सड़क के किनारे खड़े होकर इस जुलूस की बड़ी बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगे कुछ क्षण प्रतीक्षा करने के पश्चात उनको यह शाही जुलूस चांदनी चौक की तरफ़ आता हुआ दिखायी दिया जिसके आगे एक व्यक्ति कुछ ऐलान कर रहा था। जब वह व्यक्ति और अधिक निकट आया तो इनको आभास हुआ कि यह तो फारसी भाषा में वहां जुलूस को देखने के लिये इकट्ठा हुए लोगों को कदाचित यह समझ कर कि वह फारसी भाषा से बिलकुल अनभिज्ञ है चुनी हुई गालियां दे रहा है। उस व्यक्ति के इस व्यवहार से आपका कश्मीरी होने के नाते खून खौल गया और आपने उसको और अधिक कठिन फारसी भाषा में मुंह तोड़ जवाब दिया मुगल सम्राट आपके इस निर्भीक व्यवहार और फारसी भाषा के ज्ञान से बहुत अधिक प्रभावित हुआ और उसने आपको बुलाकर दरबार में आने का निमंत्रण दिया आप इस प्रकार मुगल दरबार में एक अच्छे पद पर नियुक्त हो गये और कुछ वर्षों के पश्चात दिल्ली के निकट एक छोटी रियासत के दीवान

बना दिये गये।

दीवान गोपी नाथ जुत्शी के तीन पुत्र थे। जिनमें से एक का नाम पंडित शिव नाथ जुत्शी था जो उर्दू तथा फारसी भाषा के एक जाने माने विद्वान थे। आपको मुगल सम्राट शाह आलम द्वितीय (1759–1806) ने दिल्ली के निकट की रियासत झझर का दीवान बना दिया था। आपको मुग़ल सम्राट ने "राजा" की उपाधि से अलंकृत किया और आपको 20 लाख रूपये की जागीर प्रदान की जिससे आपको लगभग उस समय 4000 रूपये माहवार की आय होती थी। कुछ पुस्तको मे आपका नाम मनीराम लिखा गया है।

दीवान शिव नाथ जुत्शी (मनीराम) के भी तीन पुत्र थे। जिनमें से एक का नाम पंडित शम्भू नाथ जुत्शी था जो मुग़ल दरबार में नौकर थे। आपको "राय राजन" की उपाधि से विभूषित किया गया था और मुग़ल सम्राट ने आपको काफ़ी जागीरें प्रदान की थीं। दिल्ली का यह जुत्शी परिवार उस समय उन कुछ गिनेचुने धनी परिवारों में एक था जिसकी जागीरें दिल्ली, लाहौर, लुधियाना, पटियाला, जालंधर, मेरठ, आगरा और कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद में फैली हुई थी।

राय राजन शम्भू नाथ जुत्शी के एक पुत्र का नाम पंडित सीता राम जुत्शी था जो दिल्ली के निकट एक रियासत के दीवान थे। दिल्ली का बाज़ार सीताराम मुहल्ला आपने ही आबाद कराया जहां आपकी अनेक हवेलियां थीं। पर कुछ स्थानों पर आपका उल्लेख राय ब्रह्मनाथ के रूप में किया गया है जो जन मानस में राय बुद्ध सिंह के नाम से अधिक प्रसिद्ध थे क्योंकि आपकी माताजी पंजाब के एक सिख परिवार की लड़की थीं। आपका विवाह ग्वालियर रियासत के एक कौल परिवार की कन्या के साथ सम्पन्न हुआ था। आपने एक शाही जीवन व्यतीत किया और जम के धन को अपने विभिन्न शौकों को पूरा करने के लिये व्यय किया जिसके परिणाम स्वरूप अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में आपको बहुत अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ा।

आप तत्कालीन बम्बई प्रेसिडेन्सी के गवर्नर सर एम0एल फिस्टन के फारसी अनुवादक हो गये थे और उनके लिये दोभाषिये का भी कार्य करते थे। आपने एलफिस्टन साहब के साथ सन् 1809 में कुछ मुस्लिम देशों का भी भ्रमण किया था।

पंडित सीताराम जुत्शी के दो पुत्र मोहन लाल और केदार नाथ थे। पंडित मोहन लाल जुत्शी की प्रारम्भिक उर्दू तथा फारसी की शिक्षा अपनी हवेली में

स्थापित मकतब में विद्वान मौलवियों की देख रेख में सम्पन्न हुई। आपने तदपश्चात सन 1829 में देहली कालेज में प्रवेश लिया जो सन् 1772 में परशियन कालेज के नाम से स्थापित हुआ था और जिसका नाम अंग्रेज़ों ने सन् 1823 में देहली कालेज रख दिया था। इस कालेज का सन् 1881 में पुनः नाम बदल कर सेन्ट स्टीफेन्स कालेज कर दिया गया।

मोहन लाल एक बहुत ही मेधावी और प्रतिभावान छात्र थे आपने देहली कालेज से सन् 1831 में अंग्रेज़ी भाषा का पाठ्यक्रम अपनी कक्षा में सबसे अधिक अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण किया और जिसके कारण आपकी तुरन्त ईस्ट इण्डिया कम्पनी में नियुक्ति हो गयी। आपके अध्यापक चार्ल्स ट्रेवेलान ने आपकी इस सम्बन्ध में काफ़ी सहायता की जिनके अंग्रेज़ उच्च अधिकारियों से काफ़ी मधुर सम्बन्ध थे। चार्ल्स ट्रेवेलान की सर ऐलेक्जेन्डर बर्न्स से घनिष्ठ मित्रता थी और उनके कहने पर सर ऐलेक्ज़न्डर बर्न्स ने मोहन लाल को केवल 19 वर्ष की आयु में अपना फ़ारसी भाषा का सचिव नियुक्त कर लिया।

मोहन लाल के आकर्षक व्यक्तित्व, वाक पटुता, फारसी तथा अंग्रेज़ी भाषा का समुचित ज्ञान इत्यादि कुछ विशेष गुणों के कारण अंग्रेज़ों ने आपको विभिन्न रियासतों के शासकों तथा मध्य ऐशिया के देशों के शासकों के साथ अपने कूटनीतिज्ञ सम्बन्ध स्थापित करने के लिये अपना मुख्य वार्ताकार नियुक्त किया जो वास्तव में उस समय की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य था जिसमें हर समय मृत्यु का भय बना रहता था। क्योंकि इसमें लम्बी यात्राऐं करनी पड़ती थीं जो उचित यातायात के साधनों के अभाव में बहुत ही दुशकर कार्य होता था। प्रायः यह यात्राऐं घोड़ों पर बैठ कर तय की जाती थी और मार्ग में कई स्थानों पर सरायों में ठहरना पड़ता था। जहां आगे की यात्रा के लिये घोड़े बदले जाते थे। चूंकि मार्ग अधिकतर दुर्गम होते थे अतः रास्ते में लुट पिट जाने का भी निरन्तर भय बना रहता था।

एक विशेष बात यह भी थी कि उस समय रूढ़िवादी कश्मीरी पंडितों द्वारा सिन्धु नदी को पार कर यात्रा करना बहुत ही अशुभ संकेत माना जाता था और मुस्लिम देशों की यात्रा विशेष रूप से वर्जित थी जिसको घोर पाप करने की संज्ञा दी गयी थी जिसका कोई प्रायश्चित सम्भव नहीं था।

मोहन लाल ने बिरादरी की इन स्थापित मान्यताओं और परम्पराओं के विरूद्ध अरब देशों की अपने कार्य के सिलसिले में अनेक लम्बी यात्राऐं की।

दीवान अयोध्या प्रसाद जो उस समय कश्मीरी पंडितों के एक प्रतिष्ठित नेता थे ने भी मोहन लाल को काफ़ी समझाने का प्रयास किया कि वह अपने आचरण को मर्यादित रखने की चेष्टा करें और कोई ऐसा कार्य न करें, जिससे बिरादरी के धर्म में आस्था रखने वाले सदस्यों की भावनाओं को कोई ठेस पहुंचे पर मोहन लाल पर किसी बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ा और वह निरन्तर बिरादरी के नियमों की अवहेलना करते रहे जिसका दु:खद परिणाम यह हुआ कि सन् 1834 में उनको बिरादरी से बहिष्कृत कर दिया गया।

प्राप्त की गयी जानकारी के अनुसार मोहन लाल ने अपने साथियों के साथ घोड़ों पर अपनी पहली दिल्ली से काबुल की यात्रा 18 दिसम्बर सन् 1831 को प्रारम्भ की और पानीपत, करनाल, अम्बाला, लुधियाना, लाहौर, रावलपिंडी, पेशावर, जलालाबाद में क्रमशः पड़ाव डाल कर विश्राम करते हुए 1 मई सन् 1832 को लगभग 5 माह पश्चात काबुल पहुंचे। इससे इस यात्रा की कठिनाई का अनुमान स्वयं लगाया जा सकता है। मोहन लाल ने इस यात्रा का सजीव चित्रण अपनी कुशल लेखनी द्वारा अपनी पुस्तकों और डायरी में स्वयं किया है।

लाहौर पहुंचने पर मोहन लाल ने वहां के शासक माहाराजा रंजीत सिंह (1801–1839) से भेंट की। आप 18 जनवरी सन् 1832 को उनके खालसा दरबार में प्रस्तुत हुऐ। माहाराजा रंजीत सिंह ने आपको एक बहुमूल्य शाल तथा कुछ स्वर्ण मुद्रायें उपहार स्वरूप भेंट कीं। माहाराजा रंजीत सिंह एक कुरूप व्यक्ति थे जिनके चेहरे पर चेचक के दाग थे और जिसके कारण उनकी एक आंख की रौशनी जाती रही थी। आपकी पत्नी बीबी मेहरन एक मुस्लिम महिला थीं जो बहुत अधिक सुन्दर और आकर्षक थीं माहाराजा रंजीत सिंह की तलवार का लोहा उस समय बड़े बड़े शूर वीर मानते थे। आपके मुख्य रत्नों में ध्यान सिंह, सुचेत सिंह, लाल सिंह तथा गुलाब सिंह थे जिनसे आप राज काज के कार्यो में परामर्श लेते थे।

मोहन लाल का काबुल पहुंचने पर वहां के शासक दोस्त मोहम्मद खां ने हार्दिक स्वागत किया। मोहन लाल ने फ़िर वहां के बामियां प्रान्त का भ्रमण किया और वहां पर्वत श्रृंखला में काट कर बनायी गयी विश्व की सबसे ऊंची बुद्ध की मूर्ति का अवलोकन किया मोहन लाल ने फिर बोखारा की यात्रा की जहां एक शाही फरमान द्वारा हिन्दुओं का घोड़े पर बैठ कर यात्रा करना वर्जित था। आपको नियुक्त करने वाले सर ऐलेक्ज़ेन्डर बर्न्स सन् 1832 के जुलाई माह में ईस्ट

इण्डिया कम्पनी से अपना त्याग पत्र देकर कैस्पियन की ओर चले गये और मोहन लाल डॉ0 हेराड के साथ अपनी यात्रा आगे जारी रखते हुए परशिया पहुंच गये।

मोहन लाल परशिया के राज कुमार अब्बास मिर्ज़ा के सम्मुख प्रस्तुत हुए जिसने आपका आदर सत्कार किया और आपको वहां के सबसे बड़े सम्मान "मिर्ज़ा" से नवाज़ा। मोहन लाल वहां से अपनी यात्रा समाप्त करते हुए पुनः सन् 1834 में भारत पहुंचे जहां ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बेन्टिक ने आपका सीमा पर स्वागत किया और आपको फिर दिल्ली के मुग़ल सम्राट अकबर द्वितीय (1806–1837) के सम्मुख दिल्ली के अंग्रेज़ रेजिडेन्ट ने प्रस्तुत किया जिसने आपको एक शाही दस्तार और पोशाक भेंट करी।

आपका अरब देशों का बिरादरी की इच्छाओं के विरूद्ध व्यापक भ्रमण करने के पश्चात सन् 1834 में पुनः दिल्ली आने पर वहां के कश्मीरी पंडितों ने एक आम सभा की जिसमें आपके कार्यकलापों पर सविस्तार चर्चा हुई और उसके पश्चात एक प्रस्ताव परित कर आपको बिरादरी से धर्म विरोधी कार्य करने के लिये निष्कासित कर दिया गया।

अफ़गानिस्तान का शासक दोस्त मोहम्मद खां अग्रेंज़ों के लिये बहुत बड़ा सिर दर्द बना हुआ था जिसको काबू में करने के लिये अंग्रेज़ों ने मोहन लाल को पुनः काबुल जाने का आदेश दिया और साथ ही साथ उस क्षेत्र में रूसी प्रभाव का भी आंकलन करने को कहा। उस समय इस प्रकार के मिशन प्रायः गुप्त रूप से किये जाते थे ताकि उनकी भनक किसी को न लग सके।

मोहन लाल का काबुल पहुंचने पर भव्य स्वागत हुआ और आपको वहां के राष्ट्रीय अलंकरण "दि आडर आफ द दुर्रानी ऐम्पायर" से विभूषित किया गया पर इसी बीच अंग्रेज़ों और अफगानों के मध्य सन् 1836 में युद्ध छिड़ जाने के कारण मोहन लाल को बड़े संकट का सामना करना पड़ा। अफ़गानों ने मोहन लाल को अंग्रेज़ों का पिट्ठू घोषित कर दिया और उन पर वहां के राजकाज में हस्तक्षेप करने का आरोप लगा कर उनको जेल में बन्द कर दिया। अफ़गानियों ने मोहन लाल को जेल में हर प्रकार की यातनाऐं दीं जिनसे उनका मनोबल टूट गया और उनका जीवन के कटु अनुभवों से प्रथम बार साक्षात्कार हुआ आप किसी प्रकार अपने सम्बन्धों का उपयोग करके जेल से रिहा हुए और आपने वहां से भारत के लिये प्रस्थान किया।

मोहन लाल का भारत पहुंचने पर फिरोज़पुर में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के

गवर्नर जनरल द्वारा एक नायक के समान अभिनन्दन किया गया। आप लगभग एक माह लुधियाना में ठहरे और अपने अनुज भ्राता पंडित केदार नाथ जुत्शी से काफी समय पश्चात मिले।

अंग्रेज़ों को अफ़गानों के साथ युद्ध करने में पराजय का मुंह देखना पड़ा और सन् 1842 में उनसे सान्धि करके पुनः दोस्त मोहम्मद खां को अफ़गानिस्तान का शासक स्वीकार करना पड़ा। यद्यपि मोहन लाल ने अपनी सामर्थ के अनुसार भरपूर प्रयत्न किया था कि अंग्रेज़ों का काबुल पर आधिपत्य स्थापित हो जाये पर किन्हीं कारणों से वह अपने इस उद्देश्य में सफल नही सिद्ध हो सके। इस विफलता का मुख्य रूप से मोहन लाल की जीवन पद्धति पर बड़ा प्रतिकूल असर पड़ा। क्योंकि इसमें उनका अपना निजीधन काफी मात्रा में व्यय हो गया था। और जिसका भुगतान ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा अंग्रेज़ रेजिडेन्ट मेजर जार्ज बोर्डफुट के अड़ियल रवैये के कारण नहीं किया गया। क्योंकि यह अंग्रेज़ अधिकारी मोहन लाल की तीव्रगति से बढ़ती हुई लोकप्रियता से रूष्ट था और उनसे व्यक्तिगत रूप से कुछ खुन्दक रखता था। मोहन लाल ने उसके इस प्रकार के व्यवहार से निराश होकर ईस्ट इण्डिया कम्पनी से अपना त्यागपत्र दे दिया और अपने को पूर्ण रूप से स्वतंत्र कर लिया।

कुछ माह विश्राम करने के पश्चात मोहन लाल ने 18 जुलाई सन् 1844 को अपनी इंग्लैण्ड की यात्रा प्रारम्भ की। आपने इस यात्रा के दौरान अनेक देशों का भ्रमण किया जिनमें आप मुख्य रूप से ऐडेन, मिस्र, ऐलेक्जेन्ड्रिया, माल्टा होते हुए सन् 1844 के सितम्बर माह में लन्दन पहुंचे जहां आपके मित्रों ने आपकी बड़ी आवभगत की। आपको लन्दन के बेड फोर्ड होटल में ठहराया गया। आप वहां ईस्ट इण्डिया कम्पनी के उच्च अधिकारियों से भी मिले। माहारानी विक्टोरिया ने आपको भोज पर बकिंगघम पैलेस में आमंत्रित किया आपने तदपश्चात स्काटलैण्ड तथा आयरलैण्ड का भी व्यापक भ्रमण किया।

मोहन लाल ने वहीं से सन् 1845 में फिर जर्मनी और बेल्जियम की यात्रा की। आपके जर्मनी में प्रवास के दौरान वहां के प्रोसिया के शासक फ्रेडरिक विलियम्स चतुर्थ ने आपको स्वर्ण जड़ित एक स्मृतिका भेंट की और आपका काफ़ी आदर और सम्मान किया। आपने लगभग 2 वर्ष लन्दन में प्रवास किया और वहां से सन् 1846 में पुनः भारत वापस लौट आये। आपको ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने लगभग 10000 रूपये वार्षिक की पेंशन स्वीकृत कर दी।

मोहन लाल भारत वापस आने के पश्चात लगभग 6 वर्ष लुधियाना में एक शाही ठाट बाट के साथ रहे और आपने जम कर अय्याशी की। आप हर समय बाज़ारू औरतों के जमघट से घिरे रहते थे और उन पर अपने रूपये दिल खोल कर लुटाते थे। आप वहां से अपनी तबियत भर जाने के पश्चात सन् 1852 में इलाहाबाद चले गये। आपने कुछ वर्ष कलकत्ते में भी व्यतीत किये जो उस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी की राजधानी हुआ करता था।

आपका बहुत ही आकर्षक व्यक्तित्व था इस नाते स्त्रियां आपसे बहुत शीघ्र प्रभावित हो जाती थीं और अपना दिल आपको प्रथम दृष्टि में ही दे बैठती थीं जिसका आपने अपने जीवन काल में पूरा लाभ लिया। आप जिस देश का भ्रमण करने गये वहां के चोटी के परिवारों की लड़कियों के साथ आपने अपने मधुर सम्बन्ध स्थापित किये। आपने इस प्रकार कुल 17 विवाह विभिन्न देशों की लड़कियों के साथ किये पर आपका विवाह अपनी बिरादरी में नहीं हो सका क्योंकि आपके परिजनों तक ने आपका परित्याग कर दिया था और आपसे हर प्रकार के सम्बन्ध तोड़ लिये थे। आपको अन्त में विवश होकर इस्लाम धर्म की शरण लेनी पड़ी और आप मुसलमान बन गये। आपका मुस्लिम नाम आग़ा हसन जान था। आपने फिर हैदरी बेगम नाम की एक मुस्लिम महिला के साथ निकाह फरमाया जो दिल्ली के मिर्ज़ा शेख मोहम्मद खां की भतीजी थी।

आप निकाह करने के पश्चात अपने परिवार के साथ दिल्ली में निवास करने लगे थे जहां आपकी अनेक पैतृक हवेलियां थीं। सन् 1857 की क्रान्ति में क्रान्तिकारियों ने आपके आवास पर आक्रमण कर दिया क्योंकि वह आपको अंग्रेज़ो का मुख़बिर समझते थे। आपके कुछ परिचितों ने किसी प्रकार आपको क्रान्तिकारियों के आक्रमण से बचा कर एक सुरक्षित स्थान तक पहुंचाया पर क्रान्तिकारियों ने आपकी हवेली को लूट पाट करने के पश्चात ध्वस्त कर दिया। आपका सन् 1877 में लगभग 65 वर्ष की आयु में दिल्ली के आज़ादपुर मोहल्ले में निधन हो गया जो दिल्ली पानीपत मार्ग पर स्थित है। आपके पार्थिव शरीर को मुस्लिम रीति रिवाज के अनुसार वहीं निकट लाल बाग़ में सुपुर्द खाक कर दिया गया। आप अपने पीछे पांच विधवाएं, चार पुत्र और पांच विवाहित पुत्रियां छोड़ गये।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने आपके कार्यकलापों से प्रभावित होकर अपनी आत्मकथा में लिखा है कि आप यदि 100 वर्ष पश्चात जन्म लेते तो आप

बहुत ऊँचे शिखर तक पहुंचते जो कदाचित एक रूढ़िवादी समाज में उस समय सम्भव नहीं था।"

मोहन लाल एक चिंतक, विचारक, कूटनीतिज्ञ तथा देशाटन प्रेमी व्यक्ति के साथ साथ एक कुशल लेखक भी थे। आपने अनेक पुस्तकें और अपने संस्मरण लिखे हैं जो आज भी विभिन्न पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं। आपने अपने मित्र अफगानिस्तान के शासक दोस्त मोहम्मद खां पर दो खण्डों में एक पुस्तक लिखी है जो वास्तव में आपकी सशक्त लेखिनी को स्वयं दर्शाती है। किसी उर्दू के शायर की निम्नलिखित पंक्तियां इस संदर्भ में बहुत ही अर्थपूर्ण प्रतीत होती हैं।

"गुलों में अब वह महक नहीं है।
न ही हवा में अब वह ताज़गी है
चमन कुछ ऐसा बदल गया है
जहां हमारा गुज़र नहीं है।"



एक उत्कृष्ट सामाजसेविका तथा कर्मयोगिनी

डॉ० (श्रीमती) जगत मोहिनी ठुस्सू



14 सितम्बर सन् 1989 को पंडित टीका लाल टपिलू की पाकिस्तान समर्थित सशस्त्र आतंकवादियों द्वारा श्रीनगर में उनके आवास के निकट नृशंस हत्या कर दिये जाने के उपरान्त सम्पूर्ण कश्मीर घाटी में भय और आतंक के वातावरण का प्रादुर्भाव हुआ और धरती का स्वर्ग कही जाने वाली देव भूमि में निर्दोष व्यक्तियों की निर्मम हत्याओं और असहाय महिलाओं के बलात्कार का दौर आरम्भ हुआ। जिसके लिये वहां का कश्मीरी पंडित समुदाय एक शक्तिशाली संगठन तथा उचित नेतृत्व के आभाव में डट कर सामना करने के लिये मानसिक रुप से बिलकुल तैयार नहीं था। अतः उसको अपना सब कुछ त्याग कर अपनी तथा अपने धर्म की रक्षा के लिये विवश होकर वहां से देश के अन्य अंचलों में पलायन करना पड़ा। पर हर समुदाय में हर व्यक्ति एक समान नहीं होता है। कुछ ऐसे भी व्यक्ति होते हैं जो इस भेड़ चाल में क़तई विश्वास नहीं करते हैं। और बिना अपना साहस खोये हुए कठिन परिस्थितियों का दृढ़ता पूर्वक मुक़ाबला करते हैं और उन पर विजय पाने का प्रयास करते हैं। ऐसी ही एक उत्कृष्ट समाजसेविका तथा कर्मयोगिनी डॉ० (श्रीमती) जगत मोहिनी ठुस्सू हैं जिन्होंने अपने आत्मबल और विश्वास से इस आतंकवाद का डट कर सामना किया और बिरादरी के ध्वज को विकट परिस्थिति में भी कश्मीर घाटी में पूरे गर्व के साथ अपने निष्काम कर्म की भावना से उच्चतम शिखरों तक फ़हराये रखा। आपने आपसी प्रेम और मानवता की भावना को सर्वोच्च प्राथमिकता दी और जनमानस को यही संदेश दिया कि समाज का उत्थान केवल इन्हीं आदर्शों और मूल्यों पर आधारित होता है जो मनुष्य इनको अपने जीवन में आत्मसात कर लेता है फिर उसे इस संसार में किसी का भय नहीं सताता और उसका कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता।

इसी मूल मंत्र के कारण डॉ0 जगत मोहिनी ने समस्त घाटी में न केवल आदर और सम्मान पाया अपितु हर व्यक्ति के हृदय में अपने लिये एक विशिष्ट स्थान बना लिया और सब उनको प्रेम तथा श्रद्धाभाव से मम्मी जी के सम्बोधन से पुकारने लगे।

डॉ0 जगत मोहिनी के पूर्वज दीवान अयोध्या प्रसाद ठुलल पंजाब राज के माहाराजा रंजीत सिंह (1801–1839) के शासन काल में उनकीं फ़ौज–ए–ख़ास में एक बक्शी के पद पर नियुक्त थे और आपका कार्य सैनिकों को वेतन बांटना था। डॉ0 जगत मोहिनी के पिता पंडित राजेन्द्र प्रसाद अटल ब्रिटिश शासन काल में रेल विभाग में एक उच्च अधिकारी हो गये थे। आपके पिता का नाम पंडित शारिका प्रसाद अटल था। आप लाहौर में देहली गेट मुहल्ले में अपनी पैतृक हवेली में रहते थे। आप सन् 1946 में रेलवे के चीफ़ अकाउंट्स अफ़िसर के पद से सेवानिवृत्त हुए। आपका विवाह लाहौर के शालिनीं गेट के निवासी पंडित शम्भू नाथ पंडित की सुपुत्री रतन रानी के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके चार पुत्र क्रमशः आनन्द कुमार, चांद कुमार, पुष्कर रतन तथा जगदीश रतन और दो पुत्रियां जगत मोहिनी और मनमोहिनी थीं।

आपके सबसे बड़े पुत्र पंडित आनन्द कुमार अटल रेलवे में एक उच्च अधिक़ारी हो गये थे जिनका विवाह सुश्री राधा राजदान के साथ सम्पन्न हुआ था।

आपके दूसरे पुत्र डॉ0 चांद कुमार अटल अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात दिल्ली की रीजिनल रिसर्च लैब के निदेशक हो गये थे। जिनका विवाह श्रीनगर के निवासी दीवान पुष्कर नाथ मदन की सुपुत्री सरोज मदन के साथ सम्पन्न हुआ था।

आपके तीसरे पुत्र डॉ0 पुष्कर रतन अटल मेरठ के मेडिकल कालेज के प्रिन्सपल हो गये थे जिनका विवाह श्रीनगर के निवासी पंडित एम0एन0 भान की सुपुत्री सुश्री इन्दिरा भान के साथ सम्पन्न हुआ था।

आपके चौथे और अन्तिम पुत्र डॉ0 जगदीश रतन अटल थे जो दिल्ली के कोऔपरेटिव विभाग में निदेशक थे जिनका विवाह श्रीनगर के प्रसिद्ध रैनावाड़ी के जलाली परिवार में पंडित दीनानाथ जलाली जो माहाराजा हरि सिंह के निजी सचिव थे की पुत्री सुश्री शीला जलाली के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित राजेन्द्र प्रसाद अटल की सबसे छोटी पुत्री डॉ0 मनमोहिनी अटल

का विवाह दिल्ली में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग में कार्यरत पंडित जगत नाथ कौल के साथ सम्पन्न हुआ था।

डॉ0 जगत मोहिनी ठुस्सू का जन्म 11 नवम्बर सन् 1923 को लाहौर के देहली गेट मुहल्ले में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा बम्बई (मुम्बई) के सान्टा क्रूज़ में स्थित सेन्ट टेरेसा कान्वेन्ट में सम्पन्न हुई। जहां आप लगभग 3 वर्ष की आयु में लाहौर से सन् 1926 में आयीं थीं। आपने फिर बम्बई से लाहौर वापस आने के पश्चात वहां सेक्रेड हार्ट कान्वेन्ट में प्रवेश लिया जहां से आपने बहुत अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने के पश्चात लाहौर के राजकीय महिला विद्यालय में सन् 1937 में प्रवेश लिया जो उस समय पंजाब विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था। इस कालेज से आपने सन् 1939 में एफ0एस–सी की परीक्षा प्रथम श्रेणीं में उत्तीर्ण की आपने तदपश्चात लाहौर के किंग ऐडवर्ड मेडिकल कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने एम0बी0बी0एस0 की परीक्षा सन् 1944 में उत्तीर्ण की। आपने अपनी डाक्टरी की पढ़ाई समाप्त करने के बाद कुछ समय लाहौर के मायो अस्पताल में एक शोधकर्ता के रुप में मेडिसिन विभाग में कार्य किया आपने उसके पश्चात लाहौर के लेडी औरसन अस्पताल में तथा कुछ वर्ष वहीं के कपूर मेटरनिटी अस्पताल में कार्य किया जिससे आपको विभिन्न रोगों से ग्रस्त रोगियों के उपचार का व्यापक अनुभव प्राप्त हुआ।

डॉ0 जगत मोहिनी ने दिल्ली के प्रसिद्ध लेडी हारडिंग मेडिकल कालेज में उपचार से सम्बन्धित आधुनिक औषधियों के प्रयोग का विधिवत अध्ययन किया तथा प्रशिक्षण लिया जिससे आपको चिकित्सा के क्षेत्र में रोगियों के उपचार के लिये हो रही अति आधुनिक विधियों का सविस्तार ज्ञान प्राप्त हुआ जो बाद में आपको अपने व्यवसाय में बहुत ही लाभकारी सिद्ध हुआ।

डॉ0 जगत मोहिनी का विवाह सन् 1946 में डॉ0 ओंकार नाथ ठुस्सू के साथ सम्पन्न हुआ जिन के पिता पंडित मनोहर लाल ठुस्सू कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के टंकीपुरा मुहल्ले के दाडीकदल के निवासी थे और माहाराजा प्रताप सिंह (1885–1925) के शासन काल में रियासत के स्वास्थ्य विभाग में निदेशक के पद पर नियुक्त थे। डॉ0 ओंकार नाथ ठुस्सू का जन्म 14 नवम्बर सन् 1911 को हुआ था और आपने सन् 1931 में लाहौर के किंग ऐडवर्ड मेडिकल कालेज से अपनी एम0बी0बी0एस0 की परीक्षा ट्रोपिकल मेडिसिन में उत्तीर्ण की थी।

डॉ0 जगत मोहिनी ने अपने विवाह के पश्चात श्रीनगर के बर–बर शाह मुहल्ले में स्थित रतन रानी अस्पताल के मेडिकल सुपरिन्टेन्डेन्ट के पद का कार्यभार संभाला जिसे डॉ0 ओंकार नाथ ठुस्सू ने अपनी पहली पत्नी श्रीमती रतन रानी ठुस्सू की मधुर स्मृति में स्थापित किया था। श्रीमती रतन रानी ठुस्सू की सन् 1942 में खीर भवानी मन्दिर के भीषण अग्नि काण्ड में युवावस्था में ही मृत्यु हो गयी थी जहां वह पूजा–अर्चना के लिये अकेले गयीं थी क्योंकि उस समय उनके पति डॉ0 ओंकार नाथ ठुस्सू जम्मू के सरकारी अस्पताल में कार्यरत थे और किन्हीं अपरिहार्य कारणों से अपनी प्रथम पत्नी के अन्तिम संस्कार में नहीं पहुॅच पाये थे जिसका उनको जीवन पर्यन्त दुःख रहा आपने तभी यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि आप एक ऐसे स्मारक का निर्माण करवायेंगें जो आपकी प्रथम पत्नी की मधुरस्मृति को सदा जीवित रखे और उसी उद्देश्य की पूर्ती के लिये आपने रतन रानी अस्पताल की सन् 1946 में स्थापना की।

डॉ0 जगत मोहिनी ने रोगियों का दुःख दर्द भलि भाति समझने तथा उनसे आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने के लिये सर्वप्रथम कश्मीरी भाषा का अध्ययन प्रारम्भ किया और अपने कठिन परिश्रम एवं लगन द्वारा कश्मीरी भाषा के ज्ञान पर बहुत शीघ्र पूर्ण दक्षता प्राप्त करली। आपने तदपश्चात रोगियों को और अधिक आधुनिक उपचार के सनसाधन उपलब्ध कराने के लिये रतन रानी अस्पताल का विकास एवं विस्तार किया जिसके अन्तर्गत विभिन्न नये विभाग स्थापित किये गये और अस्पताल में अति आधुनिक उपकरणों की आपूर्ती की ताकि अच्छे से अच्छा उपचार सम्भव हो सके और अस्पताल में किसी भी प्रकार के रोगों का निदान करने में कोई व्यवधान न उत्पन्न हो। यह वास्तव में आपका चिकित्सा के क्षेत्र में उस समय एब बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान था।

डॉ0 जगत मोहिनी ने अपने विवाह के लगभग एक वर्ष पश्चात 9 मार्च सन् 1947 को एक कन्या को जन्म दिया जिसका नाम सीमा ठुस्सू रखा गया। आपको लगभग 2 वर्ष 4 माह पश्चात 19 जुलाई सन् 1949 को फिर एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ जिसका नाम अशोक ठुस्सू रखा गया।

डॉ0 जगत मोहिनी ने अपने प्रयासों से कश्मीर घाटी के दुर्गम और सुदूर क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार किया जहां तक पहुंच पाना उस समय बहुत ही कठिन कार्य हुआ करता था। आपने बडगाम, शालीमार तथा पंथा चौक जैसे क्षेत्रों में उचित स्वास्थ्य सेवाओं का प्रबन्ध किया ताकि वहां के रोगी इन सेवाओं

का लाभ उठा सकें और उन्हें इधर उधर भटकना न पड़े। आपने तालाब खा साहिब, कांगन, हरवन, मुलख़क जैसे स्थानों पर समय–समय पर चिकित्सा के शिविरों का भी आयोजन किया ताकि वहीं पर रोगियों का उपचार सम्भव हो सके। आपने वयान सीमेंट फैक्ट्री के कर्मचारियों तथा बी0एस0एफ0 के डी0आई0जी0 के मुख्यालय के अस्पताल में सप्ताह में दो बार अपने अस्पताल के कुशल चिकित्सकों के दल द्वारा स्वास्थ्य सेवायें प्रदान करने का कई वर्षों तक कार्य किया। आप वार्षिक अमरनाथ यात्रा के अवसर पर तथा विभिन्न धार्मिक स्थलों पर आयोजित धार्मिक अनुष्ठानों के अवसर पर निरन्तर अपने चिकिस्कों के दल कई वर्ष भेजती रहीं ताकि किसी भी प्रकार की आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त डाक्टरी सहायता उपलब्ध करायी जा सके। और किसी भी भक्त की उपयुक्त उपचार की सहायता समय पर न मिलने के कारण मृत्यु न हो जाये।

डॉ0 जगत मोहिनी अपने रतन रानी अस्पताल के प्रांगण में हर वर्ष बहुत बड़े पैमाने पर "बेबी–शों" आयोजित करती थीं जिनमें अनेक गणमान्य नागरिक भाग लेते थे। यह कार्यक्रम लोगों में स्वास्थ और स्वच्छता के प्रति जागरुकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से किया जाता था जिसमें रियासत के स्वास्थ्य विभाग के उच्च अधिकारीगण जनता को स्वास्थ्य सेवाओं की विस्तृत जानकारी देतेथे और जिसकी अध्यक्षता अधिकतर तत्कालीन मुख्य मंत्री शेख़ मोहम्मद अब्दुल्ला स्वंय करते थे।यह वार्षिक "बेबी–शो" बड़े धूम–धाम के साथ अबोधगति से सन् 1989 तक चलता रहा पर उसके पश्चात कश्मीर घाटी में बढ़ते हुऐ आतंकवाद के कारण सुरक्षा की दृष्टि से इस वार्षिक भव्य आयोजन को सन् 1990 से स्थगित करना पड़ा।

सन् 1953 में रियासत के तत्कालीन प्रधान मंत्री शेख़ मोहम्मद अब्दुल्ला ने श्रीनगर के राम बाग़ मुहल्ले में स्थित अभेयानन्द ब्लाईन्ड होम की व्यवस्था का कार्यभार डॉ0 जगत मोहिनी ठुस्सू और उनके पति डॉ0 ओकार नाथ ठुस्सू को सुपुर्द कर दिया। इस दम्पति ने लगभग 5 वर्ष कठोर परिश्रम करके इस संस्थान की बिगड़ी हुई स्थिति को सुधार कर उसमें एक नये जीवन का संचार किया जो पुनः आर्थिक सन–साधनों के अभाव में सन् 1970 के आसपास बेगम शेख अब्दुल्ला के संरक्षण में दे दिया गया ताकि प्रदेश सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त कर उसके सवासियों को और अधिक सुख–सुविधा के साधन उपलब्ध कराये जा सकें।

सन् 1965 में डा0 जगत मोहिनी ने जनाब बेगम डा0 नासिरा अहमद शाह तथा डा0 ताहिरा मिर्ज़ा के सहयोग से कश्मीर घाटी में टुबरक्लोसिस ऐसोसिएशन की स्थापना की इस एसोसिएशन के तत्वावधान में एक वोकेशनल सेन्टर की स्थापना की गयी जिसमें इस रोग से पीड़ित महिलायें अपना पूर्ण उपचार हो जाने के पश्चात कुछ छोटा मोटा कार्य करके अपना जीवकोपार्जन कर सकें। इस सेन्टर को चलाने के लिये वित्तीय सहायता जम्मू–कश्मीर के तत्कालीन मुख्य मंत्री गुलाम मोहम्मद सादिक़ द्वारा मुख्य मंत्री कोष से प्रदान की जाती थी। रियासत में इस प्रकार के सेन्टरों को चलाने की ज़िम्मेदारी बाद में डॉ0 ताहिरा मिर्ज़ा को सौंप दी गयी जिन्होंने अपने जीवन के अन्तिम समय तक बहुत ही सेवाभाव से यह कार्य सम्पादित किया।

डॉ0 जगत मोहिनी की पुत्री डॉ0 सीमा ठुस्सू का दिल्ली के लेडी हार्डिंग मेडिकल कालेज से एम0बी0बी0एस0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात लगभग 22 वर्ष की आयु में सन् 1969 में अकस्मात निधन हो गया जिससे डा0 जगत मोहिनी को बहुत ही गहरा धक्का लगा और उनकी रतन रानी अस्पताल को एक अत्यधिक आधुनिक चिकित्सा केन्द्र के रुप में विकसित करने की योजना मूर्तिरुप नहीं ले सकी।

सन्1987 कें मई माह में डॉ0 ओंकार नाथ ठुस्सू की लगभग 77 वर्ष की आयु में मृत्यु हो जाने के पश्चात डॉ0 जगत मोहिनी के जीवन का ध्येय एक दम बदल गया और आपने समाज सेवा और निष्काम कर्म को ही अपने जीवन का मुख्य लक्ष्य बनालिया। आपने सर्वप्रथम डॉ0 ओंकार नाथ हास्पिटल ट्रस्ट का नाम बदल कर डॉ0 ओंकार नाथ चैरिटेबिल ट्रस्ट कर दिया। ताकि और अधिक सेवा भाव सें रोगियों का उपचार उनसे बिना कोई फ़ीस लिये किया जा सके। और उनको हर प्रकार की स्वास्थ सम्बन्धी सेवायें निःशुल्क उपलब्ध कराई जा सकें। जो स्वयं एक बहुत बड़ा क्रान्तिकारी कदम था। आपने रतन रानी अस्पताल के प्रागण में अविवाहित महिलाओं के नवजात शिशुओं के पालन–पोषण की उचित व्यवस्था की जिनको प्रायः जन्म देने के पश्चात उनकी माताऐं समाज के भय से छोड़ कर चली जाती हैं। आपने इन बच्चों को निसन्तान दम्पतियों को गोद देने काभी प्रबन्ध किया।

डॉ0 जगत मोहिनी ने समाज के अन्य क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण कार्य किये। आपका शिक्षा के क्षेत्र में योगदान विशेष रुप से उल्लेखनीय है। आपने रैनावाड़ी

के विश्व भारती महिलाओं के प्रशिक्षण संस्थान को सुचारु रुप से चलाने के लिये एक प्रबंधक समीती का गठन किया। आप इस शिक्षण संस्था की लगभग 27 वर्ष तक अध्यक्षा रही और आपने सन् 1887 में अपने पति की मृत्यु के उपरान्त समयानुभाव के कारण अपना इस संस्था के अध्यक्ष पद से त्याग पत्र दे दिया। यह संस्था अब एक महत्वपूर्ण विद्यालय का रुप ले चुकी हैं जिसकी जम्मू, दिल्ली तथा नोयडा में शाखायें स्थापित हो चुकी हैं। यह कालेज डॉ0 कर्ण सिहं के संरक्षण में निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

डॉ0 जगत मोहिनी गोगी बाग़ में स्थित पब्लिक हाई स्कूल की प्रबंध समीती की भी अध्यक्ष रहीं जिसकी स्थापना श्रीनगर में जनाब मुख़्तार साहिब की स्मृति में की गयी थी। गणपतियार मन्दिर के प्रांगण में चल रहे विनायक मिडिल स्कूल की प्रबंध समीती में भी आप एक महत्वपूर्ण सदस्य थीं जिसको उसके प्रबंधक मण्डल नें सन् 1990 में आतंकवाद के कारण बन्द कर दिया।

डॉ0 जगत मोहिनी ने श्रीनगर में एक नर्सिंग स्कूल की सन् 1959 में स्थापना की जो चन्दीगढ़ के पी0एन0आइ0सी0 और भारतीय नर्सिंग कौंसिल से सम्बद्ध था। आप कश्मीर की रेड क्रास ऐसोसिएशन की आजीवन सदस्य हैं। आप पुलिस विभाग द्वारा गठित उस समीती की सन् 1989 तक सदस्य रहीं जो बलात्कार की शिकार या अन्य अत्याचारों से पीड़ित महिलाओं की उचित देखभाल के लिये गठित की गयी थी। आप रतन रानी अस्पताल के माध्यम से भी इस प्रकार की उपेक्षित महिलाओं को समाज में उचित स्थान दिलाने का प्रयास करती थीं ताकि वह अपना जीवन सम्मान पूर्वक निर्वाह कर सकें। बाद में जम्मू–कश्मीर की पुलिस के आग्रह पर इस प्रकार की महिलाओं की उचित देख भाल के लिए श्रीनगर में एक नारी निकेतन की स्थापना की गयी।

डॉ0 जगत मोहिनी ने समाज द्वारा तिरस्कृत की गयी महिलाओं के उचित पुनर्वास के लिये गनपतयार में एक सोशल रिफार्म बोर्ड का गठन किया जिसके द्वारा इस प्रकार की महिलाओं को वित्तीय सहायता प्रदान कर उनको आत्म निर्भर बनाने का कार्य होता था ताकि वह सम्मान पूर्वक अपना शेष्र जीवन व्यतीत कर सकें। आपने विभिन्न सामुदायिक केन्द्रों की भी स्थापना की जहां महिलाओं को विभिन्न हस्त शिल्प की वस्तुओं को निर्माण करने का प्रशिक्षण दिया जात था इसमें श्रीनगर के ख़य्याम चौक का इन्दिरा क्राफ्ट सेन्टर, रतन रानी अस्पताल का सीमा क्राफ्ट सेन्टर, पत्थर मस्जिद का व्यवसायिक प्रशिक्षण केन्द्र, तथा पशमीन शाल निर्माण करने का केन्द्र प्रमुख थे।

डॉ0 जगत मोहिनी कश्मीर की पंजाबी साहित्य सभा की संरक्षिका हैं। आप अखिल भारतीय महिला कान्फ्रेंस की कश्मीर ईकाई की महासचिव हैं। आपकी समाज सेवा के क्षेत्र में सैय्यद मीर क़ासिम के प्रदेश में शासन काल में बेगम ज़फ़र अली मुख्य संरक्षिका रहीं हैं। आप अखिल भारतीय महिलाओं के रोगों से सम्बन्धित संस्था की भी एक सक्रिय सदस्य हैं।

डॉ0 जगत मोहिनी सन् 1965 से सन् 1967 तक जम्मू–कश्मीर कांग्रेस पार्टी की महिला शाखा की सचिव रहीं। आप 1977 से कुछ वर्षों के लिये जम्मू–कश्मीर की जनता पार्टी की ईकाई की कोषाध्यक्ष रहीं। आप प्रदेश की जनता पार्टी की महिला शाखा की कई वर्ष अध्यक्ष रहीं आपने सन् 1980 से राजनीति से एक प्रकार से सन्यास ले लिया और अपने को पूर्ण रुप से जनता की सेवा के प्रति समर्पित कर दिया आपने असहाय और पीड़ित व्यक्तियों की उचित सहायता करना अपना परम धर्म माना और बिना किसी भेद भाव के उनकी हर प्रकार से सेवा की। जिसके कारण आप सम्पूर्ण कश्मीर घाटी में अम्मी जी के नाम से प्रसिद्ध हैं और हर व्यक्ति के लिये एक आदर और श्रद्धा का पात्र हैं। कश्मीर घाटी से अब लगभग सभी कश्मीरी पंडित परिवार पलायन कर चुके हैं केवल आप ही उसका एक अपवाद है जो 80 वर्ष की आयु में भी निर्भीक होकर घाटी में आतंकवाद का सामना करते हुए जनमानस में प्रेम, शान्ति और मानवता का संदेश देने में संलग्न हैं। आपका दृढ़ विश्वास है कि मानव प्रेम विश्व के समस्त धर्मों से श्रेष्ठ है जो मनुष्य को हर प्रकार के संकट का दृढ़ता पूर्वक सामना करने का आत्मबल प्रदान करता है। और जिस व्यक्ति में आत्मबल नहीं है उसका इस संसार में जीवित रहना व्यर्थ है। डॉ0 जगत मोहिनी के पुत्र अशोक ठुस्सू यूरोसौफ़्ट इन्टरनैशनल लिमिटेड के चेयरमैन और प्रबन्ध निदेशक हैं। आपका विवाह कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी पंडित त्रिलोकी नाथ सर्राफ जो कलकत्ते में कई वर्षों तक काश्मीर ट्रेड कमिश्नर रहे की पौत्री तथा पंडित विश्वनाथ सर्राफ की पुत्री सुश्री प्रोमिला सर्राफ के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पत्ति के दो पुत्रियां रीना और निशा हैं। जिनमें रीना का विवाह एक अन्ना परिवार में हुआ है। अशोक ठुस्सू आजकल सी–38, कैलाश अपार्टमेन्ट्स, लाला लाजपत राय मार्ग नई दिल्ली–110 048 पर निवास कर रहे हैं। किसी उर्दू के शायर ने कुछ इस प्रकार कहा है।

"राह खुद बढ़ कर बताती है निशान–ए– मंज़िल
चलने वाला भी तो हो गर्दिशे अय्याम के साथ"

एक अनूठा तथा विलक्षण कलाकार

अभिनेता चन्द्रमोहन वातल



भारतीय सिनेमा के लगभग 90 वर्ष के गौरवशाली इतिहास में अपने अनूठे तथा प्रभावशाली अभिनय द्वारा सिने प्रेमियों पर अपनी अमिट छाप छोड़ने वाले विलक्षण अभिनेताओं की एक लम्बी परम्परा रहीं है। जिन्होने अपनी अभिनय करने की क्षमता का न केवल विभिन्न फ़िल्मों में उच्च कोटि का प्रदर्शन किया अपितु अभिनय के कलात्मक पक्ष में नये कीर्तिमान स्थापित किये और अभिनेताओं की लम्बी श्रृंखला में अपने लिये एक विशिष्ट स्थान बनाया। उन्होने अपने कार्य के बल पर सिने प्रेमियों की अपार लोकप्रियता अर्जित की और उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा और सराहना पाई। ऐसे ही अभिनेताओं की अग्रणीं पंक्ति में एक नाम चन्द्रमोहन वातल का है जिन्होने अपने समय में अपने विलक्षण तथा चमत्कारिक अभिनय द्वारा फ़िल्म जगत मे न केवल एक खलनायक से लेकर एक नायक तक की सफ़ल यात्रा की अपितु फ़िल्म अभिनय के क्षेत्र में आंखों द्वारा अभिनय करने की एक बिलकुल नयी कला को जन्म दिया जिसके लिये आप आज भी स्मरण किये जाते हैं। आप अपने समय के नायक, खलनायक तथा चरित्र अभिनेता की तिहरी सफ़लता अर्जित करने वाले एक प्रसिद्ध कलाकार थे जिसने फ़िल्म जगत के इतिहास में एक नये अध्याय की रचना की।

चन्द्रमोहन वातल के पूर्वज पंडित चिन्तामन कौल वातल मूल रुप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी थे जो मुगल सम्राट औरंगज़ेब (1658–1707) के शासन काल में घाटी से निकल कर एक अच्छी नौकरी पा जाने की तलाश में उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र में आ गये तथा पहले लाहौर में और कुछ वर्ष पश्चात दिल्ली में निवास करते रहे। पंडित चिन्तामन कौल वातल के दो पुत्र थे जिनके नाम थे राम कृष्ण और सूरज भान।

पंडित राम कृष्ण वातल के भी दो पुत्र क्रमशः शिव प्रसाद और दुर्गा प्रसाद थे। जब कि आपके भ्राता पंडित सूरज भान वातल के केवल एक पुत्र कन्हैया लाल वातल थे।

पंडित शिव प्रसाद वातल के तीन पुत्र क्रमशः प्रान नाथ, बद्री प्रसाद और जिया लाल तथा तीन पुत्रियां थी। इनमें पंडित जिया लाल वातल कालान्तर में राजपूताना की भरतपुर रियासत के दीवान हो गये थे। आपके तीन पुत्र क्रमशः निरंजन लाल, श्याम लाल, तथा नरेन्द्र नाथ और पांच पुत्रियां थीं। जिनमें से एक पुत्री का विवाह बिरादरी के बुजुर्गों के अनुसार लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले के प्रख्यात उर्दू के शायर पंडित रतन नाथ दर 'सरशार' के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित प्रान नाथ वातल के पुत्र पंडित नन्द लाल वातल कालान्तर में भरतपुर के निकट की रियासत करौली के दीवान तथा जागीरदार हो गये थे। आपका विवाह दिल्ली की बाज़ार सीता राम के निवासी पंडित राधे कृष्ण सप्रू की पुत्री सुश्री जैना के साथ सम्पन्न हुआ था। भरतपुर रियासत के माहाराजा की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र वहां का शासक घोषित किया गया जिसके साथ पंडित नन्द लाल वातल को कुछ कटु अनुभव हुऐ और वह भरतपुर रियासत से अपने सम्बन्ध समाप्त कर के अपने परिवार सहित आगरा आ गये और वहां वकालत कर के अपने परिजनों का भरण पोषण करने लगे। आपकी दिल्ली की एक अदालत में एक मुक़दमें में बहस करते हुए अकस्मात ह्रदयगति रुक जाने के कारण मृत्यु हो गयी।

पंडित नन्द लाल वातल के दो पुत्र क्रमशः जगन्न नाथ सहाय वातल तथा मुकुट सहाय वातल तथा एक पुत्री बीना थीं जिनका विवाह अमृतसर निवासी पंडित अमरनाथ किचलू के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित मुकुट सहाय वातल का विवाह श्रीनगर के प्रसिद्ध मदन परिवार में हुआ था पर विवाह के कुछ वर्ष पश्चात आपकी पत्नी की मृत्यु हो गयी। आपने कलकत्ते में एक अंग्रेज़ की शिपिंग कम्पनी में नौकरी कर ली। आपने उस अंग्रेज़ की मृत्यु के पश्चात उसकी अंग्रेज़ पत्नी के साथ विवाह कर लिया और इस प्रकार उस शिपिंग कम्पनी के मालिक हो गये। पर प्रथम विश्व युद्ध में आपके दो जलयान पानी में डूब गये जिससे आपको काफ़ी क्षति हो गयी और कलकत्ते में आपकी साख समाप्त हो गयी। आप कलकत्ते से फिर चन्दरनगर चले गये जो फ्रांसिसियों के संरक्षण में था। आपकी कुछ वर्ष पश्चात वहां मृत्यु हो गयी।

पंडित नन्द लाल वातल की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र पंडित जगन्न नाथ सहाय वातल तथा उनके परिवार के अन्य सदस्य सन् 1900 के आसपास आगरा से एक अच्छी नौकरी की तलाश में इलाहाबाद आ गये जहां उस समय उनके ममेरे भाई डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू वकालत करते थे। यह वातल परिवार इलाहाबाद के लूकरगंज मुहल्ले में एक किराये का मकान लेकर रहने लगा। पंडित जगन्न नाथ सहाय वातल का विवाह तत्कालीन सेन्ट्रल प्रोविन्सेस (पुच्ची) की नरसिहंपुर रियासत के जागीरदार पंडित माधो प्रसाद मुशरान की बहन सुश्री रूपकिशोरी के साथ सम्पन्न हुआ था। पंडित जगन्न नाथ सहाय वातल सन् 1904 में डॉ0 (सर) तेजबहादुर सप्रू तथा सर कैलास नारायण हाक्सर जो उस समय ग्वालियर रियासत के शासक माहाराजा माधोराव सिंधिया प्रथम के दरबार में मंत्री थे के प्रयासों से ग्वालियर रियासत के जागीर विभाग में नियुक्ति पा गये और अपने परिवार सहित इलाहाबाद से ग्वालियर चले गये। आपका विवाह नरसिंहपुर रियासत के निवासी पंडित गणेश प्रसाद मुशरान की सुपुत्री सुश्री रूपकिशोरी (पुच्ची) मुशरान के साथ सम्पन्न हुआ था। इस दम्पति की चार सन्ताने थी जिनमें चन्द्रमोहन अपने भाई–बहनों में सबसे छोटे थे।

चन्द्रमोहन की सबसे बड़ी बहन सुशीला थीं जिनका विवाह जोधपुर रियासत के प्रधानमंत्री सर सुखदेव प्रसाद काक के सुपुत्र पंडित धर्म नारायण काक के साथ सम्पन्न हुआ था। चन्द्रमोहन के अग्रज भ्राता पंडित मन मोहन नाथ वातल का विवाह ग्वालियर रियासत के निवासी पंडित राजाराम जुत्शी की सुपुत्री सुश्री लाडली शुरी जुत्शी के साथ सम्पन्न हुआ था। चन्द्रमोहन की दूसरी बड़ी बहन् लीला का विवाह लाहौर के निवासी डॉ0 सिद्ध नाथ कौल के साथ होना निश्चित हुआ था विवाह के एक सप्ताह पूर्व नाश्ता बनाते समय वस्त्रों में आग लग जाने के कारण उनकी अकाल मृत्यु हो गयी और वह शुभ कार्य सम्भव नहीं हो सका।

चन्द्रमोहन वातल का जन्म सन् 1905 में तत्कालीन सेन्ट्रल प्रोविन्सेस तथा बरार (मध्य प्रदेश) की नरसिंहपुर रियासत में अपने मामा पंडित माधो प्रसाद मुशरान के आवास में हुआ था। आपका पूरा नाम पंडित चन्द्रमोहन नाथ वातल था पर आप अपने मित्रों और परिजनों में चन्दू के नाम से जाने जाते थे। आप अपने माता पिता की सबसे छोटी सन्तान थे इस नाते सबको अधिक प्रिय थे। जब आप काफ़ी अल्प आयु के थे तो आपकी मां का स्वर्गवास हो गया और

आपका लालन–पालन आपके नाना और नानी की देख–रेख में नरसिंहपुर में हुआ। बचपने से ही अधिक लाड़–प्यार के कारण आपका स्वभाव नटखट, चुलबुला और मस्त मौला प्रकृति का हो गया जिसके कारण आप पढ़ाई पर कम और हुड़दंग करने पर अधिक ध्यान देने लगे जिसका परिणाम यह हुआ कि आप मैट्रिकुलेशन की परीक्षा नहीं उत्तीर्ण कर पाये। पर चूंकि आप एक सम्भ्रान्त परिवार के सदस्य थे और एक आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी थे जिसको खेलों में अधिक रूची थी इस नाते आपकी अंग्रेज़ अधिकारियों में अच्छी घुस पैठ थी। आप नरसिंहपुर के अंग्रेज डिप्टी कमिश्नर की पत्नी के साथ नित्य सायंकाल उसके बंगले में टेनिस खेलते थे।

चन्द्रमोहन के पिता पंडित जगन्न नाथ सहाय वातल एक गठे हुए शरीर वाले व्यक्ति थे जिन्हें व्यायाम का बहुत शौक था। वह नित्य दंड–बैठक लगाते थे और मुगदर भांजते थे। आपको अंग्रेज़ी, उर्दू तथा फ़ारसी भाषा का अच्छा ज्ञान था और आपने मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। आप की लगभग 53 वर्ष की आयु में सन् 1923 में लखनऊ के किंग जार्ज मेडिकल कालेज में मृत्यु हो गयी जहां आपको यकृत के रोग के उपचार के लिये भर्ती कराया गया था उस समय चन्द्रमोहन की आयु केवल 18 वर्ष थी और उनके अग्रज भ्राता पंडित मनमोहन नाथ वातल उनसे लगभग आयु में 10 वर्ष बड़े थे जिन्हें वह भाई साहब कहते थे।

चन्द्रमोहन ने अपने पिता की मृत्यु के पश्चात सन् 1923 से सन् 1927 तक का समय अधिकतर या तो अपने ननिहाल नरसिंहपुर में या फिर अपने अग्रज भ्राता पंडित मनमोहन नाथ वातल के साथ ग्वालियर और उज्जैन में व्यतीत किया जो ब्रिटिश शासन काल में डाक–तार विभाग में इन्सपेक्टर नियुक्त हो गये थे और जिनका विभिन्न नगरों में स्थानान्तरण होता रहता था।

चन्द्रमोहन के अग्रज भ्राता ने अपने प्रयासों द्वारा आपको ग्वालियर की जे0सी0 मिल्स में 15 रुपये माहवार की एक नौकरी दिलायी जिसको आपने दो दिन पश्चात यह कह कर छोड़ दिया कि आप मिल के भोपू के अनुसार कार्य करने के लिये मानसिक रुप से बिल्कुल तैयार नहीं है।

चन्द्रमोहन को पुनः पंडित इक़्बाल नारायण हाक्सर के प्रयास से ग्वालियर रियासत की सिंधिया रेलवे के तार विभाग में नौकरी मिल गयी जिसके प्रशिक्षण के लिये चन्द्रमोहन को पंडित इक़्बाल नारायण हाक्सर ने जो उस समय सिंधिया

रेलवे के जनरल मैनेजर थे कलकत्ते (कोलकाता) भेजा जहां से 3 माह का प्रशिक्षण पूरा करने के पश्चात 25 रुपये माहवार पर चन्द्रमोहन की नियुक्ति हुई पर इससे भी चन्द्रमोहन को बहुत अधिक संतुष्टि नहीं हुई और लगभग 3 माह कार्य करने के पश्चात आपने यह नौकरी यह कह कर छोड़ दी कि 100 रुपये माहवार से कम की नौकरी करना आपके लिये अपमानजनक है। इस घटना के पश्चात चन्द्रमोहन ने एक यायावर का जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ कर दिया। वह नौकरी की तलाश में ग्वालियर और नरसिंहपुर से कब और कहां निकल जाते थे इसकी कोई सूचना उनके परिजनों को नहीं रहती थी। जहां पर भी उनको रुपयों की आवश्यकता अनुभव होती वह वहां से पोस्टकार्ड लिख कर रुपये मंगा लेते थे और अपना जीवन निर्वाह करते थे।

चन्द्रमोहन सन् 1927 में अपने अग्रज भ्राता पंडित मनमोहन नाथ वातल से मिलने उज्जैन गये जो उस समय वहां नियुक्त थे और उनसे पैतृक सम्पत्ति में से उनका हिस्सा देने का आग्रह किया पंडित मनमोहन नाथ वातल ने पैतृक सम्पत्ति का बटवारा कर उनको उनका हिस्सा दे दिया जिसको लेकर चन्द्रॅमोहन एक प्रकार से अपने परिजनों का परित्याग करके चले गये जहां से आपके संघर्षमय जीवन की कहानी प्रारम्भ होती है। चन्द्रमोहन को अपने इस संरक्षण विहीन तथा विद्रोही जीवन में अनेक कठिनाईयां झेलनी पड़ी और चुनौतियों का सामना करना पड़ा। आपने क्रमशः मथुरा के एक छविगृह में जीवकोपार्जन के लिये मैनेजर के पद पर कार्य किया तद्पश्चात बनारस (वाराणसी) के एक सिनेमा घर में तथा नैनीताल के एक थियेटर में कार्य किया। आप सन् 1931 के आसपास नैनीताल से दिल्ली चले गये और वहां चांदनी चौक में स्थित एक सिनेमा घर के मैनेजर हो गये जिसका मालिक फिल्मों के दिल्ली तथा उत्तरी भारत के क्षेत्रों में वितरण का कार्य भी करता था।

यह सेठ अपने फ़िल्म वितरण के कार्य के सम्बन्ध में चन्द्रमोहन को नियमित रुप से नयी फ़िल्मों को क्रय करने के लिये कोल्हापुर, पूना और बम्बई (मुम्बई) भेजता था। चूंकि यह कार्य चन्द्रमोहन पूरी निष्ठा और ईमानदारी के साथ करते थे। और अपनी बातचीत से फ़िल्मों को क्रय करने में सेठ के रुपयों की काफ़ी बचत करते थे अतः वह सेठ के विश्वास पात्र बन गये थे। चन्द्रमोहन की इसी व्यवसाय से सम्बंधित यात्राओं में एक बार सन् 1933 में कोल्हापुर में उस समय की प्रभात फिल्म कम्पनी के निर्देशक वी0 शान्ताराम से भेंट हो गयी जो

चन्द्रमोहन के व्यक्तित्व और बातचीत करने के ढ़ंग से बहुत प्रभावित हुऐ और उनको अपनी फ़िल्म कम्पनी में 100 रुपये माहवार पर कार्य करने का निमंत्रण दिया। चन्द्रमोहन को उस समय फिल्मों में अभिनय करना कुछ अटपटा सा लगा क्योंकि तब तक सम्भ्रान्त परिवारों में फिल्मों में कार्य करना कुछ अच्छा नहीं समझा जाता था और फिल्मों में कार्य करने वाले अधिकतर समाज में भांड भगतिये कहलाते थे। इसी बात को ध्यान में रखकर चन्द्रमोहन ने वी0 शान्ताराम के उनकी फिल्म में काम करने के प्रस्ताव को उस समय ठुकरा दिया।

सन् 1934 में प्रभात फ़िल्म कम्पनी कोल्हापुर से पूना (पुणे) आ गयी। उस समय बाबूराव पेंढारकर फिल्मी दुनिया में एक जांबाज़ खलनायक की लोकप्रियता अर्जित कर चुके थे पर कुछ परिवारिक परिस्थितियों के कारण वह कम्पनी के साथ कोल्हलापुर से पूना नहीं जा पाये। और इस प्रकार प्रभात फ़िल्म कम्पनी से उनका सम्बन्ध समाप्त हो गया। वी0 शान्ताराम को अपनी फ़िल्म **'अमृत मंथन'** के लिए एक नये खलनायक की तलाश थी जो उनकी फ़िल्म में बाबूराव पेंढारकर के स्थान पर राजगुरु का प्रभावशाली अभिनय कर सके। इसी बीच चन्द्रमोहन अपने फ़िल्म वितरण के कार्य के सिलसिले में दिल्ली से पूना गये और वहां उनकी पुनः वी शान्ताराम से भेटं हो गयी। वी0 शान्ताराम ने उनसे पुनः अपनी फ़िल्म में कार्य करने का आग्रह किया जिसे इस बार चन्द्रमोहन ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस प्रकार **'अमृत मंथन'** में पेंढारकर का रोल चन्द्रमोहन को मिल गया और प्रभात फ़िल्म कम्पनी में बाबूराव के न होने से जो ख़ालीपन आ गया था उसे चन्द्रमोहन ने भर दिया। वी0 शान्ताराम ने चन्द्रमोहन को 150 रुपये माहवार पर कम्पनी में अभिनय करने के लिये नियुक्त कर लिया। रुआबदार व्यक्तित्व के स्वामी चन्द्रमोहन ने बाबूराव पेंढारकर को अपना आर्दश मान कर अपने फिल्मी जीवन की यात्रा आरम्भ की। आपकी इस प्रथम फ़िल्म में आपकी सह कलाकार उस समय की जानी मानी अभिनेत्री दुर्गा खोटे थीं।

चन्द्रमोहन ने **'अमृत मंथन'** में एक खूंख़ार राजगुरु की भूमिका में कमाल का अभिनय किया। इस फ़िल्म में चन्द्रमोहन की आंखों के क्लोज़अप शाट इतने खूंखार और भयानक लिये गये थे कि उस समय कोई भी निर्माता या निर्देशक उन्हें अपनी फिल्म में एक नायक के रुप में लेने के लिये स्वप्न में भी नहीं विचार कर सकता था। चन्द्रमोहन उस समय एकदम हतप्रद रह गये जब वी0 शान्ताराम ने उनको एक माह कार्य करने के पश्चात केवल 80 रुपये यह कह कर दिये कि

इस समय कम्पनी की वित्तीय स्थिति कुछ ठीक नहीं है बाक़ी रुपये वह फ़िल्म के रिलीज़ होने के पश्चात देंगें।

फ़िल्म 'अमृत मंथन' सन् 1934 कें अन्त में प्रदर्शित हुई जिसके पश्चात चन्द्रमोहन को सारे देश में अभूतपूर्व ख्याती मिली और वह एक कुशल अभिनेता के रुप में स्थापित हो गये। उन्होने अपनी आंखों द्वारा कलात्मक अभिनय करने की फ़िल्मों में एक बिलकुल नयी शैली का शुभारम्भ किया और एक प्रभावशाली खलनायक के रुप में सारे फ़िल्म जगत में छा गये।

सन् 1935 में चन्द्रमोहन की फ़िल्म 'अमरज्योति' प्रदर्शित की गयी जिसमें आपके साथ मुख्य नायिका शान्ता आप्टे थीं। इस फिल्म में आपने एक ढुल मुल मंत्री के चरित्र को बहुत ही प्रभावशाली ढ़ंग से अभिनीत किया। यह फिल्म सिने प्रेमियों में बहुत ही अधिक लोकप्रिय हुई और चन्द्रमोहन को उस वर्ष का सर्वश्रेष्ठ अभिनेता चुना गया। वी0 शान्ताराम ने प्रसन्न हो कर चन्द्रमोहन का मासिक वेतन 150 रुपये से बढ़ा कर 350 रुपये कर दिया।

चन्द्रमोहन जब सन् 1927 में अपना घर परित्याग करके निकल पड़े थे तब से उनका और उनके परिजनों का कोई आपस में सम्पर्क नहीं था। आपके अग्रज भ्राता पंडित मनमोहन नाथ वातल सन् 1934 में भिंड में नियुक्त थे जहां उस समय कोई सिनेमा घर नहीं था। उनके किसी मित्र ने फ़िल्म 'अमृतमंथन' देखी और उनसे पूछा कि क्या चन्दू ने फ़िल्मों में काम करना प्रारम्भ कर दिया है क्यों की उस फ़िल्म में राजगुरु की भूमिका में चन्दू प्रतीत होता है। पंडित मनमोहन नाथ वातल कौतुहल वश इस कथन की सत्यता को परखने के लिये भिंड से इटावा गये और उन्होंने फ़िल्म 'अमृतमंथन' देखी। वह उस समय आश्चर्यचकित और रोमांचित हो गये जब उन्होंने अपने चन्दू को राजगुरु की दमदार भूमिका निभाते हुये पाया। और पुनः भिंड आकर चन्द्रमोहन को प्रभात फ़िल्म कम्पनी के पते पर पत्र लिखा तथा नरसिंह पुर में अपने मामा को सूचना दी कि चन्द्रमोहन ने फ़िल्मों में काम करना आरम्भ कर दिया है। इस प्रकार चन्द्रमोहन और उनके परिजनों में पुनः 8 वर्ष के अन्तराल के पश्चात सम्बंध स्थापित हुऐ।

चन्द्रमोहन की वी0शान्ताराम के निर्देशन में बनी फिल्म 'धर्मात्मा' सन् 1935 में प्रदर्शित हुई इस फ़िल्म में चन्द्रमोहन ने एक दंभी महंत का बड़ा ही प्रभावशाली अभिनय कर सिने दर्शको पर अपनी एक अमिट छाप छोड़ी। इसमें सह कलाकर थे बाल गंधर्व, बसंती, रत्न प्रभा, के0 नारायण तथा वसंत देसाई।

चन्द्रमोहन की फिल्म वहां सन् 1937 में प्रदर्शित की गयी। यह फ़िल्म प्रभात के बैनर तले के0 नारायण काले के निर्देशन में निर्माण की गयी थी। इसमें मुख्य अन्य कलाकार थे शान्ता आप्टे, लीला चिटनिस करुणा देवी तथा वसंत देसाई। इस फ़िल्म में चन्द्रमोहन ने उल्लाहस (मुनिश्वर नाथ कौल) को सर्वप्रथम काम दिलाया था।

आपकी हंस पिक्चर्स के बैनर तले बनी फिल्म ज्वाला सन् 1938 में प्रदर्शित की गयी जिसका निर्देशन विनायक ने किया था। इसमें आपके साथी कलाकार थे रत्नप्रभा, विनायक, बुलबुल और आशालता।

चन्द्रमोहन की बहुचर्चित फ़िल्म पुकार सन् 1939 में प्रदर्शित की गयी यह फिल्म सोहराब मोदी के निर्देशन में उनकी कम्पनी मिनर्वा द्वारा निर्माण की गयी थी। इसमें चन्द्रमोहन ने मुग़ल बादशाह जहांगीर की भूमिका को अपने प्रभावशाली अभिनय द्वारा जीवन्त कर दिया। उनकी अभिनय की क्षमता का सबसे बड़ा कमाल यह रहा कि उनको इसमें एक नायक के रुप में अभूतर्पूव लोकप्रियता मिली और चन्द्रमोहन एक खलनायक के रुप में काम करने वाले कलाकार एक नायक के रुप में ख्याति अर्जित करने वाले पहले अदाकार सिद्ध हुए। इस फ़िल्म में आपकी नायिका थीं नसीम बानों तथा अन्य कलाकार थे सोहराब मोदी, शीला, सरदार अख़्तर और राम आप्टे।

चन्द्रमोहन उस समय सोहराब मोदी की मिनर्वा फ़िल्म कम्पनी में 1200 रुपये माहवार के वेतन पर कार्य कर रहे थे पर पुकार की अपार सफ़लता के पश्चात अनेक फ़िल्म निर्माता अपनी फिल्मों में चन्द्रमोहन को लेने के लिये उनके घर के चक्कर लगाने लगे जिससे उन्होंने मासिक वेतन पर कार्य करना समाप्त कर दिया और वह एक स्टार के रुप में फिल्म निर्माताओं से अनुबन्ध करने लगे। वह उस समय एक फिल्म में काम करने के लिये 55000 रुपये लेते थे जो पूरे फ़िल्म जगत में सबसे अधिक फ़ीस थी और कुन्दन लाल सहगल, अशोक कुमार, पृथ्वी राज कपूर और मोती लाल जैसे अभिनेताओं को भी इतना धन नहीं मिलता था।

सन् 1940 में चन्द्रमोहन की फ़िल्म गीता प्रदर्शित की गई। यह फ़िल्म सिरको प्रोडक्शन्स द्वारा अल्टेकर के निर्देशन में निर्माण की गयी थी इस फ़िल्म में प्रथम बार चन्द्रमोहन ने डबल रोल करके एक निर्दयी पिता तथा उसके पुत्र की ज़ोरदार भूमिका निभायी और सिने दर्शकों को अपने अभिनय से मंत्र मुग्ध कर

दिया इसमें आपकी नायिका थीं दुर्गा खोटे तथा अन्य कलाकार थे त्रिलोक कपूर, नाज़िम और आशालता।

चन्द्रमोहन की इसी वर्ष सोहराब मोदी के निर्देशन में मिनर्वा द्वारा निर्माण की गयी फ़िल्म **भरोसा** प्रदर्शित की गयी जिसमें चन्द्रमोहन ने एक अच्छे मित्र की भूमिका अदा की इसके अन्य कलाकार थे मज़हर ख़ां, सरदार अख़्तर, शीला तथा माया देवी।

सन् 1942 में चन्द्रमोहन की फ़िल्म **अपना घर** प्रदर्शित की गयी जिसको सिरका प्रोडक्शन्स ने देविकी बोस के निर्देशन में निर्माण किया था। इसमें चन्द्रमोहन ने शान्ता आप्टे के एक बहुत दुष्ट पति की भूमिका निभायी और दर्शकों को अपने अभिनय की क्षमता से प्रभावित किया। इसमें सह कलाकर थे माया बैनर्जी, जगदीश सेठी, महेश कौल, जीवन, डेविड तथा गोप।

इसी वर्ष चन्द्रमोहन की एस0 ख़लील के निर्देशन में सिलवर फिल्मस के बैनर तले बनी **झंकार** प्रदर्शित हुई जिसमें सह कलाकर थे कुमार, प्रोमिला, गोप तथा दुलारी। इन्हीं फ़िल्मों के साथ प्रदर्शित हुई नेशनल स्टूडियोज की अनुपम **भेट रोटी** । महबूब ख़ां द्वारा निर्देशित इस फ़िल्म में चन्द्रमोहन ने एक दंभी, दौलत के भूखे पूंजीपति की कठिन भूमिका में एक अविस्मरणीय अभिनय किया जिसको आज भी भुलापाना कठिन है। इसमें साथ में थे सितारा, शेख़ मुख़्तार, आग़ा, अशरफ़ ख़ां और जमशेद जी।

चन्द्रमोहन की सन् 1943 में चार फिल्में प्रदर्शित हुई। वह थीं **फ़ैशन, नौकर, शकुन्तला और तकदीर**। इनमें फ़िल्म **फैशन** फ़ज़ली ब्रदर्स द्वारा एस0एफ0 हसनैन के निर्देशन में निर्माण की गयी थी जिसमें सरदार अख़्तर, सविता देवी, कामता प्रसाद और नाज़िर थे, **नौकर** सनराईज़ पिक्चर्स द्वारा शौकत हुसैन के निर्देशन में निर्माण की गयी थी इसमें साथी कलाकार थे शोभना सामर्थ, नूरजहां और याकूब, **शकुन्तला** राजकमल कला मन्दिर द्वारा वी0 शान्ताराम के निर्देशन में निर्माण की गयी थी। जिसमें साथी कलाकार थे जयश्री, ज़ोहरा, नाना पलसिकर, शान्ता राम, और मदन मोहन, और **तक़दीर** महबूब प्रोडक्शन्स द्वारा महबूब खां के निर्देशन में बनी थी जिसमें नरगिस, मोती लाल, अन्सारी और लड्डन थे। इन सब फ़िल्मों में चन्द्रमोहन ने अलग–अलग तरह की भूमिकाऐं अभिनीत कीं शकुन्तला में वह जयश्री के नायक दुशयन्त बने उनके पूरे फिल्मी जीवन की यह एक यादगार भूमिका रहीं। वहीं महबूब ख़ां की फ़िल्म **तक़दीर**

में उन्होंने मोतीलाल जैसे अभिनेता के पिता की भूमिका निभाने का साहस कर दिखलाया।

सन् 1944 में चन्द्रमोहन की तीन फ़िल्में **बड़े नवाब साहब, मुमताज़ महल** और **रौनक़** प्रदर्शित की गयीं। **बड़ेनवाब साहब** सिलवर फ़िल्मस द्वारा वेदी के निर्देशन में बनी थी जिसमें प्रोमिला, कुमार, पहाड़ी सान्याल, लीला मिश्रा और शान्ता पटेल थे, **मुमताज़महल** रंजीत फिल्म स्टूडियों द्वारा केदार शर्मा के निर्देशन में निर्माण की गयी थी इसमें चन्द्रमोहन ने शाहजहॉ का किरदार निभाया साथ में खुर्शीद, याकूब, कज्जन व सुलोचना चटर्जी और **रौनक़** सुभाग्या पिक्चर्स द्वारा द्वारिका खोसला के निर्देशन में निर्माण की गयी थी जिसमें साथी कलाकार थे मोती लाल, चन्द्र प्रभा, स्वर्णलता और चार्ली।

सन् 1946 में चन्द्रमोहन की फ़िल्म **शालीमार** जो शोरे पिक्चर्स द्वारा एम0के0 शोरे के निर्देशन में निर्माण की गयी जिसमें बेगम पारा, मनोरमा, हरि शिवदासिनी तथा प्रोमिला सह कलाकार थे और **श्रवण कुमार** जो मुरली मूवीज़ द्वारा राम दरयानी के निर्देशन में बनी जिसमें सह कलाकार मुम्ताज़, शान्ति, पहाड़ी सान्याल तथा लीला मिश्रा थे तथा **मगधराज** जो कमल पिक्चर्स द्वारा आर0एस0 चौधरी के निर्देशन में निर्माण की गई थी जिसमें सह कलाकार थे लीला देसाई, बाबूराव पेढ़ारकर और मुमताज़ शान्ति प्रदर्शित की गयी।

चन्द्रमोहन की एक और बहुचर्चित फ़िल्म **शहीद** सन् 1948 में प्रदर्शित हुई जो रमेश सहगल के निर्देशन में फ़िल्मिस्तान के बैरन तले बनी थी इसमें चन्द्रमोहन ने एक ब्रिटिश कालीन अंग्रेज़ जज का बड़ा ही प्रभावशाली अभिनय किया था जो अपने आदर्शों के प्रति बहुत ही सजग था साथ में थे उनके पुत्र के रुप में दिलीप कुमार तथा सह कलाकार कामिनी कौशल तथा लीला चिटनिस। इसी वर्ष चन्द्रमोहन की दो और फ़िल्में प्रदर्शित हुई वह थी **दुखियारी** जो जीवनज्योति कला मन्दिर द्वारा डी0के0 रतन के निर्देशन में बनी थी जिसमें सह कलाकार थे मीना, सुरेन्द्र, त्रिलोक कपूर, रंजीत कुमारी तथा विनायक और **राम बाण** जो प्रकाश पिक्चर्स द्वारा विजय भट्ट के निर्देशन में निर्माण की गयी थी जिसमें चन्द्रमोहन ने रावण की भूमिका निभायी थी साथ में थे प्रेम अदीब, शोभना सामर्थ, उमाकान्त, लीला मिश्रा तथा जानकीदास।

चन्द्रमोहन अधिक मदिरा पान के कारण अस्वस्थ रहने लगे थे। आपका लगभग दो सप्ताह बीमार रहने के पश्चात अकस्मात हृदय गति रुक जाने से 2

अप्रैल सन् 1949 को लगभग 44 वर्ष की आयु में निधन हो गया। उस समय आपका कोई भी परिजन बम्बई में उपस्थित नहीं था अतः आपका दाह संस्कार आपके परम मित्र पृथ्वीराज कपूर के ज्येष्ठ पुत्र तथा फिल्म निर्माता, निर्देशक तथा अभिनेता राजकपूर ने किया। चन्द्रमोहन की अन्तिम फिल्म **चाकलेट** जो इण्डियन पिक्चर्स द्वारा स्टीवन के निर्देशन में निर्माण की गयी थी उनके मरणोपरांत सन् 1950 में प्रदर्शित की गयी जिसमें उर्वशी, आग़ा, राजा सलीम और शान्ति मलिक सह कलाकार थे।

चन्द्रमोहन का सम्पूर्ण व्यक्तित्व वास्तव में इतना राजसी था कि ऐतिहासिक पात्रों पर वह सज उठता था यही कारण था कि अनेक ऐतिहासिक पात्रों में उनका अभिनय उतना ही प्रभावशाली रहा। यहा पर यह उल्लेख करना आवश्यक है कि कालजयी फ़िल्म मुग़ले आजम की कास्टिंग के समय अकबर की भूमिका के लिये के0आसिफ़ साहब चन्द्रमोहन को अनुबंधित करना चाहते थे पर उनकी अकस्मात मृत्यु हो जाने के कारण वह रोल बाद में पृथ्वीराज कपूर को दिया गया।

चन्द्रमोहन की ज्यों–ज्यों फ़िल्म जगत में ख्याति बढ़ती गयी और उनकी वित्तीय स्थिति सुधरती गयी त्यों–त्यों उनपर बुरी लतें हावी होती चली गयीं। वह मदिरा पान, घुड़ दौड़ और जुआ जैसे बहु व्यसनों पर खुलकर रुपये खर्च करने लगे जिसके कारण उनका पतन आरम्भ हो गया और अन्तोगत्वा यही पतन उनके असमय अवसान का एक मुख्य कारण बना वरन् यह विलक्षण अभिनेता फिल्म जगत के इतिहास में एक नया कीर्तिमान स्थापित करता।

चन्द्रमोहन को मदिरा पान के साथ–साथ घुड़दौड़ का बहुत अधिक शौक़ था। वह एक–एक घोड़े पर लाखें रुपये की बाज़ी लगाते थे। जम्मू–कश्मीर रियासत के माहाराजा हरि सिंह और ग्वालियर रियासत के माहाराजा जीवाजी राव सिंधिया आपके घुड़ दौड़ के मैदान के परम मित्र थे और आपकी उन दोनों के साथ प्रतियोगी बाज़ियां लगती थीं जिनमें एक दिन में लाखों रुपये के वारे–न्यारे हो जाया करते थे। आपने 11 अरबी नस्ल के घोड़े पाले हुऐ थे जो घुड़ दौड़ में हिस्सा लेते थे। और जिनके रख–रखाव पर काफ़ी धन व्यय होता था। उस समय एक रेस का घोड़ा लगभग 40,000 रुपये में आता था। जबकि एक भव्य बंगला केवल 20,000 रुपये में क्रय किया जा सकता था। सन् 1947 में बम्बई के महालक्ष्मी रेस कोर्स में चन्द्रमोहन एक ही झटके में एक बार 14 लाख

रुपये हार गये और एक दम ख़लास हो गये जिससे विवश होकर उनको अपनी दोनों मोटरें जिनमें एक जर्मनी की निर्मित एम0जी0 कार उन्होने जम्मू–कश्मीर के माहाराजा हरि सिहं से क्रय की थी और उस समय पूरे भारत में इस माडल की केवल दो का थी जिसकी लागत उस समय 75,000 रुपये थी तथा अपने अरबी नस्ल के बेशकीमती घोड़े बेचने पड़े।

चन्द्रमोहन अनेक धार्मिक कार्यों के लिये जमकर दान देते थे। उनसे जो भी व्यक्ति वित्तीय सहायता के लिये निवेदन करता वह उसको कभी निराश नहीं करते थे चाहे वह किसी भी जाति या धर्म से सम्बन्ध रखता हो। वह कभी इस बात की चिन्ता नहीं करते थे कि उनके पास इस प्रकार की सहायता करने के लिये उचित सन–साधन उपलब्ध हैं अथवा नहीं। इस मामले में वह बिलकुल भामाशाह थे। एक विशेष बात यह थी कि उस समय चन्द्रमोहन स्वंय कर्ज़दार हो चुके थे और उनपर काफ़ी लोगों का रुपया उधार चल रहा था। पर उनके व्यवहार में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं आया और उनकी पुरानी आदते जारी रहीं।

यद्यपि चन्द्रमोहन ने अपने छात्र जीवन में कभी पढ़ाई को कोई विशेष महत्व नहीं दिया पर एक सफ़ल अभिनेता बनने के पश्चात उनकी अंग्रेज़ी और उर्दू साहित्य की हिन्दी में पुस्तकें पढ़ने की बेहद रुचि हो गयी थी। वह नियमित रुप से रात्रि में पुस्तकें पढ़ते थे और गर्मी में अपने स्नान गृह में टब में लेट कर पुस्तक पढ़ते थे जिसके लिये टब के किनारे एक टेबिल लैम्प लगा रहता था। वास्तव में उनका स्नान गृह भी एक छोटा–मोटा पुस्तकालय था जहां विभिन्न विषयों पर पुस्तकें लगी रहती थी।

चन्द्रमोहन ने विवाह नहीं किया था। वह कहा करते थे कि मेरा विवाह तो कला के साथ हुआ है। उनके घर की देखभाल श्रीमती जेम्स नाम की एक क्रिश्चियन महिला करती थी। उनके निजी सचिव श्री पटेल थे जो उनका व्यवसायिक कार्य देखते थे। उनका भोजन मोहम्मद नाम का एक रसोईया पकाता था सन् 1947 के पश्चात चन्द्रमोहन की वित्तीय स्थिति बिगड़ने पर फिल्म निर्माताओं ने भी उनको अपनी फ़िल्मों में काम देने से हाथ खीचना प्रारम्भ कर दिया। चन्द्रमोहन ने भी अपने स्वाभिमान और अभिमान के लिये कम रुपयों पर फ़िल्मों में हल्का–फुल्का रोल करना कुछ उचित नहीं समझा इन सब परिस्थितियों का उनके स्वास्थ पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और उनको 2 अप्रैल सन् 1949 को

एक भीषण दिल का दौरा पड़ा जिसमें उनकी मृत्यु हो गयी। चन्द्रमोहन अपनी मृत्यु के कुछ समय पूर्व महाकाली के भक्त हो गये थे और बड़ी श्रद्धापूर्वक नित्य उनकी पूजा–अर्चना करने लगे थे। आप माँ काली के दर्शन करने के लिये कलकत्ता भी गये। आपने माँ काली से प्रार्थना की कि या तो उनका यश और ख्याति उसी प्रकार बनी रहे या फिर वह इस संसार से मुक्ति पा जायें क्योंकि एक अपमानजनक जीवन व्यतीत करना उनके लिये बहुत कठिन है।

चन्द्र मोहन बम्बई में मैरीन ड्राईन के एक छोरपर चर्च गेट और फ़ोर्ट के मध्य 16 बिलखा हाऊस में रहते थे जो उस समय बहुत ही शानदार जगह समझी जाती थी जहां नंगर के अधिकतर अति विशिष्ट लोग निवास करते थे।

चन्द्रमोहन वी0शान्ताराम को अपना गुरु और महबूब खां को एक कुशल निर्देशक मानते थे। कुन्दन लाल सहगल, मोतीलाल पृथ्वीराज कपूर तथा के0एन0सिंह आपके परम मित्रों में थे। आपकी प्रिय अभिनेत्रियां थी दुर्गा खोटे, शान्ता आप्टे, प्रोमिला, जयश्री, रत्न प्रभा, शोभना सामर्थ तथा नसीम बानों। प्रसिद्ध अभिनेता पृथ्वीराज कपूर ने एक बार कहा था कि हर अभिनेता अपने शरीर के हाव–भाव का अपने अभिनय में सहारा लेता है पर चन्द्रमोहन केवल अपनी आखों से वह कमाल कर देते हैं जो किसी भी कलाकार के लिये बहुत कठिन है। चन्द्रमोहन ने अभिनय कला का जो पक्ष विकसित किया वह पुणें में स्थित फिल्म एवं टेलिविज़न संस्थान के पाठ्यक्रम में समायोंजित किया गया है जो वहां के छात्रों तथा छात्राओं को पढ़ाया जाता है जो स्वंय उस महान अभिनेता का फिल्म संसार को एक बहुत बड़ा योगदान है जिसकी जितनी भी प्रशंसा की जाये कम है। मै अपनी बात निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा समाप्त करना चाहूंगा।

लोगों को नये रुप में ढ़लते देखा
अपनों का भी अन्दाज़ बदलते देखा
जिस पेड़ के नीचे थी घनी छांव कभी
उस पेड़ को भी आग उगलते देखा



1948 के कश्मीर युद्ध के महानायक

ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल



भारतीय सेना ने अनेक ऐसे पराक्रमी और शूरव ीर अधिकारी उत्पन्न किये हैं जिन्होंने अपने साहस और शौर्य के बल पर विभिन्न युद्ध स्थलों में एक नया इतिहास रचा और अपनी मातृभूमि के सम्मान और रक्षा के लिये अपने प्राणों का उत्सर्ग किया इन निष्ठावान अधिकारियों ने अपनी निष्पक्ष कार्यप्रणाली तथा अदम्य साहस द्वारा न केवल अपने सैनिकों का विश्वास प्राप्त किया अपितु उनके लिये एक आदर और सम्मान का पात्र बने। उन्होंने अपने कुशल नेतृत्व द्वारा सदा सैनिकों का आत्मबल बढ़ाया और उनमें युद्ध स्थल में अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिये मर–मिट जाने का जज़्बा पैदा किया। उन्होंने सदा युद्ध भूमि में सैनिकों का उत्साह बढ़ाया ताकि वह शत्रु के नापाक इरादों को ध्वस्त करने में सक्षम हो सकें और नये कीर्तिमान स्थापित करें जिनसे आगे आने वाली पीढ़ियां प्रेरणा ले सकें और उनके कारनामों पर गर्व का अनुभव करें। ऐसे ही एक पराक्रमी और साहसी योद्धा थे ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल जिन्होंने विश्व के विभिन्न युद्ध क्षेत्रों में न केवल अभूतपूर्व ख्याति अर्जित की अपितु सन् 1948 के कश्मीर के युद्ध में एक नये इतिहास की रचना की।

ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल के पूर्वज पंडित रमन लाल ठुलल मूल रूप से कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद के निवासी थे जो 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में कश्मीर घाटी से निकल कर लाहौर आ गये थे और वहां माहाराज रंजीत सिंह (1801–1839) की फौज–ए–खास में सैनिकों को वेतन बाटने के लिये कदाचित बक्शी के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे। कालान्तर में आपके पुत्र मोती लाल ठुलल लाहौर से दिल्ली आ गये और वहां मुगल सम्राट बहादुर शाह ज़फर (1837–1857) के दरबार में किसी पद पर आसीन हो गये। सन् 1848 के आस

पास दिल्ली में मुग़ल शासन के पतन और अंग्रेज़ों के बढ़ते प्रभाव को देखते हुए पंडित मोती लाल ठुलल दिल्ली से राजपूताना की जयपुर रियासत चले गये और अपनी योग्यता के बल पर वहां माहाराजा राम सिंह द्वितीय के दरबार में किसी अच्छे पद पर नियुक्त हो गये माहाराजा राम सिंह ने आपकी अपने वचन पर अटल रहने की प्रशंसा की और आप अपना कुलनाम ठुलल के स्थान पर अटल लिखने लगे। आप बाद में जयपुर रियासत के एक लोकप्रिय दीवान बने।

पंडित मोती लाल अटल के तीन पुत्र क्रमशः किशन लाल, श्याम लाल, तथा जयनाथ और दो पुत्रियां राधिका रानी जिनका विवाह लखनऊ के कश्मीरी मुहल्ले के निवासी पंडित बैजनाथ शर्गा तथा राजपती जिनका विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित राजनाथ तकरू के साथ सम्पन्न हुआ थीं।

पंडित मोती लाल अटल के सबसे बड़े पुत्र पडित किशन लाल अटल का विवाह नन्दो हुक्कू के साथ सम्पन्न हुआ था। आप जयपुर रियासत के माहाराजा माधो सिंह से कुछ मतभेद हो जाने के कारण जयपुर से दिल्ली आ गये और वहां के सीताराम बाज़ार मुहल्ले में एक बड़ी हवेली क्रय करके उसमें अपने परिजनों के साथ रहने लगे। आपने इस हवेली का नाम "अटल हाऊस" रखा था। आपके सात पुत्र क्रमशः रतन लाल, बिशन लाल, मनमोहन लाल, प्यारे लाल, जवाहर मल, अजुर्न नाथ तथा जानकी नाथ और एक पुत्री सेनापती थी जिनका विवाह कानपुर निवासी पंडित बिशम्भर नाथ मुशरान के साथ सम्पन्न हआ था जो बाद में सब जज हो गये थे।

पंडित किशन लाल अटल के चौथे पुत्र पंडित प्यारे लाल अटल लाहौर के किंग ऐडवर्ड मेडिकल कालेज से शिक्षा समाप्त करने के पश्चात सेना की चिकित्सा शाखा में भर्ती हो गये थे। डॉ0 प्यारे लाल अटल बाद में अंग्रेज़ों द्वारा सेना में मेजर के पद पर नियुक्त कर दिये गये थे। अंग्रेज़ों ने आपको प्रथम विश्व युद्ध में घायल सैनिकों की सेवा करने के लिये एक चिकित्सकों के दल के साथ भारत से फ्रांस भेजा जहां डेबिस नामक स्थान पर घायल सैनिकों की सेवा करते हुये आपकी एक गोला फट जाने के कारण 23 नवम्बर सन् 1914 को अकस्मात मृत्यु हो गयी। आपका विवाह लाहौर की निवासी सुश्री राजकुमारी किचलू के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र क्रमशः हीरा लाल और कन्हैया लाल तथा दो पुत्रियां क्रमशः कमला और सरस्वती थीं जिनमें कमला का विवाह जोधपुर रियासत के प्रधान मंत्री सर सुखदेव प्रसाद काक के सुपुत्र डॉ0 जयनाथ काक

के साथ तथा सरस्वती का विवाह बिहार प्रान्त के जमशेदपुर नगर के निवासी पंडित राज नाथ काटजू के साथ सम्पन्न हुआ था।

मेजर (डॉ0) प्यारे लाल अटल के बड़े पुत्र हीरा लाल अटल अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अंग्रेज़ों के शासन काल में सेना में भर्ती हो गये थे। आप सेना में लेफ़्टिनेन्ट जनरल के पद से सेवा निवृत्त हुये आपका विवाह कानपुर के प्रसिद्ध बैरिस्टर अमोलक राम हून की सुपुत्री सुश्री ऊषाहून के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित कन्हैया लाल अटल का जन्म 7 दिसम्बर सन् 1913 को अविभाजित पंजाब प्रान्त के फ़ीरोज़पुर नगर में हुआ था। आपने लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से एफ0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात अपने परिवार की परम्परा के अनुसार सेना में भर्ती होने के लिये देहरादून में स्थित तत्कालीन प्रिंस आफ़ वेल्स रायल मिलिट्री कालेज में सन् 1932 में प्रवेश लिया। आप कुछ उन गिने चुने विद्यार्थियों में एक थे जिनको इस कालेज के स्थापित होने के पश्चात इसके प्रथम सत्र में प्रवेश मिला था। आप अपना इस कालेज से विधिवत पूरा प्रशिक्षण समाप्त करने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा सेना में सन् 1934 में एक सेकेण्ड लेफ़टिनेन्ट के पद पर नियुक्त कर दिये गये।

आपकी लगभग एक वर्ष पश्चात सन् 1935 में तत्कालीन हैम्पशायर रेजिमेन्ट में नियुक्ति कर दी गयी और आपको तुरन्त अपनी रेजिमेन्ट के साथ युद्ध क्षेत्र में जाने का आदेश दिया गया। उस समय उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त की सीमाओं पर आफ़रीदी लोग काफ़ी उत्पात मचाये हुये थे और ग़दर काट रहे थे उस समय अंग्रेज़ों का मुख्य उद्देश्य इन अफ़रीदियों द्वारा चलायी जा रही ग़ैर कानूनी गतिविधियों पर प्रभावशाली अंकुश लगाना और देश के उस दुगर्म क्षेत्र में कानून और व्यवस्था को पूर्ण रूप से स्थापित करना था ताकि वहां शान्ति और प्रगति का उचित वातावरण बन सके। युवा सेकेण्ड लेफ़्टिनेन्ट कन्हैया लाल अटल ने अपनी रेजिमेन्ट के साथ इस क्षेत्र में आक्रामक रूप से अफ़रीदियों की असामाजिक एवं हिंसक गतिविधियों को पूर्ण रूप से नियंत्रित किया और उस पूरे क्षेत्र में उनका सर्वनाश कर अमन–चैन स्थापित किया।

यह सराहनीय कार्य करने के पश्चात आपकी 13वीं फ्रन्टियर फोर्स राइफिल्स की शाही टुकड़ी में नियुक्ति कर दी गयी। आपने सन् 1936 में पुनः अपनी सैन्य टुकड़ी के साथ उत्तर पश्चिम प्रान्त में पनप रहे आतंकवाद का

सफ़ाया करने के लिये खैसका औपरेशन्स के अन्तर्गत मुहिम चलायी और देश के उस क्षेत्र में पूर्ण रूप से शान्ति स्थापित की। आपको सन् 1937 में अंग्रेज़ों ने अपनी कुमक के साथ उस समय चलाये जा रहे "वज़ीरिस्तान औपरेशन्स के तहत पूर्व में तत्कालीन बर्मा की ओर जाने का निर्देश दिया ताकि वहां ब्रिटिश साम्राज्य के हितों की समुचित रक्षा की जा सके और वहां कानून और व्यवस्था को और अधिक चुस्त तथा दुरूस्त किया जा सके।

आपके विभिन्न युद्ध क्षेत्रों में अभूतपूर्व युद्ध कौशल के प्रदर्शन के कारण आपके अंग्रेज़ अधिकारियों ने आपसे प्रसन्न होकर आपको प्रोन्नति करके सेना में कैप्टन बना दिया। इसी बीच 1 सितम्बर सन् 1939 को तत्कालीन नाजी जर्मनी ने पोलैंड पर आक्रमण कर दिया और इस प्रकार द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ गया। अंग्रेज़ों ने इस युद्ध में भाग लेने के लिये युवा कैप्टन कन्हैया लाल अटल को उनकी सैन्य टुकड़ी के साथ मध्य पूर्व ऐशिया के युद्ध क्षेत्र में भाग लेने के लिये भेजा जिसमें आपने सूडान, इरीट्रिया, ईराक़, अबेसीनिया तथा पश्चिमी मरूस्थल के विभिन्न युद्ध स्थलों में खुलकर भाग लिया और शत्रु से जम कर लोहा लिया।

आपने इन युद्ध स्थलों में अपने पराक्रम और साहस का अभूतपूर्व परिचय दिया और भूरि–भूरि प्रशंसा अर्जित की। आपने इटली में केरन और अम्बा अलागी के युद्ध में युद्ध कौशल के इतिहास में एक नया अध्ययाय जोड़ा जब आपने अपनी सैन्य टुकड़ी के साथ अम्बा अलागी की ऊंची पथरीली पवर्त माला पर चढ़ कर वहां गहरे "बंकरों" में इटली के सैनिकों द्वारा स्थापित मोर्चों को एकदम ध्वस्त कर उनका सफ़ाया कर दिया जहां से वह निरन्तर भीषण गोलाबारी कर रहे थे। आपके इस अदम्य साहस से प्रभावित होकर आपके तत्कालीन अंग्रेज़ सेना नायकों ने दो बार आपको "मिलिट्री क्रास" से विभूषित करने की संस्तुति दी और युद्ध स्थल से वहां के घटनाक्रम से सम्बंधित भेजे जा रहे सेना के प्रपत्रों में आपके नाम का विशेष रूप से उल्लेख किया। आपके इन साहसी कारनामों को भारत तथा ब्रिटेन के समाचार पत्रों ने प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया और आपकी युद्धभूमि के एक महानायक के रूप में प्रशंसा की गयी।

आपके युद्ध भूमि में इस अभूतपूर्व प्रदर्शन से प्रभावित होकर तत्कालीन अंग्रेज जनरल ऑकिनेक ने सन् 1941 में आपका इंग्लैण्ड में स्थित विभिन्न सैन्य प्रतिष्ठानों में 2 माह तक व्याख्यान देने के लिये चयन किया कि वहां के अधिकारीगण आपके द्वितीय विश्व युद्ध के अनुभवों का पूर्ण लाभ उठा सकें और

आप उनको ब्रिटेन द्वारा विभिन्न युद्ध क्षेत्रों में की गयी सैन्य कार्यवाही की समुचित जानकारी दे ताकि युद्ध से सम्बंधित समस्त घटनाक्रमों का उनको एक स्पष्ट ब्यौरा मिल सके और किसी प्रकार की कोई असमंजस की स्थिति न उत्पन्न हो।

कैप्टैन कन्हैया लाल अटल को उनके लन्दन में प्रवास के दौरान सम्राट जार्ज छठ्म के सम्मुख प्रस्तुत किया गया जहां आपने शाही परिवार के सदस्यों के साथ बकिंगघम पैलेस में भोज लिया। आपको ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमंत्री सर विन्सटन चर्चिल ने अपने फार्म हाऊस "चिकर्स" पर भोज के लिये आमंत्रित किया जहां उस समय चर्चिल साहब एक सप्ताह की छुट्टी पर स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। एक अंग्रेज़ चित्रकार हेनरी कार को आपका तैल चित्र बनाने के लिये विशेष रूप से आमंत्रित किया गया जिसने आपका "पोरट्रेट" बनाया उसके द्वारा बनाया गया आपका तैल चित्र आज भी लन्दन के विश्व प्रसिद्ध युद्ध संग्रहालय में लगा हुआ है।

कैप्टैन कन्हैया लाल अटल को उनके इस इंग्लैण्ड के भ्रमण से भारत आने के पश्चात पुनः अंग्रेज़ों ने उनकी सैन्य टुकड़ी के साथ मध्यपूर्व ऐशिया के युद्ध क्षेत्र में भेज दिया जहां उन्होंने अनेक मोर्चों पर सक्रिय रूप से भाग लिया। आपने इटली के सौनिकों के विरूद्ध तबरूक में अनेक युद्ध लड़े। आप सन् 1942 में युद्ध क्षेत्र से अपनी सैन्य टुकड़ी के साथ भारत आ गये।

आपने भारत आने के पश्चात उस समय क्वेटा (पाकिस्तान) में स्थित स्टाफ़ कालेज में प्रशिक्षण के लिये प्रवेश लिया। आपकी इस प्रशिक्षण के पश्चात सन् 1943 में महो में स्थित आफ़िसर्स ट्रेनिंग स्कूल में पदोन्नति करके एक मेजर के रूप में प्रशिक्षक के पद पर नियुक्ति कर दी गयी। आप इस पद पर सन् 1945 के आधे वर्ष तक कार्यरत रहे।

अंग्रेज़ों ने मेजर कन्हैया लाल अटल को सन् 1945 के अन्तिम महीनों में पुनः उनकी सैन्य टुकड़ी के साथ पूर्वी मोर्चे पर बर्मा, स्याम, मलाया तथा सिंगापुर भेज दिया जहां आपने उन देशों में विभिन्न युद्ध स्थलों में अपने साहस और पराक्रम का अभूतपूर्व परिचय दिया और शत्रु के साथ जम कर संघर्ष किया। आप इन देशों में अपने अधिकारियों द्वारा दिये गये लक्ष्यों को पूरी तरह से सफ़लता पूर्वक समाप्त करने के पश्चात सन् 1945 के अक्टूबर माह में भारत लौट आये।

आपकी भारत आने के पश्चात शिमला के सेना मुख्यालय में नियुक्ति कर दी गयी जो अंग्रेज़ों के शासन काल में भारत की ग्रीष्म काल की राजधानी हुआ

करता था। आपने शिमला मे एडजुटान्ट जनरल की शाखा में लगभग 4 माह कार्य किया। अंग्रेज़ों ने आपको तद्पश्चात देहरादून के निकट क्लैमेन्ट नगर में स्थित सेना के एक प्रशिक्षण संस्थान में एक प्रशिक्षक के रूप में नियुक्त कर दिया। आपने इस पद पर लगभग एक वर्ष सन् 1946 तक कार्य किया। आपको उसके पश्चात प्रोन्नति करके लेफ़टिनेन्ट कर्नल बना दिया गया और आपकी दिल्ली में स्थित सेना मुख्यालय में डी.ए.ए.जी. के पद पर नियुक्ति कर दी गयी।

अंग्रेज़ों के एक लम्बे शासन काल के पश्चात 15 अगस्त सन् 1947 को देश स्वतंत्र हुआ और अंग्रेज़ भारत का धर्म के आधार पर विभाजन कर चले गये। इस प्रकार विश्व के मानचित्र पर पाकिस्तान का एक नये राष्ट्र के रूप में उदय हुआ और पंडित जवाहर लाल नेहरू स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री बने। एक अंग्रेज़ बैरिस्टर सर सायरी रेडक्लिफ़ ने दोनों देशों की सीमाओ को रेखांकित किया उस समय जम्मू–कश्मीर एक स्वतंत्र रियासत थी जिसके शासक माहाराजा हरि सिंह थे। उस समय गिलगिट में नियुक्त एक अंग्रेज़ सैन्य अधिकारी मेजर ब्राऊन ने पैंतरे बाज़ी करते हुये माहाराजा हरि सिंह द्वारा गिलगिट में नियुक्त गर्वनर को हटा कर उसके स्थान पर पाकिस्तान द्वारा समर्थित उसके एक पिट्ठू को गिलगिट तथा बालटिस्तान का गवर्नर बना दिया।

लेफ़टिनेन्ट कर्नल कन्हैया लाल अटल को नयी दिल्ली से 1/9वीं गोरखा राईफिल्स का सेनानायक बना कर जम्मू भेजा गया। यह सेना की अतिविशिष्ट टुकड़ी मानी जाती है जिसने विभिन्न युद्ध क्षेत्रों में अपनी वीरता और युद्ध कौशल के लिये अनेक अलंकरण प्राप्त किये हैं और जो सेना की सबसे वरिष्ठ टुकड़ी मानी जाती है जिसका अंग्रेज़ों ने सर्व प्रथम फ्रन्टियर फोर्स राईफिल्स के रूप में गठन किया था और जिसका सेनानायक सदैव एक अंग्रेज़ अधिकारी होता था। लेफ़टिनेन्ट कर्नल कन्हैया लाल अटल वह पहले भारतीय अधिकारी थे जिन्हें इस अति विशिष्ट सेना की टुकड़ी का सेनानायक होने का गौरव प्राप्त हुआ।

22 अक्टूबर सन् 1947 को पाकिस्तान के शासकों ने कश्मीर पर बल पूर्वक अपना अधिपत्य स्थापित करने के उद्देश्य से पाकिस्तान की सेना के सैनिकों को कबाईलियों की वेशभूषा में कश्मीर में सीमा पार से घुसपैठ करानी प्रारम्भ की। इन सशस्त्र कबाईलियों ने कश्मीर घाटी में भय और आतंक का वातावरण फैलाने के लिये बड़े पैमाने पर लूट–पाट, आगज़नी, निर्दोष व्यक्तियों की निर्मम हत्यायें तथा असहाय महिलाओं का बलात्कार प्रारम्भ कर दिया। उनका उद्देश्य

मुज़फ़्फ़राबाद से उरी–बारामूला मार्ग पर आगे बढ़ कर श्रीनगर के हवाई अड्डे पर पूरा अधिकार करना था। माहाराजा हरि सिंह इस विकट परिस्थिति का साहस के साथ दृढ़तापूर्वक सामना करने के लिये मानसिक रूप से बिलकुल तैयार नहीं थे। उन्होंने भारत से सैन्य सहायता मांगी ताकि रियासत में कानून और व्यवस्था को स्थापित कर पुनः शान्ति का वातावरण बनाया जा सके। आपने 26 अक्टूबर सन् 1947 को भारत के साथ अपनी रियासत के विलय की घोषणा कर दी और स्वयं श्रीनगर से पलायन कर गये।

लेफ़्टिनेन्ट कर्नल कन्हैया लाल अटल को कश्मीर में सैन्य कार्यवाही में घायल हो जाने के कारण सन् 1948 के मई माह में दिल्ली के कमान्ड अस्पताल में उपचार के लिये भर्ती कराया गया और आपको स्वास्थ्य लाभ के लिये एक माह का अवकाश स्वीकृत किया गया पर आपके अधिकारियों ने आपसे आग्रह किया कि आप दिल्ली में स्थित सीमा रक्षक सेना के कार्यालय में निदेशक का पद ग्रहण करें और आपको पदोन्नती करके कर्नल बना दिया गया। अभी आप अपने कार्यालय में उचित रूप से पदभार ग्रहण भी नहीं कर पाये थे कि आपके पास श्रीनगर से वहां के सेनानायक लेफ़्टिनेन्ट जनरल के0एस0 थिमय्या का एक अतिद्रुतगामी संदेश आया कि आप तुरन्त श्रीनगर चले आये और वहां तैनात 77 पैरा ब्रिगेड की कमान संभाले। आपको प्रोन्नति करके ब्रिगेडियर बना दिया गया। उस समय तक पाकिस्तान के सैनिकों ने लद्दाख क्षेत्र में घुसपैठ करके करगिल, लेह, द्रास और बटालिक क्षेत्रों की पर्वत मालाओं पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था और उनका भारत से प्रायः सम्बन्ध कट चुका था। सन् 1948 के कश्मीर के इस ऐतिहासिक युद्ध का सजीव चित्रण हिन्दी की प्रख्यात लेखिका और कवित्री श्रीमती स्वरूप कुमारी बक्शी ने अपनी सशक्त लेखनी में कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

> **"सन् 1948 में करगिल, द्रास, जोजिला, लेह तथा बटालिक क्षेत्र की दशा अतिभयंकर एवं चिन्ताजनक थी। इस क्षेत्र की हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखला पर शत्रुओं का आधिपत्य हो चुका था। इन हिमगिरी श्रृंगो पर अनेक ठोस और दृढ़ बंकर स्थापित कर दिये गये थे। यह अति विशाल क्षेत्र था जिसको शत्रु ने घुसपैठियों की सहायता से अवैध रूप से अपने अधिकार में ले लिया था। जिसके कारण**

समस्त कश्मीर घाटी की सुरक्षा के लिये घोर संकट उत्पन्न हो गया था। सबसे अधिक चिन्ताजनक बात यह थी कि देहली और श्रीनगर का सम्पर्क लेह एवं लद्दाख से कट गया था।

अतः सत्ता के उच्चतम शिखर पर इस संवेदनशील क्षेत्र को शत्रु से मुक्त कराने का अत्यन्त महत्वपूर्ण, दूरगामी एवं साहसपूर्ण निर्णय लिया गया जो राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय, सैन्य एवं सुरक्षा के दृष्टिकोण से परम आवश्यक, सामयिक एवं दूरदर्शिता पूर्ण कदम था।

इसके उपरान्त शीघ्र ही इस अमूल्य एवं महत्वपूर्ण क्षेत्र में घटनाचक्र तीव्र गति से परिचालित हो गया। दिनांक 14 अक्टूबर सन् 1948 को ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल ने आपरेशन स्पैरो **(Operation Sparrow)** का आदेश निर्गत कर दिया। घुसपैठियों को इस क्षेत्र से निष्कासित करने की रणनीति, व्यूहरचना, मशीनगनों का प्रयोग, अस्त्र–शस्त्र के साथ सैनिकों का कई स्थानों पर आक्रमण के लिये एकत्र होना उनका टैंकों की तोपों के प्रहार के साये में आगे पगपग बढ़ना, दांय–बायें तथा सामने और पीछे देखते हुये क्षण–क्षण की क्रियाशीलता तथा किस बंकर पर किस पल आक्रमण करना है उसका उचित मार्ग दर्शन देकर इस समूचे क्षेत्र में बड़े ही कौशल के साथ युद्ध करने की संरचना की गयी और यह आदेश दिया गया कि सेना की किस टुकड़ी को किस सेनानायक के नेतृत्व में क्षण क्षण पूर्व बनायी गयी योजना के अनुरूप आगे बढ़ना है ताकि शत्रु को उनकी व्यूह रचना की भनक न लग सके और उसका सफ़ाया करने में अधिक कठिनाई न हो। इसके साथ–साथ सैनिक बलों का साहस, शौर्य और अपनी मातृभूमि को शत्रु से मुक्त कराने के लिये बलिदान देने की भवना भी अद्वितीय थी।

युद्ध क्षेत्र अत्यन्त कठिन, कठोर एवं दुर्गम। हिमाच्छादित पर्वत शिखर 12 हजार से 21 हजार फिट तक ऊँचे–ऊँचे।

बीच–बीच में इतनी ही नीचे धंसी हुई विशालकाय खाईयां। सम्पूर्ण क्षेत्र हिम से ढका हुआ। बीच–बीच में शीत, वेगवती उन्मत छलछल जल–धारायें। शिला खण्ड, वृक्ष, पगडंडियां हिम से ढ़के हुये। ऐसे दुर्गम पर्वतों पर आपरेशन स्पैरो, अर्थात बेस प्वाईट से सीधे अस्त्र–शस्त्र, मशीनगन तथा स्टैन्ली टैंकों के साथ शत्रु के बंकर–बंकर ध्वस्त तथा नष्ट करते हुये स्पैरो की सीध पर द्रास, करगिल और लेह तक पहुंचना तथा वहां से शत्रु को खदेड़ देना। सम्पूर्ण युद्ध की व्यूह रचना वास्तव में आश्चर्यजनक थी। सबसे अधिक आश्चर्यजनक एवं अदभुत उपलब्धि यह थी कि जोजिला दर्रे के मस्तिष्क को चक्र की तरह घुमाने वाली ऊंचाई लगभग 12 हज़ार फुट की चढ़ाई पर सेना के साथ स्टेनली टैंकों को रोल अप कर दिया गया। इन टैंकों को देहली में डिसमेन्टल कर दिया गया और फिर सोनमर्ग में पुनः जोड़ कर चालू हालत में कर दिया गया और औपरेशन स्पैरो में इन टैंकों का प्रयोग किया गया। यह कार्य इतनी कुशलता और दक्षता के साथ सम्पन्न किया गया कि शत्रु को इस सम्भावना का आभास तक नही हुआ। ऐसी अनुपम दक्षतापूर्ण कार्यकुशलता एवं उपलब्धि जिसमें टैंकों को 11578 फीट की ऊँचाई पर पहुंचाना तथा फिर दुगर्म क्षेत्र में चालू करना विश्व के सैन्य इतिहास में आज तक सर्वोत्तम कीर्तिमान है जिसने उस समय समस्त विश्व को अचम्भे में डाल दिया थां।

एक अन्य कठिनाई सामने थी। इस आपरेशन की घोषणा एवं उसके अनुरूप आरम्भिक कार्यवाही होते–होते नवम्बर माह आरम्भ हो गया था तथा उसके साथ ही भयंकर एवं भीषण हिम वर्षा प्रारम्भ हो गयी थी। हीरे जड़े हुये चांदी के से हिमवस्त्र पहन कर शीत काल अपने सम्पूर्ण राजसी ठाट बाट से धवल वर्दी एवं चांदी की चमचमाती बर्छियां लिये अपने अनुचरों के साथ अर्थात हिमपात का झंझावात,

लिये अपने अनुचरों के साथ अर्थात हिमपात का झंझावात, बर्छियों सी तीव्र तीखी हिम पर्वतों की शीत पवन लहरियां, हिम की फुआरों के थपेड़े, आंखे अन्धी करने वाली हिम की आंधियां। प्रातः काल का समय ऐसे जैसे मानो ढ़लती धूप और सांयकाल का समय जैसे बढ़ती हुई रात्रि और रात्रि में चारों ओर घना अंधकार। आग जलाने के लिये वृक्ष की एक सूखी डाल तक नहीं। ऊंचे ऊंचे वृक्ष चट्टाने जैसे हिम की मूर्तियां मौन, कठोर एवं निर्भय।

युद्ध के अन्तराल में तोपों के धमाके, मशीनगन और बन्दूकों की धांय – धांय, निरन्तर घनघोर बमबारी उसके साथ ही टैंकों की गर्जना और घड़घड़ाहट, शत–शत सिंहों का सा भयंकर नाद तथा पर्वतों की श्रृंखलाओं से टकराती हुई गूंज अनुगूंज। शत्रु के बंकर–बंकर पर भारतीय सैनिकों के साहसपूर्ण आक्रमण पर आक्रमण। घुसपैठियों के हौसलें पस्त होने लगे और वह पीछे हटने लगे।

ऐसी ही हिमपात की शीत बौछारों में उतंग हिम शिखरों और खाईयों को पार करते हुये ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल ने सशस्त्र सेना की टुकड़ियों के साथ सात स्टेनली टैंकों को जोजीला दर्रे की ऊंचाई तक पहुंचा दिया जो विश्व के सैन्य इतिहास में एक नया कीर्तिमान था।

शत्रु के सैनिक आतंकित एवं भयभीत हो गये। क्योंकि पाकिस्तान के शासकों को रणनीति बनाते समय स्वप्न में भी यह ध्यान नहीं आया कि भारतीय सेना के टैंक कभी इतनी ऊंचाई तक पहुंच सकते हैं। उनके सारे वलवले और हौसले एकदम पस्त हो गये और वह अपनी दु[illegible] कर रण क्षेत्र से तीव्र गति के साथ भागने लगे क्योंकि टैंकों की तोपों की मार का सामना करना उनके बूते की बात नहीं थी। इस सम्पूर्ण क्षेत्र पर भारत का पुनः आधिपत्य हो गया। इस प्रकार इस युद्ध क्षेत्र में शत्रु के लगभग 25 बंकर ध्वस्त करके उनमें संग्रहित अस्त्रों शस्त्रों को कब्जे

में लेकर उन प्वाईटों पर अधिकार कर लिया गया। प्वाईट 3339 का पुख्ता बंकर केवल 1 घंटे में ध्वस्त कर दिया गया। दिनांक 15 नवम्बर सन् 1948 को द्रास पर अधिकार कर लिया गया। हिम की ठिठुरन ऐसी विकट कि हाथ पैर एवं रक्त का प्रवाह थम जाये। हाथ सेकना या गर्म चाय काफ़ी पीना एक दिवा स्वप्न बन कर रह गया। लगभग 10 दिनों के पश्चात विमान द्वारा वहां सैनिकों के लिये खाद्य सामग्री गिरायी गयी थी।

अन्तोगत्वा ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल ने अपनी सशस्त्र सैन्य टुकड़ियों और टैंकों के साथ 24 नवम्बर सन् 1948 को एक विजेता के रूप में करगिल में प्रवेश किया। इस बीच लेह के क्षेत्र से भी घुसपैठियों को खदेड़ दिया गया था। इस प्रकार भारत के वीर सैनिकों के महापराक्रम, अदम्य साहस, शौर्य, अपूर्व रण–कौशल, अनुपम अनुशासन एवं मातृभूमि पर बलिदान हो जाने की भावना के कारण इस सम्पूर्ण क्षेत्र को घुसपैठियों से मुक्त करके भारतवर्ष की सुरक्षा को सुनिश्चित किया गया। इस प्रकार हमारे वीर सैनिकों ने विश्व में उच्चतम गिरिश्रृंगों पर विजय घोष का सिंहनाद कर दिया। इस अभूतपूर्व कार्य के लिये ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल को महावीर चक्र के अलंकरण से विभूषित किया गया।"

ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल ने युद्ध क्षेत्र से अपने बहनोई और भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू को संदेश भेजा कि वह उनको दो दिन का समय और दें ताकि वह सम्पूर्ण जम्मू–कश्मीर रियासत को घुसपैठियों से मुक्त करा सकें पर उस समय पंडित जवाहर लाल नेहरू ने लेडी एडविना माऊन्टबैटन के प्रभाव में कश्मीर मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र संघ में ले जाना कुछ अधिक उचित समझा। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रस्ताव पर 1 जनवरी सन् 1949 को भारत ने कश्मीर में एक तरफ़ा युद्ध विराम घोषित कर दिया।

कश्मीर में युद्ध समाप्त होने के पश्चात सन् 1949 के अगस्त माह में ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल की नियुक्ति लखनऊ में सब ऐरिया कमान्डर के

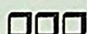
पद पर हो गई। जिसके कुछ समय पश्चात् जनरल आफ़िसर कमांडिंग मेजर जनरल गुरदीप सिंह ढिल्लो को पक्षाघात हो गया और उनके स्थान पर तत्कालीन जी0ओ0सी0 इन सी0 लेफ़्टिनेन्ट जनरल नाथू सिंह ने ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल को नियुक्त कर दिया। उसी वर्ष नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में मेरठ में सेना के अभ्यासों का प्रदर्शन आयोजित किया गया जिसमें ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल ने सक्रिय भाग लिया। आप इस अभ्यास के तुरन्त पश्चात मेरठ से अपने परिजनों से मिलने के लिये दिल्ली चले गये जहां उस समय आपके अग्रज भ्राता लेफटिनेन्ट जनरल हीरा लाल अटल नियुक्त थे। आपने अपने अग्रज भ्राता से मनोरंजन के लिये शिकार के आयोजन की बात कही। 25 नवम्बर सन् 1949 को दिल्ली के निकट के जंगलों में शिकार खेलने का कार्यक्रम बनाया गया। आप जब हरियाणा के रोहतक तथा गुड़गांव के निकट के जंगलों में एक हिरन का शिकार के लिये पीछा कर रहे थे तो आकस्मात दिल का दौरा पड़ जाने के कारण आप वहीं मूर्छित होकर गिर पड़े और इसके पूर्व की आपका कोई उपचार किया जाता आपकी उसी घने जंगल में लगभग 36 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी।

भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने आपकी इस आकस्मिक दुःखद मृत्यु पर गहरा शोक प्रकट किया और आपको देश का एक महान सपूत बताया पंडित नेहरू ने कहा कि हमने एक निष्ठावान, पराक्रमी और अदम्य साहस वाल सैन्य अधिकारी खो दिया जिसने अपने रण कौशल द्वारा अनेक कीर्तिमान स्थापित किये और विश्व के सैन्य इतिहास में एक नये अध्याय की रचना की।

ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल का बहुत ही आकर्षक व्यक्तित्व था। उनका सुडौल गठा हुआ शरीर, गोरावर्ण, चेहरे पर सौम्यता और लगभग 6 फुट 6 इंच का कद हर व्यक्ति को बहुत अधिक प्रभावित करता था। वह जहां भी जाते एक आकर्षण का केन्द्र बन जाते थे। आप बहुत ही व्यवहार कुशल, ईमानदार, सत्यनिष्ठ तथा आडम्बर विहीन व्यक्ति थे। आपकी युद्धभूमि में रची हुयी अनेक गाथायें सदा स्वर्ण अक्षरों में लिखी जायेंगी। आप अपने परिजनों और मित्रों में बग्गा के नाम से जाने जाते थे।

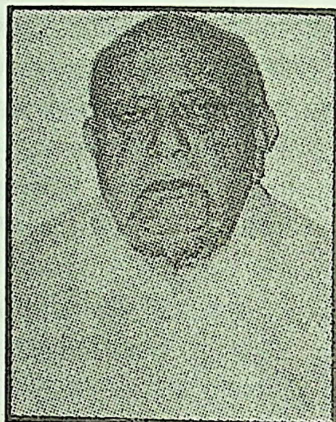
आपका विवाह सन् 1943 के आस पास लाहौर निवासी दीवान आनन्द कुमार रैना छिजबल्ली की सुपुत्री सुश्री चन्द्र प्रभा (नन्नो) के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके एक पुत्र विवेक मधुसूदन अटल तथा एक पुत्री फुलमाया (बिल्लो) है। जिनका विवाह राजन मिश्र के साथ सम्पन्न हुआ है। विवेक मधुसूदन अटल की पत्नी का नाम रूपा है! इस दम्पति के दो पुत्रियां मिताली और नन्दिता हैं आजकल विवेक मधुसूदन अटल कोलकाता में क्वीन्स पार्क के 7/1, क्षेत्र में फ्लैट नं0 2 सी में रहते हैं। ब्रिगेडियर कन्हैया लाल अटल की धर्मपत्नी श्रीमती चन्द्रप्रभा अटल का 6 मार्च सन् 1995 को दिल्ली में लगभग 74 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। किसी उर्दू के शायर द्वारा रची हुई निम्नलिखित भावपूर्ण पंक्तियां बिरादरी के नवयुवकों तथा नवयुवतियों के लिये काफ़ी अर्थपूर्ण प्रतीत होती हैं।

"है एक मंज़िल रास्ते हैं कई
किधर से जायें ख़बर नहीं
बिछे हैं कांटे संभल के चलना
क्योंकि यह आसां सफ़र नहीं।"



एक विद्वान न्यायविद् तथा कर्मठ समाजसेवी

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट



आज से बहुत समय पूर्व किसी उर्दू के प्रसिद्ध शायर ने निम्नलिखित भावपूर्ण पंक्तियां रचीं थी।

गिरते हैं शहसवार ही
मैदान–ए–जंग में,
वह तिफ़्ल क्या गिरेगा
जो घुटनों के बल चले

वास्तव में कुछ मनुष्य संघर्ष को ही जीवन का मुख्य सार मानते हैं और इस नाते वह हर प्रकार की चुनौतियों का डट कर सामना करने के लिये सदा तत्पर रहते हैं। वह किसी के पद चिन्हों पर चलने के स्थान पर स्वयं कालचक्र के मरूस्थल पर अपने पद चिन्ह बनाने में अधिक विश्वास रखते हैं। वह अपने कार्यकलापों द्वारा व्यापक समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास करते हैं ताकि समय के साथ स्थापित आदर्शो एवं मूल्यों में परिवर्तन लाकर उनमें एक गति प्रदान की जा सके और समाज में एक नयी चेतना जागृत हो। इस प्रकृिया में कभी–कभी प्राचीन एवं नवीन विचारधाराओं के मध्य एक सेतु का कार्य भी करना पड़ता है ताकि समाज की समरसता बनी रहे और उसमें किसी प्रकार के विघटन या बिखराव की स्थिति न उत्पन्न होने पाये क्योंकि बहुत अधिक प्रगतिशील और उदारवादी बनने की होड़ में कभी कभी लाभ कम और हानि अधिक उठानी पड़ जाती है और यह जानकर तब बहुत कष्ट होता है कि अपने हाथों से तोते अब उड़ चुके हैं और परिस्थितियों से समझौता करने के अलावा कुछ शेष नहीं बचा है। एक विद्वान व्यक्ति सदैव इस प्रकार की स्थिति से अपने को बचाने का प्रयास करता है पर वह अपनी इस चेष्टा में कहां तक सफ़ल हो पाता है यह निश्चित रूप से उसके भाग्य पर निर्भर करता है। कश्मीर घाटी में निष्काम कर्म द्वारा संघर्ष करते हुए अपने को समाज में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप में स्थापित करने की एक लम्बी

परम्परा रही है। जिसमें अनेक व्यक्तियों ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों म महत्वपूर्ण कार्य कर ख्याति अर्जित की है और विभिन्न वर्गो में प्रतिष्ठा पाई है। एंसं ही गणमान्य व्यक्तियों की अग्रिम श्रृंखला में एक नाम न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट का है। जिन्होंने अपने लम्बे जीवन काल में कश्मीरी पंडित समाज के लिये अनेक ऐसे महत्वपूर्ण कार्य किये जिनके लिये वह सदैव स्मरण किये जायेंगे।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट का जन्म 28 फरवरी सन् 1910 को कश्मीर घाटी के फुलवामा जनपद के एक छोटे से गांव मुरान में हुआ था जहां आपके पिता पंडित महेश्वर नाथ भट एक प्राईमरी स्कूल के हेड मास्टर थे और सारे गांव में "मास्टर जी" के नाम से जाने जाते थे। आपके पितामह का नाम पंडित कृष्ण भट था। न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट की माताजी श्रीमती सुमित्रा देवी भी एक प्राईमरी स्कूल की अध्यापिका थीं जबकि उस समय घाटी में महिलाओं की शिक्षा पर कोई विशेष महत्व नहीं दिया जाता था।

ऐसा कहा जाता है कि इस भट परिवार के पूर्वज पंडित भवानी भट (1770–1840) कभी उत्तरी कश्मीर के सम्बल गांव में निवास करते थे जहां वर्षा ऋतु में पानी भर जाने से आवागमन अवरूद्ध हो जाता था और उस गांव के निवासियों को बहुत कठिनाई झेलनी पड़ती थी। पंडित भवानी भट बहुत ही भक्तिभाव से नित्य पूजा–अर्चना करते थे और एक बार माघ अष्टमी के दिन उनकी पूजा–अर्चना से प्रसन्न होकर उनको स्वप्न में मां भगवती ने दर्शन दिये और कहा कि कल प्रातः काल तुमको अपने आवास के प्रांगण में एक बिल्ली दिखाई देगी तुम उसका पीछा करना जहां वह रूक जाये वहीं तुम्हारा निवास होगा जो तुम्हारे हर प्रकार के कष्टों का निवारण करेगा।

दूसरे दिन प्रातः काल मां भगवती ने पंडित भवानी भट को बिल्ली के रूप में दर्शन दिये। पंडित भवानी भट ने मां भगवती की आज्ञानुसार उस बिल्ली का पीछा किया जो मुरान गांव पहुंचने पर अन्तर्ध्यान हो गयी और पंडित भवानी भट ने वहीं अपना डेरा जमा दिया। उस स्थान पर ब्राद में एक सोता फूट पड़ा जिस पर पंडित लोकेत भट ने सन् 1849 में एक मन्दिर का निर्माण कराया जो अब ब्रारी मेज़ के नाम से प्रख्यात है।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट अपने बाल्यकाल से ही एक मेधावी छात्र रहे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने गांव मुरान में ही सम्पन्न हुई। आपने तदपश्चात श्रीनगर के श्रीप्रताप कालेज से अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा सन् 1926 में

उत्तीर्ण की। आपने तदुपरान्त लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से क्रमशः अपनी एफ0ए0 की परीक्षा सन् 1928 में तथा बी0ए0 की परीक्षा सन् 1930 में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। आपने बी0ए0 की परीक्षा में पूरे विश्वविद्यालय में तृतीय स्थान प्राप्त किया जिसके लिये आपको एक प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया गया।

आप सन् 1930 में कश्मीर घाटी से लखनऊ आ गये और आपने लखनऊ विश्वविद्यालय में एम0ए0 अंग्रेज़ी साहित्य के प्रथम वर्ष में प्रवेश ले लिया। आपने सन् 1932 में लखनऊ विश्वविद्यालय से एम0ए0 तथा एल–एल0बी0 की परीक्षायें साथ साथ उत्तीण कीं जो उस समय तक प्राविधान था। आपने एम0ए0 की परीक्षा में सबसे अधिक अंक प्राप्त कर एक नया कीर्तिमान स्थापित किया और एल–एल0 बी0 की परीक्षा में अति विशिष्ट स्थान पाया।

आपने अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात सन् 1933 में कश्मीर घाटी में शोपियां जिले में अपनी वकालत प्रारम्भ की। आपने साथ ही साथ वहां की सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में खूब खुल कर भाग लेना प्रारम्भ कर दिया।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट ने अपने कालेज के जीवन में सदैव अपनी योग्यता के बल पर छात्रवृत्ति पाई और अपनी कक्षा में प्रथम स्थान पाया। आपकी खेल कूद में भी विशेष रूचि रही। आप क्रिकेट से विशेष प्रेम करते थे और अपने कालेज की क्रिकेट टीम के कैप्टेन थे। आप कालेज की लाईब्रेरी एसोसिएशन के सेक्रेट्री भी रहे। आपको वाद–विवाद में भी रूचि थी और आपने अनेक कालेज स्तरीय वाद–विवाद प्रतियोगिताओं में अनेक पुरस्कार प्राप्त किये। आप कालेज की यू0टी0सी0 की ईकाई के कमाण्डर थे और हर क्षेत्र में अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा दिखाने के कारण कालेज के प्रिंसपिल द्वारा हरफ़नमौला होने के नाते गोल्ड मेडल से सम्मानित किये गये थे।

आपने एक कुशल तथा अनुभवी वकील के रूप में शोपियां में लगभग 12 वर्ष सन् 1944 तक वकालत की और वहां की सामाजिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लिया। आप वहां टाउन ऐरिया कमेटी के उपाध्यक्ष रहे जिसके तत्वावधान में आपने शोपियां में अनेक नगर विकास तथा सामाजिक सुधार के कार्यक्रम सम्पादित कराये ताकि नागरिकों को बेहतर सुविधायें मिल सकें। आप फूड कन्ट्रोल बोर्ड के भी अध्यक्ष रहे जिसके माध्यम से आपने जनता में सुचारू रूप से खाद्यान्न के वितरण की व्यवस्था को चुस्त–दुरूस्त बनाया और

हर व्यक्ति को उसकी आवश्यकता अनुसार खाद्यान्न को उपलब्ध कराना सुनिश्चित किया। आप वहा की शिक्षण संस्थाओ की प्रबन्ध समितियों के भी सम्मानित सदस्य रहे और अपने महत्त्वपूर्ण सुझावो द्वारा घाटी में शिक्षा के प्रचार और प्रसार के क्षेत्र में एक सक्रिय भूमिका निभाते रहे।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट अपनी वकालत को और अधिक चमकाने के उद्देश्य से सन् 1945 के आसपास शोपिया से रियासत की ग्रीष्म कालीन राजधानी श्रीनगर चले गये और वहां उच्च न्यायालय में वकालत करने लगे। कुछ ही वर्षो में आपकी गणना श्रीनगर में प्रतिष्ठित वकीलों में होने लगी। आप उस समय घाटी के कुछ उन गिने चुने लोगों में थे जिनके पास मोटर कार थी। आपने श्रीनगर आने के पश्चात राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। आपने शेख़ मोहम्मद अब्दुल्ला की पार्टी नेशनल कांफ्रेंस की सदस्यता ग्रहण कर ली और सन् 1947 में आप कश्मीर घाटी के गांव के हिन्दू निर्वाचन क्षेत्र से रियासत की प्रजा सभा के सदस्य निर्वाचित घोषित किये गये। आपने प्रजा सभा के सदस्य के रूप मे रियासत में अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये।

देश के 15 अगस्त सन् 1947 को स्वतंत्र होने के पश्चात पाकिस्तान समर्थित कबाईलियों ने उरी बारामुला मार्ग से 22 अक्टूबर सन् 1947 को जम्मू–कश्मीर रियासत पर आक्रमण कर दिया जिसके उपरान्त रियासत के शासक माहाराजा हरि सिंह (1925–1947) ने 26 अक्टूबर सन् 1947 को एक लिखित दस्तावेज़ द्वारा अपनी रियासत का भारत मे पूर्ण रूप से विलय कर दिया और इस प्रकार जम्मू–कश्मीर भारत का एक अभिन्न अग बन गया।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट इस ऐतिहासिक घटना के पश्चात सन् 1948 में रियासत में शेख मोहम्मद अब्दुल्ला के प्रधानमंत्री होने के कार्यकाल में नेशनल हाई स्कूल के संस्थापक अध्यक्ष बन गये। आप फिर सन् 1962 में रियासत की असेम्बली में श्रीनगर के अमीराकदल निर्वाचन क्षेत्र से नेशनल कांफ्रेस के सदस्य मनोनीत किये गये। आपने रियासत की असेम्बली के सदस्य के रूप में लगभग एक वर्ष कार्य किया। आपको सन् 1963 के अप्रैल माह में जम्मू कश्मीर रियासत के उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बना दिया गया। आपने लगभग 9 वर्ष न्यायाधीश के रूप में कार्य किया और अनेक पेंचीदा मुकदमों में अपने तर्क संगत तथा विवेकपूर्ण निर्णय दिये और अपनी कानूनी विद्वता का परिचय दिया। आप 62 वर्ष की आयु पूर्ण करने पर 28 फरवरी सन् 1972 को सेवानिवृत्त हुऐ।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट अपने इस लम्बे संघर्षमय जीवन में घाटी की अनेक समाज सेवी संस्थाओं और संगठनों से सक्रिय रूप से जुड़े रहे। आप नेशनल कान्फ्रेन्स की जनरल कौन्सिल के एक सम्मानित सदस्य रहे। आप घाटी की कश्मीरी पंडित सभा के वरिष्ठ उपाध्यक्ष भी रहे और उसके तत्वावधान में बिरादरी के उत्थान के लिये अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये तथा अनेक प्रतिनिधिमण्डलों का नेतृत्व किया। आप श्रीनगर के बर–बर शाह मुहल्ले में स्थित रतन रानी अस्पताल के ट्रस्टी रहे। आप गांधी मेमोरियल कालेज की प्रबंध समिति में उपाध्यक्ष रहे।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट ने विश्व के अनेक देशों का व्यापक भ्रमण किया है जिसमें अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जापान, इण्डोनेशिया, श्रीलंका, स्वीटज़रलैण्ड, बर्मा, मलाया प्रमुख हैं। आप देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू से लेकर प्रधानमंत्री राजीव गांधी के कार्यकाल तक हर प्रधानमंत्री से कश्मीरी पंडितों के प्रतिनिधिमण्डलों में एक वरिष्ठ सदस्य के रूप में मिल चुके हैं और अनेक समाचार पत्रों, पत्रिकाओं तथा अन्य मैगज़ीनों में कश्मीरी पंडितों की समस्याओं पर अपने शोध परक तथा विचारोत्तेजक लेख प्रकाशित करा चुके हैं। पर किन्हीं कारणों से आपके समाज के प्रति किये गये अमूल्य योगदान का आजतक सही मूल्यांकन नहीं हो सका। जिसके कारण आपको वह संतोष और सुख नहीं प्राप्त हो सका जिसकी आपने बिरादरी से अपेक्षा कभी की थी पर आपको उसका कोई गिला शिकवा नहीं है क्योंकि आप कर्म पर विश्वास करते हैं उसके फल पर नहीं। आपने अपनी 92 वर्ष की आयु में जीवन के अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं और चुनौतियां का सामना किया है। आपके जीवन के खट्टे मीठे अनुभव स्वयं आपके लिये एक प्रेरणा का श्रोत रहे है जिन्होंने सदैव आपको अपना लक्ष्य प्राप्त करने की शक्ति प्रदान की और आपकी प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया। समाज सेवा तथा निष्काम कर्म ही आपके जीवन का मूलमंत्र रहा और आप अपने जीवन की उपलब्धियों से पूर्ण रूप से संतुष्ट है।

न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट का विवाह उनके पैतृक आवास के निकट के एक गांव के निवासी पंडित श्रीकान्त की सुपुत्री सुश्री धनवन्ती के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र और एक पुत्री हैं। आपका बड़ा पुत्र एक जानामाना बिल्डर है और उत्तर प्रदेश में नोयडा में रहता है। आपका छोटा पुत्र वैज्ञानिक

है और अमेरिका में रहता है। न्यायमूर्ति जानकी नाथ भट आजकल जम्मू के सरवल मुहल्ले में अपने आवास 47 लोवर लक्ष्मी नगर में रहते हैं और अपना समय अधिकतर लेखन और चिंतन में व्यतीत करते हैं। आप वास्तव में एक निष्ठावान कर्मयोगी है जिसके लिये जीवन का हर क्षण मूल्यवान है। मनुष्य के जीवन के महत्व को परिभाषित करते हुये किसी कवि ने अपने उदगार कुछ इस प्रकार प्रकट किये हैं।

"सर्प की फुंकार ही है ज़िन्दिगी
सिंह की हुंकार ही है ज़िन्दिगी
जिससे न दहले कलेजा विश्व का
वह सदा बेकार ही है जिन्दिगी"



संगीत और कला के एक निष्ठावान उपासक

प्रो० उदय शंकर कोचक



संगीत के बिना जीवन नीरस माना जाता है। भारतीय सभ्यता का संगीत एक अभिन्न अंग है। जिसकी परम्परा आदिकाल से चली आ रही है। भगवान शिव को संगीत तथा नृत्य का आराध्य देव माना गया है। भारत में वैदिक काल से लेकर मध्यकालीन युग तक संगीत की एक लम्बी परम्परा रही है जिसमें अनेक महान संगीतज्ञों ने जन्म लिया और देश के विभिन्न राजदरबारों में मान-सम्मान पाया। इसी देश में बैजूबावरा तथा तानसेन जैसे महान गायकों ने जन्म लिया जिनके द्वारा दीपक राग गाने पर दीप प्रज्जवलित हो उठते थे और मल्हार राग गाने पर वर्षा होने लगती थी।

मुग़ल शासन काल में दिल्ली दरबार में तथा अवध में नवाबी शासन काल में लखनऊ में बड़े-बड़े गायकों तथा अन्य कलाकारों को शासकों का आश्रय मिला और यह विधा विकसित और लोकप्रिय हुई परन्तु मुग़ल शासन के पतन के पश्चात यह कला तवायफ़ों के कोठों तक ही सीमित हो गयी तथा सम्भ्रान्त परिवार के व्यक्ति ब्रिटिश शासन काल में नाच-गाने को कुछ घटिया स्तर का शौक़ समझने लगे और उससे स्वाभाविक रूप से परहेज़ करने लगे। समाज की इसी बदली हुई मानसिकता तथा पिता के भय के कारण प्रो0 उदय शंकर कोचक चोरी चोरी चुपके चुपके लखनऊ के तत्कालीन मेरिस म्यूजिक कालेज में संगीत की शिक्षा लेने लगे ताकि परिवार के किसी सदस्य को उसकी भनक न लगे और वहां से संगीत में पूर्ण रूप से दक्षता प्राप्त करने के पश्चात आपने देश के अनेक विश्व विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में न केवल संगीत को एक विषय के रूप में मान्यता दिलवायी अपितु व्यापक समाज में सगीत की मानमर्यादा और प्रतिष्ठा को

पुनः एक सम्मानजनक स्थान दिलाया जो वास्तव में आपका एक बहुत ही सराहनीय कार्य कहा जायेगा।

प्रो0 उदय शंकर कोचक के पूर्वज, अवध में नवाब, आसफ़उद्दौला (1775—1798) के शासन काल में कश्मीर घाटी से निकल कर लखनऊ में आ ग़ये थे और चौपटियों में निवास करने लगे जहां उस समय शाही कोषागार स्थित था। कालान्तर में नवाब ने उनको शाही कोषागार का एक मुनासिब हाकिम बना दिया जिनका कार्य दरबारी कर्मचारियों को वेतन वितरण करना था। उस समय शाही दरबार मच्छी भवन में लगा करता था जिसको अंग्रेज़ों ने सन् 1857 के ग़दर में ध्वस्त कर दिया तथा बाद में उस स्थान पर सन् 1905 के आस पास किंग जार्ज मेडिकल कालेज का निर्माण प्रारम्भ हुआ।

प्रो0 कोचक के पितामह पंडित इक़्बाल शंकर कोचक चौपटियों में सिन्दोहन देवी के मन्दिर के निकट अपनी पैतृक हवेली में रहते थे वह एक साधारण स्वभाव के सीधे साधे व्यक्ति थे। आपके पुत्र पंडित तेज शंकर कोचक अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात ब्रिटिश शासन काल में उत्तर प्रदेश सरकार के कृषि विभाग में नौकर हो गये थे। पंडित तेज शंकर कोचक का विवाह लाहौर निवासी सुश्री कैलास किशोरी तैमनी के साथ सन् 1908 के आस पास हुआ था। पंडित तेज शंकर कोचक के दो पुत्र क्रमशः उदय शंकर और शारदा शंकर तथा चार पुत्रियां रानी, रूपन, मिक्खन और किशन थीं। जिनमें रानी का विवाह जोधपुर रियायत के निवासी पंडित राम नाथ कुंजरू के साथ, रूपन का विवाह जोधपुर रियासत के निवासी पंडित कामेश्वर नाथ हुक्कू के सुपुत्र पंडित हरिहर नाथ हुक्कू के साथ, मिक्खन का विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित हरि नारायण रैना तथा किशन का विवाह फैजाबाद के निवासी पंडित राम चन्द्र रैना के साथ सम्पन्न हुआ था।

पंडित शारदा शंकर कोचक अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात रेलवे के अभियन्ता हो गये थे आपका विवाह सुश्री रेनुका बैनर्जी के साथ सम्पन्न हुआ था जो लखनऊ विश्वविद्यालय में आपके छात्र जीवन में आपकी सहपाठी थी और जिनके पिता प्रो0 बी0 एन0 बैनर्जी उस समय वनस्पति विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष थे।

प्रो0 उदय शंकर कोचक का जन्म 4 मार्च सन् 1912 को कानपुर में हुआ था जहां उस समय आपके पिता कानपुर के राजकीय कृषि महाविद्यालय में

प्रवक्ता थे। कुछ वर्षों के पश्चात आपके पिता का कानपुर से बुलंदशहर के राजकीय कृषि महाविद्यालय के प्राचार्य के पद पर स्थानान्तरण हो गया इस कारण प्रो0 कोचक की प्रारम्भिक शिक्षा कानपुर तथा बुलंदशहर में सम्पन्न हुई। आपके पिता का बुलंदशहर से फिर खुर्जा स्थानान्तरण हो गया जहां से प्रो0 कोचक ने अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा सन् 1928 में तथा एफ0एस–सी की परीक्षा सन् 1930 में उत्तीर्ण की।

प्रो0 कोचक उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से फिर खुर्जा से लखनऊ चले आये जहां आपके पितामह पंडित इक़्बाल शंकर कोचक चौपटियों में रहते थे। प्रो0 कोचक ने सन् 1930 में लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1932 में बी0एस–सी0 तथा सन् 1934 में भौतिक विज्ञान में एम0एस–सी0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने तद्पश्चात भौतिक विज्ञान विभाग में एक शोधकर्ता के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया आपका शोध करने का विषय था "Accoustical Improvements of the Indian Musical Instruments". आप उस समय लखनऊ विश्वविद्यालय के भौतिक विज्ञान विभाग में प्रवक्ता नियुक्त हो गये थे।

प्रो0 कोचक को अपनी बाल्यावस्था से ही संगीत के प्रति एक विशेष प्रेम था इस नाते जब वह लखनऊ विश्वविद्यालय में शिक्षा ग्रहण कर रहे थे तो उन्होंने घर में बिना किसी को सूचित किये हुये संगीत की शिक्षा लेने के लिये क़ैसरबाग़ में स्थित राजकीय मैरिस म्यूजिक कालेज में प्रवेश ले लिया जहां उस समय सांयकालीन कक्षायें चलती थीं। यह कालेज लखनऊ में राय उमानाथ बली के प्रयासों से सन् 1926 में स्थापित हुआ था और जिसका नाम तत्कालीन प्रदेश के लेफ़्टिनेन्ट गर्वनर सर विलियम्स मैरिस के नाम पर मैरिस कालेज ऑफ म्यूज़िक रखा गया। इस प्रसिद्ध म्यूज़िक कालेज की नींव एक प्रकार से पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे ने बम्बई से लखनऊ आकर सन् 1920 में रखी जब उन्होंने चाईना बाज़ार स्थित तोप वाली कोठी में केवल छः छात्रों को संगीत की शिक्षा विधिवत देनी प्रारम्भ की। पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे इस कालेज में प्रथम प्राचार्य बने और देश के स्वतंत्र होने के पश्चात उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर इस कालेज के नाम को बदल कर उनकी मधुर स्मृति में भातखण्डे संगीत महाविद्यालय रख दिया गया जिसका स्तर अब ऐक विश्वविद्यालय के समान कर दिया गया है।

प्रो0 कोचक ने इसी प्रसिद्ध संगीत महाविद्यालय से डॉ0 श्रीकृष्ण नारायण रतनजानकर के कुशल संरक्षण में अपनी गायन की विशारद की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। उस समय की संगीत की परीक्षा बहुत ही कठिन होती थी सब राग भलिभांति तैयार करने पड़ते थे। सब रागों का ख़याल, ध्रुवपद, धमार, लक्षणगीत, तराना इत्यादि का पूरा अभ्यास करके उनमें निपुण होना पड़ता था। प्रो0 कोचक के गायन के क्षेत्र में गुरू थे, डॉ0 रतनजानकर, ग्वालियर घराने के राजा भय्या, बड़ौदा के बाडीवाल, मैहर के उस्ताद अलाउद्दीन खां तथा बनारस के श्री बसु जिन्होंने प्रो0 कोचक के गायन की परीक्षा ली थी। ज्योंहि परीक्षार्थी इन महान विभूतियों के सम्मुख परीक्षा देने के लिये बैठता वह तुरन्त कहते "तीव्र मध्यम लगाओ" कोमल निषाद लगाओ उन्हीं के आदेश पर प्रो0 कोचक ने दरबारी कन्हड़ का बड़ा खयाल गाया था "सुबे से हरवा गुंद गुंद मालिनियां सुख पावे।"

सन् 1945 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में संगीत और ललित कलाओं का एक नया विभाग स्थापित किया गया जिसके लिये एक प्रवक्ता के पद का विज्ञापन प्रकाशित हुआ। प्रो0 कोचक की संगीत में विशेष रूचि थी अतः उन्होंने इस पद के लिये अपना प्रार्थना पत्र भेज दिया। आपको इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा गठित चयन समिति जिसके सदस्य डॉ0 अमर नाथ झा, डॉ0 हृदय नाथ कुंजरू, डॉ0 तारा चन्द, डॉ डी0 आर0 भट्टाचार्य तथा प्रो0 जी0डी0 करवाल जैसे प्रख्यात व्यक्ति थे ने केवल आपकी योग्यता के आधार पर बिना कोई साक्षात्कार लिये उस पद पर आपका चयन कर लिया और आपको नियुक्ति पत्र प्रेषित कर दिया। अब प्रो0 कोचक के सम्मुख यह दुविधा उत्पन्न हुई कि वह नौकरी लखनऊ विश्वविद्यालय में करें या फिर इलाहाबाद विश्वविद्यालय को वरीयता दे क्योंकि लखनऊ में उनको अपने पैतृक आवास की सुविधा थी जहां उनके परिजन रहते थे जबकि उस समय इलाहाबाद उनके लिये एक अपरिचित नगर था।

प्रख्यात वनस्पति शास्त्री प्रो0 बीरबल साहनी उस समय लखनऊ विश्वविद्यालय में विज्ञान संकाय के सकायाध्यक्ष थे। उन्होंने प्रो0 कोचक को सलाह दी कि वह इलाहाबाद विश्वविद्यालय में संगीत के प्रवक्ता का पद अविलम्ब स्वीकार कर लें। प्रो0 साहनी ने प्रो0 कोचक से कहा कि कोचक संगीत तुम्हारा जीवन है तुम्हें भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में अपने संगीत के ज्ञान से कोई विशेष लाभ नहीं प्राप्त होगा जबकि संगीत के क्षेत्र में भौतिक विज्ञान के ज्ञान की अपार सम्भावनाऐं हैं जिनका तुम भरपूर लाभ लेके संगीत की दुनिया में कमाल

हासिल कर सकते हो। प्रो0 कोचक को प्रो0 बीरबल साहनी के यह शब्द कुछ अमृत वाणी से प्रतीत हुऐ और वह सन् 1945 में लखनऊ से इलाहाबाद के लिये प्रस्थान कर गये।

प्रो0 कोचक इस प्रकार इलाहाबाद विश्वविद्यालय के नव गठित संगीत तथा ललित कला विभाग की नींव का पत्थर बने जो उस समय पूरे देश में विश्वविद्यालय के स्तर की शिक्षा में प्रथम प्रयास था जहां संगीत को एक विषय के रूप में पाठ्यक्रम में मान्यता मिली थी। प्रो0 कोचक ने संगीत शिक्षा का प्रथम सत्र केवल पांच छात्राओं का प्रवेश लेकर प्रारम्भ किया और अपने कठोर परिश्रम और अथक प्रयासों द्वारा संगीत शिक्षा के प्रचार तथा प्रसार में अभूतपूर्व कार्य किया। प्रो0 कोचक ने अपने प्रयासों से यू0पी0 बोर्ड की हाई स्कूल और इण्टरमीडिएट की परीक्षाओं में संगीत को एक विषय के रूप में मान्यता दिलायी और उसका पाठ्यक्रम निर्धारित किया।

प्रो0 कोचक ने शैने शैने अपने प्रयासों द्वारा देश के अनेक विश्वविद्यालयों में संगीत को एक विषय के रूप में मान्यता दिलायी और लगभग 45 विश्वविद्यालयों में संगीत विषय की चयन समितियों में आपने एक विशेषज्ञ की भूमिका निभायी। आप आकाशवाणी की संगीत कलाकारों की चयन समिति के भी माननीय सदस्य रहे। आप इस प्रकार विश्वविद्यालय के स्तर की संगीत शिक्षा के प्रथम प्राध्यापक बने।

प्रो0 कोचक ने जब 1945 में अपना पदभार ग्रहण किया उस समय इलाहाबाद विश्वविद्यालय में संगीत तथा ललित कलाओं के विभाग का न तो कोई अपना भवन था और न ही कोई विभाग में प्रवक्ता का पूर्णकालिक पद ही सृजित हुआ था। उस समय पंडित कुंवर कृष्ण सुखिया विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डॉ0 अमरनाथ झा से मिलने गये और उनसे इच्छा प्रकट की कि वह विश्वविद्यालय को 15,000/– रूपये दान करना चाहते हैं पर उनका नाम गोपनीय रखा जाये। डॉ0 झा ने श्री सुखिया से निवेदन किया कि वह यह राशि संगीत विभाग के प्रवक्ता के पद के लिये दान कर दें क्योंकि यह पद अभी सरकार द्वारा दी जाने वाली वित्तीय सहायता में सम्मिलित नहीं है और तीन वर्ष के पश्चात इस पद पर अनुदान प्राप्त होगा। कुछ वर्षों के अन्तराल के बाद उस पद के लिये प्रो0 कोचक ने विभाग में एक और प्रवक्ता नियुक्त कर लिया।

प्रो0 कोचक ने अपने प्रयासों द्वारा अखिल भारतीय संगीत सम्मेलन

आयोजित करके काफ़ी धन दान स्वरूप ऐकत्रित किया जिससे सन् 1954 के आस पास उन्होंने प्रदेश में डॉ0 सम्पूर्णानन्द के मुख्यमंत्री काल में विश्वविद्यालय में अपने विभाग के लिये एक नये भवन का निर्माण कराया तथा उस समय के आर्टस संकाय के संकायाध्यक्ष डॉ0 बाबूराम सक्सेना के विशेष आग्रह पर बी0ए0 की कक्षा में संगीत विषय में प्रवेश के लिये निर्धारित छात्रों की संख्या में वृद्धि की क्योंकि तब तक काफ़ी संख्या में छात्र संगीत की शिक्षा में रूचि लेने लगे थे।

प्रो0 कोचक ने संगीत विभाग को शून्य से प्रारम्भ करके एक नयी गति और दिशा दी और उसको सफलता के उच्चतम शिखर तक पहुंचाया। आपने लगभग 30 वर्ष पूरी निष्ठा के साथ इलाहाबाद विश्वविद्यालय के संगीत तथा ललित कलाओं के विभाग की सेवा की और सन् 1972 में अवकाश ग्रहण किया।

प्रो0 कोचक ने अब तक 10 शोधकर्ताओं को संगीत में डी0फिल0 की उपाधि दिलायी है। आपने अन्य विश्वविद्यालयों की लगभग 50 संगीत पर शोध ा पुस्तिकाओं का मूल्यांकन किया है और अब भी आपके संरक्षण में संगीत पर 5 विद्यार्थी शोध कार्य करने में संलग्न हैं। जो स्वयं उनके संगीत के प्रति प्रेम और योगदान को दर्शाता है। प्रो0 कोचक ने चीन के एक प्रसिद्ध संगीत शास्त्री प्रो0 लो को पत्राचार के माध्यम द्वारा हिन्दुस्तानी संगीत की विविधताओं से अवगत कराते हुये उसका मार्ग दर्शन किया जिससे वह प्रो0 कोचक के अथाह ज्ञान से बहुत अधिक प्रभावित हुआ और उनको कई वर्षों तक ताईवान से उपहार भेजता रहा।

प्रो0 कोचक की कार्य प्रणाली और उनके आत्म विश्वास से प्रसन्न और प्रभावित होकर डॉ0 अमर नाथ झा ने अपने कुलपति के कार्यकाल में उनको विश्वविद्यालय के सिविल लाईन्स में स्थित रौनक हास्टल का सुपरिन्टेन्डेन्ट बना दिया। आपने अनजाने में अपने हास्टल में एक नेपाली छात्र को प्रवेश दे दिया जिसको एक दूसरे हास्टल हालैंड हाल से अवांछनीय गतिविधियों के कारण निष्कासित किया जा चुका था। आपने उस नटखट छात्र को अपने व्यक्तित्व के प्रभाव और व्यवहार से न केवल सुधारा अपितु उसे जीवन में सदकाम करने की प्रेरणा दी। आपके कुशल मार्ग दर्शन में वह छात्र नेपाल के एक डिग्री कालेज में भूगोल का प्रवक्ता नियुक्त हो गया और आगे चल कर उसने नेपाल में त्रिभुवन विश्वविद्यालय की स्थापना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। पहले नेपाल में परिक्षायें बिहार के पटना विश्वविद्यालय द्वारा संचालित करायी जाती थीं। प्रो0 कोचक का

यह सहानुभूतिपूर्वक छात्रों को सुधारने का कार्य उनके विश्वविद्यालय के सेवाकाल में निरन्तर अबोध गति से चलता रहा।

प्रो0 कोचक ने एक संगीत और ललित कलाओं की विश्वविद्यालय में अलग से संकाय बनाने की योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को स्वीकृति के लिये नई दिल्ली भेजी जिसकी कार्य योजना को स्वीकृति भी प्राप्त हो गयी पर उसी बीच सन् 1962 में भारत और चीन के मध्य युद्ध छिड़ गया तथा उस योजना पर मिलने वाले अनुदान में कटौती के कारण उसका क्रियान्वयन सम्भव नहीं हो सका।

प्रो0 कोचक को अपने छात्र जीवन में गर्मियों की छुट्टियों को व्यर्थ व्यतीत करना बहुत कष्टदायक लगता था। वह अपना यह समय या तो कोई नये विषय को पढ़ने में व्यतीत करना या फिर नये खेल को सीखने में व्यतीत करना अधिक उपयोगी समझते थे।

प्रो0 कोचक ने अपने इस छुट्टियों के समय का सदुपयोग संस्कृत, बंगला, मराठी तथा उर्दू भाषाओं को सीखने में किया आपको चित्रकला, तैराकी, डाईविंग, बोटिंग, घुड़सवारी, हाकी, फुटबाल, क्रिकेट, टेनिस, वालीबाल, बैडमिन्टन, कैरम, शतरज, ब्रिज, इत्यादि खेलों में भी विशेष रूचि रही। आपको हस्तरेखाओं के ज्ञान तथा गोफ़ोलाजी में भी रूचि थी। आपने लखनऊ विश्वविद्यालय से जर्मन भाषा में डिप्लोमा प्राप्त किया था। प्रो0 कोचक ने बाद में बिलियर्ड, स्केटिंग तथा पोलो भी सीखा।

प्रो0 कोचक को अपने छात्र जीवन में महान विभूतियों के हस्ताक्षर और टिप्पणियां लेने का भी शौक रहा। महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने आपकी औटोग्राफ़ बुक पर बंगला में हस्ताक्षर किये और लिखा "अमार मातृभाषा आछे" वहीं कायदे आज़म मुहम्मद अली जिन्ना का वाक्य था "Never Despair" और भूलाभाई देसाई का आपको संदेश था "Never look back, always trust the future".

प्रो0 कोचक की देश के स्वतंत्र होने से पूर्व एक बार लाहौर विश्वविद्यालय के प्रो0 किचलू से इलाहाबाद में भेंट हो गयी जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय में क़दाचित किसी आवश्यक कार्य से आये थे। उन्होंने वार्तालाप मे प्रो0 कोचक को सुझाव दिया कि वह गांधी जी का "हरिजन" समाचार पत्र पढा करें उससे आत्म बल बढता है और मनुष्य को सदमार्ग पर चलने की प्रेरणा मिलती है। प्रो0 कोचक

ने उनके आग्रह पर हरिजन समाचार पत्र पढ़ना प्रारम्भ किया और वह उनके जीवन में बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ।

प्रो0 कोचक ने सन् 1955 में अपने कुछ नाट्य प्रेमी मित्रों के आग्रह पर इलाहाबाद आर्टिस्ट एसोसिएशन नाम की एक संस्था का गठन किया और आपने इस संस्था के माध्यम से लगभग 50 हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के हिन्दी में अनुदित नाटकों का सफल मंचन किया जिन्हें रंग प्रेमियों में काफ़ी लोक प्रियता मिली। प्रो0 कोचक इस संस्था के आज भी क्रियाशील अध्यक्ष है और संस्था द्वारा नाटकों के मंचन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। प्रो0 कोचक इलाहाबाद कल्चरल सेन्टर के भी कई वर्षो तक महासचिव रहे।

सन् 1982 में उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी ने प्रो0 कोचक को उनके संगीत के प्रति की गयी सेवाओं तथा योगदान के लिये अपनी रत्न सदस्यता देकर उन्हें सम्मानित किया।

गत 3 फरवरी सन् 2001 को प्रो0 कोचक को इलाहाबाद में प्रयाग संगीत समिति तथा संगीत सुरभि संस्थाओं द्वारा आयोजित संगीत महाकुम्भ की अध यक्षता करने का गौरव प्राप्त हुआ और आपने अपने सम्बोधन में बहुत ही महत्वपूर्ण संदेश वहां पर उपस्थित संगीत प्रेमियों तथा संगीत विशेषज्ञों को दिया जो स्वय उनके संगीत के प्रति प्रेम और आस्था को दर्शाता है।

प्रो0 कोचक का विवाह सन् 1932 के आस पास देहरादून के प्रसिद्ध तंख़ा परिवार के सदस्य पंडित बृज मोहन नाथ तंख़ा की सुपुत्री सुश्री रागनी तंखा के साथ सम्पन्न हुआ था। आपके दो पुत्र दीपक (कैलास शंकर कोचक) तथा संगीत है और एक पुत्री कविता है जिसका विवाह एक शिवपुरी परिवार में हुआ है।

पंडित कैलास शंकर कोचक अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात दिल्ली में स्थित इण्डियन इन्सटिच्यूट ऑफ़ फ़ारेन ट्रेड में शोध अधिकारी के पद पर नियुक्त होगये थे परन्तु आपकी कैंसर जैसा भयानक रोग हो जाने के कारण युवावस्था में ही मृत्यु हो गयी। आपकी मृत्यु के उपरान्त आपकी पत्नी गीता ने इलाहाबाद के एक व्यवसायी पंडित अजय वातल के साथ अपना दूसरा विवाह कर लिया। डॉ0 गीता वातल आजकल इलाहाबाद विश्वविद्यालय के रसायन विज्ञान विभाग में वरिष्ठ प्रवक्ता है।

पंडित संगीत कोचक आजकल दिल्ली में एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी में एक उच्च अधिकारी है आपका विवाह आगरा के निवासी पंडित मोहन कृष्ण कौल की

सुपुत्री सुश्री अंजलि कौल के साथ सम्पन्न हुआ है। आपकी पत्नी लेडी श्रीराम कालेज में प्रोफ़ेसर हैं

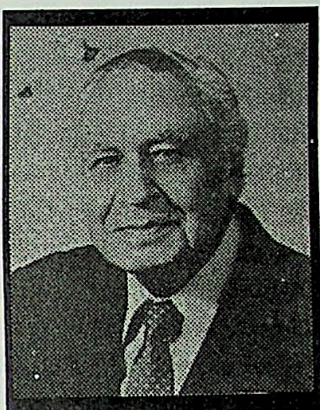
प्रो0 कोचक इस समय 90 वर्ष की आयु में भी एक सच्चे साधक की भांति संगीत साधना में लगे हुये है। आपके मार्ग दर्शन में 5 छात्र संगीत विषय पर डी0फिल0 की डिग्री के लिये शोध कार्य कर रहे हैं। प्रो0 कोचक ने सदैव अपने जीवन में समय के मूल्य को प्राथमिकता दी और समाज सेवा को अपने जीवन का मुख्य ध्येय माना। आपको सदैव दूसरे की सेवा करने में परम सुख की अनुभूति हुई और आपने निष्काम कर्म को अपने जीवन का मूल मंत्र बनाया। आपने अनेक परोपकारी कार्य किये और समाज के हर वर्ग से आदर और सम्मान पाया। आप सम्पूर्ण देश में प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने संगीत जैसे विषय को विश्वविद्यालय के स्तर पर मान्यता दिलायी जिसके लिये आपकी जितनी भी प्रशंसा की जाये कम है। आपने एक नये इतिहास की रचना की है जिसके लिये आप सदैव स्मरण किये जायेंगे। आप आजकल इलाहाबाद में 27 महात्मा गांधी मार्ग पर रहते हैं। अपने जीवन को संवारने और उपयोगी बनाने के लिये युवा पीढ़ी को अपने शब्दों में एक कवि ने कुछ इस प्रकार संदेश दिया है।

जिन्दिगी को यों तुम बदनाम मत करो
हसरतों को अपनी नाकाम मत करो
जिसकी बयार दर्दे दिल का मरहम न बन सके
उस पेड़ के साये में आराम मत करो



एक प्रतिभावान प्रशासक तथा विद्वान कूटनीतिज्ञ

पंडित बृज कुमार नेहरू



भारतवर्ष में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने 1 जनवरी सन् 1858 को ईस्ट इण्डिया कम्पनी से प्रशासन की बागडोर सम्भालने के पश्चात सम्पूर्ण देश का शासन सुचारू रूप से चलाने के लिये एक प्रशासनिक तंत्र का गठन किया जिसके लिये स्वाभाविक रूप से अंग्रेज़ों को योग्य एवं कुशल अधिकारियों की आवश्यकता अनुभव हुई। प्रारम्भ में प्रशासन के उच्च पदों पर केवल अंग्रेज़ अधिकारियों की ही नियुक्ति होती थी पर कालान्तर में देश में इन पदों पर नियुक्ति के लिये राष्ट्रीय स्तर की प्रशासनिक परीक्षाऐं आयोजित की जाने लगी जिनको उस समय इण्डियन सिविल सर्विस या आई0सी0एस0 कहते थे। इस परीक्षा में बैठने के लिये अभ्यार्थी को इंग्लैण्ड जाना पड़ता था और परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात उसकी नियुक्ति भारत आने पर प्रारम्भ में एक ज्वाईंट मजिस्ट्रेट के रूप में कर दी जाती थी और वह व्यक्ति भारत के शासन तंत्र का एक प्रमुख अंग बन जाता था जिसको उस समय हर प्रकार के सुख–सुविधा के साधन उपलब्ध रहते थे। यह सेवा उस समय सबसे उत्तम समझी जाती थी क्योंकि इसमें व्यक्ति के अधिकारों की कोई विशेष सीमा नहीं थी और वह एक प्रकार से अपने क्षेत्र का राजा होता था।

भारतवर्ष में ब्रिटिश शासन काल में इस प्रकार के अनुभवी और कुशल प्रशासकों की एक लम्बी परम्परा रही है जिन्होंने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में न केवल अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय दिया अपितु अनेक महत्वपूर्ण कार्य कर देश को एक नयी गति प्रदान की। इन प्रशासकों ने देश के विकास और प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया और समाज की अनेक विसंगतियों को

दूर कर उसको उज्जवल भविष्य की ओर अग्रसर किया। हमारे देश के ऐसे ही विद्वान प्रशासकों की अग्रणी पंक्ति में एक नाम पंडित बृज कुमार नेहरू का है जिन्होंने प्रशासन के अनेक उच्च पदों पर रहते हुए न केवल महत्त्वपूर्ण कार्य किये अपितु भारत के अमेरिका जैसे विकसित देश में राजदूत रह कर अपनी परिपक्व कूटनीति का उस समय अभूतपूर्व परिचय दिया जब भारत और अमरीका के सम्बन्धों में कोई विशेष उष्मता नहीं अनुभव की जा रही थी।

पंडित बृज कुमार नेहरू इलाहाबाद के प्रतिष्ठित नेहरू परिवार के एक सम्मानित सदस्य हैं। आपके पितामह पंडित नन्द लाल नेहरू पंडित मोती लाल नेहरू के अग्रज भ्राता थे। पंडित नन्द लाल नेहरू तत्कालीन राजपूताना की खेतरी रियासत के लगभग 11 वर्ष दीवान रहे। आप उसके पश्चात क्रमश: आगरा तथा फिर इलाहाबाद के उच्च न्यायालय में वकालत करते रहे। आपका लगभग 42 वर्ष की आयु में सन् 1887 में मीरगंज मोहल्ले में निधन हो गया जहां उस समय संयुक्त नेहरू परिवार रहता था।

पंडित नन्द लाल नेहरू के पांच पुत्र थे जिनके नाम थे बिहारी लाल, मोहन लाल, श्याम लाल, बृज लाल तथा कृष्ण लाल। इनमें पंडित बृज लाल नेहरू का जन्म 5 मई सन् 1884 को मीरगंज मोहल्ले में हुआ था। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात भारत की अकाऊंटस तथा आडिट सर्विसेस के ब्रिटिश शासन काल में एक उच्च अधिकारी बन गये थे। आप सन् 1939 में सेवा निवृत्त होने के पश्चात कुछ वर्ष जम्मू कश्मीर रियासत में महाराजा हरि सिंह (1925–1947) के शासन काल में वित्त मंत्री भी रहे।

पडित बृज लाल नेहरू का विवाह राजा नरेन्द्र नाथ (रैना छिजबल्ली) की सुपुत्री रामेश्वरी के साथ सन् 1902 में पंजाब प्रान्त के गुजरानवाला जनपद में हुआ था जहां उस समय राजा नरेन्द्र नाथ डिप्टी कमिश्नर नियुक्त थे। पंडित बृज लाल नेहरू अपने जीवन के उत्तरार्ध में एक हठ योगी हो गये थे। आपका सन् 1965 में लगभग 81 वर्ष की आयु में दिल्ली में निधन हो गया। आपके दो पुत्र थे बलवन्त कुमार नेहरू और बृज कुमार नेहरू।

पंडित बृज कुमार नेहरू का जन्म 4 सितम्बर सन् 1909 को इलाहाबाद के आनन्द भवन में हुआ था। जो उस समय संयुक्त नेहरू परिवार का आवास हुआ करता था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा इलाहाबाद में ही सम्पन्न हुई। आपने अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा सन् 1925 तथ इण्टरमीडिएट की परीक्षा सन् 1927

में उत्तीर्ण की। आपने फिर उच्च शिक्षा के लिये म्योर सेन्ट्रल कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने बी0एस–सी0 की परीक्षा सन् 1929 में उत्तीर्ण की।

पंडित बृज कुमार नेहरू इलाहाबाद विश्वविद्यालय के स्नातक बन जाने के पश्चात अपने पिता के समान उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड चले गये जहां आपने सन् 1929 में लण्डन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स ऐन्ड पोलिटिकल साईन्स से अर्थ शास्त्र में स्नातक की परीक्षा सन् 1931 में उत्तीर्ण की। आपने फिर इनर टेम्पिल के ऑक्सफ़ोर्ड में स्थित बौलियल कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने सन् 1933 में बैरिस्टर ऑफ–लॉ की उपाधि प्राप्त की। आपने सन् 1934 में फिर लन्दन से आई0सी0एस0 की परीक्षा उत्तीर्ण की और भारत वापस आ गये।

पंडित बृज कुमार नेहरू की भारत आने के पश्चात सन् 1934 में असिस्टेन्ट कमिश्नर के पद पर नियुक्ति कर दी गयी। आपने इस पद पर बहुत ही निष्ठापूर्वक 5 वर्ष कार्य किया और अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिये। आपकी कार्य प्रणाली से प्रसन्न तथा प्रभावित होकर अंग्रेज़ों ने आपको सन् 1939 में प्रोन्नती देकर सचिवालय में शिक्षा विभाग का अन्डर सेक्रेट्री बना दिया आपको साथ में स्वास्थ्य तथा राजस्व विभाग का कार्य भी दिया गया क्योंकि आपकी अर्थ शास्त्र में विशेष योग्यता थी। आपने इन विभागों का कार्य बहुत ही कुशलता पूर्वक सम्पादित किया और प्रशासन को तर्क संगत बना कर उसमें एक नयी गति का संचार किया। अंग्रेज़ों ने आपको प्रान्तीय लेजिस्लेटिव कौंसिल का सदस्य भी मनोनीत कर दिया।

सन् 1940 में पंडित बृज कुमार नेहरू को केन्द्र सरकार के वित्त विभाग में अन्डर सेक्रेट्री बना दिया गया तथा आपको साथ ही साथ भारतीय रिज़र्व बैंक का आफ़िसर ऑन स्पेशल ड्यूटी भी बना दिया गया। आपने यह कार्य बहुत ही सूझ बूझ के साथ लगभग 4 वर्ष किया। सन् 1944 में आपको प्रोन्नति देकर केन्द्रीय वित्त विभाग का डिप्टी सेक्रेट्री बना दिया गया। जिस पद पर आपने लगभग 1 वर्ष सन् 1945 तक कार्य किया। आप सन् 1946 में केन्द्रीय वित्त विभाग के ज्वाइन्ट सेक्रेट्री बना दिये गये। आपने इस पद पर लगभग 3 वर्ष सन् 1949 तक बहुत ही निष्ठापूर्वक कार्य किया।

15 अगस्त सन् 1947 को भारत एक लम्बे अन्तराल के पश्चात ब्रिटिश शासन तंत्र से मुक्त हुआ और पंडित जवाहर लाल नेहरू एक स्वतंत्र देश के प्रथम

प्रधान मंत्री बने। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने देश को विकास के पथ पर अग्रसर करने और उसको हर क्षेत्र में आत्म निर्भर बनाने के लिये अनेक महत्वाकांक्षी योजनाऐं लागू कीं। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने अमेरिका से अपने आर्थिक सम्बन्ध सुधारने के उद्देश्य से पंडित बृज कुमार नेहरू को सन् 1949 में एक आर्थिक मंत्री के रूप में वाशिंगटन में स्थित भारतीय दूतावास में नियुक्त किया और साथ ही उनको अन्तर्राष्ट्रीय विकास तथा पुनः निमार्ण बैंक में भारतीय निदेशक के रूप में नियुक्त किया ताकि वह भारत के आर्थिक हितों की अपने अमेरिका में प्रवास के दौरान समुचित रक्षा कर सकें और वहां विभिन्न मंचों पर भारत को विकास के लिये आर्थिक सहायता देने की पुरज़ोर वकालत कर सकें ताकि देश में चलायी जा रही विभिन्न योजनाऐं आर्थिक सहायता के अभाव में अपना दम न तोड़ दें। पंडित बृज कुमार नेहरू ने यह विशेष दायित्व बहुत ही कुशलता पूर्वक लगभग 5 वर्ष सन् 1954 तक निभाया।

पंडित बृज कुमार नेहरू सन् 1954 में अमेरिका से भारत आने पर पुनः केन्द्र सरकार के वित्त मंत्रालय में ज्वाईन्ट सेक्रेट्री बना दिये गये। आपको लगभग 3 वर्ष पश्चात सन् 1957 में प्रोन्नति करके एक नये विभाग एकोनोमिक अफेअर्स का सेक्रेट्री बना दिया गया। आपने इस नये पद पर लगभग एक वर्ष सन् 1958 तक कार्य किया।

पंडित बृज कुमार नेहरू को उनकी अर्थशास्त्र में विशेष योग्यता तथा रूचि के कारण सन् 1958 में आर्थिक मामलात का कमिश्नर जनरल बना दिया गया और आपको एक घुमक्कड़ राजदूत का पद दिया गया। आप लगभग 3 वर्ष सन् 1961 तक एक घुमक्कड़ राजदूत के रूप में कार्य करते रहे। आपको फिर सन् 1961 में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने विधिवत अमेरिका में भारत का राजदूत नियुक्त कर दिया।

जब पंडित बृज कुमार नेहरू अमरीका जैसे महान और विकसित देश में भारत के राजदूत थे उस समय देश सम्पूर्ण विश्व में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने के लिये संघर्षरत था। इसी बीच देश में अनेक राजनीतिक उथल पुथल भी हुए। पंडित जवाहर लाल नेहरू का चीन के साथ पंचशील समझौता उस समय एक दम खोखला सिद्ध हो गया जब चीन ने सन् 1962 में भारत पर आक्रमण कर दिया और भारत के कई हज़ार किलोमीटर के भूभाग पर कब्जा कर लिया इस युद्ध में भारत को बेहद शर्मनाक पराजय का मुंह देखना पड़ा। भारत

के तत्कालीन रक्षा मंत्री कृष्णा मेनन ने सेना के विकास और आधुनिकीकरण पर ध्यान न देकर देश की शस्त्र निर्माण करने वाली फैक्ट्रियों में प्रेशर कुकर तथा जूतों इत्यादि का निर्माण कराना प्रारम्भ कर दिया था क्योंकि उनके मतानुसार अहिंसा की विचारधारा का अनुकरण करने में कदाचित युद्ध के लिये तैयार रहने का कोई औचित्य नहीं था। इसका एक परिणाम यह हुआ कि पंडित जवाहर लाल नेहरू को जनता के दबाव में कृष्णा मेनन को मंत्री मण्डल से निष्कासित करना पड़ा। स्वयं पंडित जवाहर लाल नेहरू को इस पराजय का व्याक्गित रूप से बहुत तगड़ा झटका लगा जिसे वह सहन नहीं कर सके और वह पक्षाघात के रोग से ग्रस्त हो गये। लगभग 2 वर्ष पश्चात 27 मई सन् 1964 को उनका निधन हो गया। पंडित जवाहर लाल नेहरू की मृत्यु ने सम्पूर्ण देश को हिला के रख दिया क्योंकि उस अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का सर्वप्रिय नेता उस समय कोई और नहीं था। उनके रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये उनके विश्वास पात्र लाल बहादुर शास्त्री को प्रधान मंत्री बनाया गया पर सन् 1965 में पाकिस्तान ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। इस भारत पाक युद्ध में हमारी सेनायें विजयघोष करती हुई लाहौर तक पहुंच गयी पर विदेशी दबाव में लाल बहादुर शास्त्री को ताशकन्द जाकर तत्कालीन पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल अयूब खां के साथ सन् 1966 में समझौता करना पड़ा जिसमें कूटनीति के स्तर पर भारत को कोई विशेष लाभ नहीं हुआ अपितु भारत को युद्ध में सामयिक दृष्टि से जीता हुआ क्षेत्र भी पाकिस्तान को वापस देना पड़ा लाल बहादुर शास्त्री को अपनी इस राजनीतिक पराजय का इतना अधिक दुःख हुआ कि वह रात्रि में ही परलोक सिधार गये और उनका शव दूसरे दिन प्रातः काल उनके कक्ष के दरवाज़े के चौखट पर पड़ा पाया गया जिस होटल में वह ताशकन्द में कड़े सुरक्षा के घेरे में ठहराये गये थे।

सन् 1966 में लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु के पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी देश की प्रधान मंत्री बनीं। आपके कार्यकाल में देश के उत्तरीपूर्व क्षेत्र में मुख्य रूप से नागालैण्ड में अलगाववादी संगठनों ने उत्पात मचाना प्रारम्भ कर दिया था। इन विघटनकारी तत्वों पर उचित अंकुश लगाने के उद्देश्य से सन् 1968 में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने पंडित बृज कुमार नेहरू को अमरीका से वापस भारत बुला लिया और उनको आसाम तथा नागालैण्ड का राज्यपाल बना दिया। पंडित बृज कुमार नेहरू ने अपने पद का निर्वाह करते हुए इस देश के अशान्त क्षेत्र में कानून और व्यवस्था को सुधारने का अभूतपूर्व कार्य किया। इसी बीच सन्

1971 में भारत और पाकिस्तान के मध्य पुनः युद्ध भड़क उठा जिसमें पाकिस्तान को बहुत ही अपमानजनक पराजय का मुंह देखना पड़ा जब उसके लगभग 90,000 सैनिकों को ढाका में भारतीय सेनाओं के समक्ष आत्म समर्पण करना पड़ा और बंगलादेश एक नये राष्ट्र के रूप में विश्व के मानचित्र पर उदय हुआ।

इस महत्वपूर्ण घटनाक्रम के साथ साथ आसाम राज्य का पुर्नगठन कर उसे सात छोटे राज्यों में प्रशासन को चुस्त दुरूस्त करने के लिये विभाजित किया गया और सन् 1972 में पंडित बृज कुमार नेहरू को नव गठित मेघालय, मनीपुर, और त्रिपुरा राज्यों का भी राज्यपाल नियुक्त कर दिया गया। आप सन् 1973 तक इन पांच राज्यों के राज्यपाल के रूप में कार्य करते हुए और देश के उन आर्थिक रूप से पिछड़े तथा अलगाववादी ताकतों से ग्रस्त राज्यों में अनेक महत्वपूर्ण योजनाओं को प्रभावशाली ढंग से क्रियान्वयन कराने में एक मुख्य भूमिका निभाते रहे।

सन् 1973 में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भारत के ब्रिटेन के साथ राजनीतिक तथा आर्थिक सम्बन्धों को और अधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से पंडित बृज कुमार नेहरू को भारत का उच्च आयुक्त बना कर लन्दन भेजा। आप इस पद पर सन् 1977 तक कार्य करते रहे। जब इमरजेन्सी के पश्चात सन् 1977 में जनता पार्टी की सरकार बनी और मुरारजी देसांई देश के प्रधान मंत्री बने तो पंडित बृज कुमार नेहरू भी अपने पद को छोड़ कर भारत वापस आ गये।

श्रीमती इन्दिरा गांधी पुनः चुनाव जीत कर सन् 1980 में भारत की प्रधान मंत्री बनीं और उन्होंने पुनः सन् 1981 में पंडित बृज कुमार नेहरू को जम्मू कश्मीर राज्य का राज्यपाल नियुक्त कर दिया आपने इस पद पर लगभग 3 वर्ष सन् 1984 तक कार्य किया। श्रीमती इन्दिरा गांधी की सन् 1984 में निर्मम हत्या हो जाने के पश्चात उनके ज्येष्ठ पुत्र राजीव गांधी देश के प्रधान मंत्री बने जिन्होंने पंडित बृज कुमार नेहरू को सन् 1984 में गुजरात का राज्यपाल नियुक्त कर दिया। आपने गुजरात के राज्यपाल के रूप में लगभग 2 वर्ष सन् 1986 तक कार्य किया।

पंडित बृज कुमार नेहरू ने अपने इस लम्बे प्रशासनिक सेवा काल में अनेक राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों के संगठनों के महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित किया। आप सन् 1977 से सन् 1991 तक संयुक्त राष्ट्र संघ की अनेक आर्थिक सहायता देने वाली समितियों के एक सम्मानित सदस्य रहे। आप हिन्दुस्तान आयल

ऐक्सप्लोरेशन कम्पनी के सन् 1987 से सन् 1994 तक चेयरमैन रहे, आप ग्रिन्डलेज बैंक की परामर्शदाता समिति के सन् 1988 से सन् 1994 तक चेयरमैन रहे, आप ईस्ट इण्डिया होटलस लिमिटेड के सन् 1988 से निदेशक हैं, आप दिल्ली के प्रसिद्ध दयाल सिंह कालेज की प्रबंधक समिति के सन् 1988 से सन् 1998 तक अध्यक्ष रहे, आप दयाल सिंह लाइब्रेरी ट्रस्ट के सन् 1988 से एक सम्मानित ट्रस्टी हैं। आप ट्रिब्यून समाचार पत्र समूह के ट्रस्ट के सन् 1988 से सदस्य तथा सन् 1996 से अध्यक्ष हैं, आप विश्व के आपातकालीन सहायता कोष के ट्रस्ट के सन् 1989 से सदस्य हैं, आप इन्दिरा गांधी मेमोरियल ट्रस्ट के सन् 1986 से उपाध्यक्ष हैं आप वियना में स्थित इन्सटीच्यूट ऑफ डेवलपमेन्ट के सन् 1962 से सन् 1990 तक उपाध्यक्ष रहे।

पंडित बृज कुमार नेहरू ने सन् 1945 में Reparations Conference में भाग लिया आपने सन् 1949 और सन् 1954 के मध्य राष्ट्रकुल देशों में वित्त मंत्रियों की बैठकों में बराबर भारत का प्रतिनिधित्व किया। आपने सन् 1949 और सन् 1952 के मध्य तथा सन् 1960 में संयुक्त राष्ट्र संघ की बैठकों में भाग लिया। आपने सन् 1949 और सन् 1950 के मध्य होने वाली FAO की बैठकों में भाग लिया और सन् 1955 की प्रसिद्ध बैनडन्ग कौंफ्रेंस में भाग लिया।

पंडित बृज कुमार नेहरू सन् 1946 में आस्ट्रेलिया की वित्तीय प्रणाली का अध्ययन करने गये। आप फिर सन् 1951 और 1953 के मध्य संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा बजट और उससे सम्बंधित नियमों का अध्ययन करने के लिये गठित की गयी समिति के सदस्य रहे। आपने सन् 1955 में सूडान की सरकार के एक परामर्शदाता के रूप में भी कार्य किया आपको आपकी विशेष योग्यता के लिये पंजाब विश्वविद्याल ने डी0लिट0 की मानक उपाधि से अलंकृत किया, लन्दन के एम0 वैली कालेज ने आपको एल–एल0 डी0 की मानक उपाधि से सम्मानित किया तथा पेरिस के जेक्सनविले ने आपको डी0लिट0 की मानक उपाधि से सम्मानित किया।

पंडित बृज कुमार नेहरू एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी व्यक्ति हैं। आपकी अध्ययन और लेखन में विशेष रूचि है। आप एक प्रखर वक्ता भी हैं और अनेक अन्तर्राष्ट्रीय मचों पर अपने ओजस्वी व्याख्यान दे चुके हैं। आपकी प्रकाशित कृतियों में Australian Federal Finance 1947, Speaking of India

1966, Thoughts on our Present Discontents 1986 तथा Nice Guys Finish Second 1997 प्रमुख हैं।

जब पंडित जवाहर लाल नेहरू का सन् 1916 में बसंत पंचमी के पावन पर्व पर सुश्री कमला (अटल) कौल के साथ दिल्ली की बाज़ार सीताराम की प्रेम नारायण गली में स्थित हाक्सर वालों की ऐतिहासिक हवेली में विवाह हुआ था तो पंडित बृज कुमार नेहरू उनके विवाह में पुतमाहराजा बने थे। पंडित बृज कुमार नेहरू का विवाह एक हंगरी की युवती मेंगडेलना फ्रीडमैन के साथ सम्पन्न हुआ है जिनका भारतीयकरण करने के पश्चात नाम श्रीमती शोमा नेहरू रख दिया गया। इस दम्पति के तीन पुत्र अशोक नेहरू, आदित्य नेहरू और अनिल नेहरू हैं।

पंडित बृज कुमार नेहरू की देश के प्रति अति विशिष्ट सेवाओं को देखते हुए भारत के राष्ट्रपति महामहिम श्री के0आर0 नारायणनन ने आपको राष्ट्रपति भवन में सन् 1999 में पदम विभूषण के अलंकरण से सम्मानित किया। पंडित बृज कुमार नेहरू 92 वर्ष की आयु में भी सक्रिय है और दिल्ली के जिमखाना क्लब तथा इण्डिया इन्टरनेशनल सेन्टर की सदस्यता ग्रहण किये हुए हैं और उनके द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में भाग लेते रहते हैं। आजकल आप हिमाचल प्रदेश के कसौली जनपद में रह रहे हैं और अपना समय अधिकतर लेखन और अध्ययन करने में व्यतीत करते हैं। पंडित बृज कुमार नेहरू की जीवन गाथा इस बात को साफ़ दर्शाती है कि यदि मनुष्य में आत्मबल हो तो वह क्या नहीं कर सकता। इसी बात को हिन्दी के एक प्रसिद्ध कवि ने अपने शब्दों में कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

"आप चाहें तो समन्दर भी सोख सकते हैं।
उठते तूफ़ान इशारों पर रोक सकते हैं।
गरजती स्याह घटाओं की छातियों में भी
बड़ी तरकीब से एक कील ठोंक सकते हैं।



एक विद्वान दार्शिनिक शायर

पंडित चांद नारायण रैना "चांद"



19वीं शताब्दी में पूरे उत्तर भारत में कश्मीरी पडितों के तीन प्रमुख गढ़ थे जो उनकी सामूहिक शक्ति को प्रदर्शित करते थे। यह तीन मुख्य केन्द्र थे लखनऊ का कश्मीरी मोहल्ला, दिल्ली का बाजार सीताराम और लाहौर का वज़ीर खां मस्जिद तथा वच्छूवाली गली का क्षेत्र। इनमें से लाहौर में कश्मीरी पंडितों का बसना मुख्य रूप से माहाराजा रंजीत सिंह (1801–1839) के शासनकाल में प्रारम्भ हुआ। जब उन्होंने सन् 1819 में पठानों को परास्त कर जम्मू–कश्मीर को अपने पंजाब राज का एक अंग बना लिया। कालान्तर में 21 फरवरी सन् 1849 को अंग्रेज़ों की ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेनाओं ने गुजरात के युद्ध में सिखों को परास्त कर पंजाब के अन्तिम शासक माहाराजा दिलीप सिंह को राज सिंहासन से उतार कर सम्पूर्ण पंजाब–प्रान्त को अपने अधिकार क्षेत्र में ले लिया। अंग्रेज़ों द्वारा पंजाब प्रान्त का अधिग्रहण करने के पश्चात काफ़ी बड़ी संख्या में कश्मीरी पंडित सीधे कश्मीर घाटी से या फिर देश के अन्य क्षेत्रों से आकर लाहौर में बसे पर यह कश्मीरी पंडित परिवार अधिकतर लाहौर के नये विकसित क्षेत्रों जैसे सिविल लाइन्स इत्यादि में रहने लगे। सन् 1947 में देश के विभाजन से पूर्व तक लगभग 1000 कश्मीरी पंडित परिवार लाहौर के विभिन्न मुहल्लों में रहते थे।

पंडित चांद नारायण रैना के पूर्वज 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में कदाचित मुग़ल सम्राट फ़र्रूखसियर (1716–1719) के शासनकाल में कश्मीर घाटी से निकल कर दिल्ली आ गये और वहां दरियागंज के निकट निवास करने लगे जहां उस समय एक नहर बहती थी जो यमुना नदी का पानी लाल किले के शाही

महलों में ले जाने के लिये निर्माण करायी गयी थी और इसी नाते इस मुहल्ले का नाम दरियागंज रखा गया था। कालान्तर में चांद नारायण रैना के पूर्वज राय दयानिधान रैना दिल्ली से तत्कालीन राजपूताना की जयपुर रियासत चले गये जहां वह माहाराजा सवाय राम सिंह द्वितीय के दरबार में मुशीरे माल बना दिये गये। आपका वहां मुख्य कार्य रियासत के कोषागार से सम्बन्धित कार्य कलापों का उचित प्रकार से संचालन करना था। आपकी मृत्यु के पश्चात आपके पुत्र पंडित जगत नारायण रैना जयपुर रियासत से आगरा चले आये। कुछ वर्ष आगरा में व्यतीत करने के पश्चात पंडित जगत नारायण रैना माहाराजा रंजीत सिंह (1801–1839) के शासन काल में खालसा दरबार में एक अच्छी नौक़री प्राप्त करने के उद्‌देश्य से आगरा से लाहौर चले गये।

कालान्तर में पंडित जगत नारायण रैना ने अपने पुत्र पंडित इन्द्र नारायण रैना का विवाह ख़ालसा दरबार में बक्शी के पद पर उस समय नियुक्त पंडित गुलाब राय की पुत्री के साथ कर दिया। पंडित इन्द्र नारायण रैना ब्रिटिश शासन काल में जालन्धर में नियुक्त हो गये थे। आपके पुत्र पंडित शिव नारायण रैना "शमीम" का जन्म सन् 1859 में अपने ननिहाल लाहौर में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा जालंधर में ही सम्पन्न हुई। आपने फिर उच्चशिक्षा के लिये लाहौर के राजकीय कालेज में प्रवेश लिया जिसे अंग्रेज़ों ने सन् 1864 में लाहौर में अंग्रेज़ी की शिक्षा के लिये स्थापित किया था। आपने सन् 1875 के आस पास अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात सन् 1880 के आसपास अपनी वकालत जालंधर में प्रारम्भ की। कुछ वर्ष जालंधर में वकालत करने के पश्चात आप लाहौर चले गये जहां उस समय चीफ़ कोर्ट स्थित था। आप सन् 1886 में विधिवत लाहौर चीफ़ कोर्ट के वकील बन गये। आपको लाहौर चीफ़ कोर्ट के तत्कालीन प्रधान न्यायाधीश सर आर्थर रीड ने यह सम्मान प्रदान किया। आप प्रथम भारतीय थे जो लाहौर में चीफ़ कोर्ट के उस समय अधिवक्ता बनाये गये। सर विलियम क्लार्क ने आपको राय बहादुर की पदवी से विभूषित किया। आप पंजाब की लेजिस्लेटिव कौंसिल के सन् 1900 में सदस्य भी मनोनीत किये गये।

पंडित शिव नारायण रैना "शमीम" पंजाब के एक जाने माने उर्दू के शायर भी थे। आपने कश्मीरी पंडित बिरादरी में व्यापक समाज सुधार के लिये अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये और अपनी सशक्त लेखिनी द्वारा अनेक विचार परक लेख

बिरादरी की पत्रिकाओं के लिये लिखे। आपने सर्व प्रथम कश्मीरी पंडितों पर एक वृहद पुस्तक तारीख–ए–कश्मीरी पंडितान शीर्षक के अन्तर्गत लिखी आपकी पुस्तकें तोहफ़ा–ए–शमीम और शमीम–ए–हिन्द भी काफ़ी चर्चित रही। आपकी लगभग 77 वर्ष की आयु में सन् 1936 में मृत्यु हो गयी।

पंडित शिव नारायण रैना "शमीम" के सुपुत्र पंडित कुंवर नारायण रैना का जन्म सन् 1878 के आस पास जालंधर में अपनी हलब पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा जालंधर में ही सम्पन्न हुई आपने फिर उच्च शिक्षा के लिये लाहौर के राजकीय कालेज में प्रवेश लिया। आप लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात कानून की शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड चले गये और वहां से सन् 1898 के आस पास बैरिस्टर–ऐट–लॉ बन कर भारत लौटे। आप बहुत ही प्रगतिशील और क्रान्तिकारी विचारों वाले व्यक्ति थे और सदैव समाज में व्यापक सुधार लाने पर बल देते थे।

पंडित कुंवर नारायण रैना से एक बार उनके कुछ युवा मित्रों की शर्त लग गयी कि क्या वह एक जमादार का छुआ हुआ भोजन ग्रहण कर सकते हैं? आपने स्पष्ट उत्तर दिया कि यदि वह उचित सफ़ाई के साथ भोजन ग्रहण करने को दे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। आपने अपने मित्रों की शर्त के अनुसार एक जमादार द्वारा दिया गया भोजन ग्रहण कर लिया जिस घटना से उस समय सारी बिरादरी में हड़कम्प मच गया और आपको बिरादरी से निष्कासित करने के लिये विचार किया जाने लगा। आपको फिर विवश होकर अपने कृत्य से मुक्ति पाने के लिये प्रायश्चित करना पड़ा।

पंडित कुंवर नारायण रैना का विवाह सुश्री प्राणोशुरी वातल के साथ सम्पन्न हुआ था जो भरतपुर रियासत के प्रसिद्ध वातल परिवार की सदस्या थीं और इलाहाबाद के लूकरगंज मुहल्ले में रहने वाले पंडित जगदीश सहाय वातल की बहन थीं। पंडित कुवर नारायण रैना दिल्ली के निकट की रियासत मण्डी में मंत्री हो गये थे। आपकी केवल दो सन्तानें थीं। आपके पुत्र का नाम पंडित चांद नारायण रैना था। आपकी पुत्री कमला का विवाह लाहौर के निवासी पंडित पी0एन0 मुबई के साथ सम्पन्न हुआ था।

पडित चांद नारायण रैना का जन्म सन् 1901 में जालंधर में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक उर्दू तथा फारसी की शिक्षा जालंधर में ही सम्पन्न हुई। आप फिर उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिये लाहौर

चले गये जहां आपने फोरमैन क्रिश्चियन कालेज में प्रवेश ले लिया। आपने सन् 1917 में अपनी मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने फिर सन् 1919 में अपनी इन्टरमीडिऐट की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने फिर लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से क्रमशः अपनी बी0ए0 की परीक्षा सन् 1921 तथा एम0ए0 की परीक्षा दर्शन शास्त्र विषय लेकर सन् 1923 में उत्तीर्ण की। आप अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात अंग्रेज़ों द्वारा पंजाब प्रान्त की प्रशासनिक सेवा में चयनित कर लिये गये क्योंकि उस समय तक अंग्रेज़ सरकारी नौकरियां अधिकतर सम्भ्रान्त परिवार के व्यक्तियों को ही देते थे और आज की भांति किसी भी वर्ग के लिये आरक्षण की कोई व्यवस्था नहीं थी। सरकारी नौकरी अधिकतर व्यक्ति की योग्यता और उसके पारिवारिक सम्बन्धों को ही मुख्य आधार मानकर दी जाती थी। ताकि अयोग्य और खुराफ़ाती तत्व प्रशासन के किसी भी स्तर में न घुस सकें जो बाद में भ्रष्टाचार को बढ़ावा दें।

आजकल परिस्थिति बिलकुल इसके विपरीत है। यही कारण है कि प्रशासन के हर स्तर पर घोटालों का बाज़ार गर्म है। सारे समाज को जाति के आधार पर विभाजित किया जा रहा है। और हर जाति को वोट बैंक की राजनीति के तहत नये–नये प्रलोभन देकर अपने पक्ष में करने का विभिन्न राजनीतिक पार्टियों द्वारा प्रयास किया जा रहा है। सामाजिक न्याय की दुहाई देते हुए हर नेता अपनी कुर्सी पर पकड़ और अधिक मज़बूत करने में लगा हुआ है। वह अपने को जनता का हितैषी और समाज का सेवक बता रहा है। जबकि वास्तव में वह एक ही तीर से कई निशाने साधने में संलग्न है और आने वाले समय में अपने भविष्य को उज्जवल करने का मार्ग प्रशस्त कर रहा है।

पंडित चांद नारायण रैना को देश के सन् 1947 में स्वतंत्र होने के पश्चात पदोन्नति करके सरकार ने एक आई0ए0एस0 अधिकारी बना दिया था। आप पंजाब प्रान्त के विभिन्न जनपदों में डिप्टी कमिश्नर रहे। आप एक लम्बी प्रशासनिक सेवा करने के पश्चात शिमला के कमिश्नर के पद से सेवा निवृत्त हुऐ।

पंडित चांद नारायण रैना को उर्दू भाषा की शेर–शायरी के प्रति अपनी बाल्यवस्था से ही बहुत अधिक रूचि थी। आपको एक प्रकार से उर्दू की शेर–शायरी करने की प्रेरणा अपने पितामह पंडित शिव नारायण रैना "शमीम" से मिली जो स्वयं उर्दू के एक प्रतिष्ठित शायर थे। और जिनका कलाम पूरे पंजाब प्रान्त में बहुत अधिक लोकप्रिय था।

पंडित चांद नारायण रैना ने उर्दू की शेर शायरी लगभग 17 वर्ष की आयु से ही प्रारम्भ कर दी थी। आप अपने शेर "चांद" तख़ल्लुस से कलम बन्द करते थे। चूंकि आप उच्च शिक्षा प्राप्त किये हुऐ थे और आपने दर्शन शास्त्र जैसे गम्भीर विषय में एम0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। अतः आपकी शायरी में उसका प्रभाव पड़ना बहुत ही स्वाभाविक था। आपको अंग्रेज़ी भाषा के साहित्य का भी अच्छा ज्ञान था। इस नाते शायरी की व्याकरण तथा उसके शिल्प से भी आप पूर्ण रूप से परिचित थे और केवल तुकबन्दी की शायरी करने में कतई विश्वास नहीं रखते थे। आप अपनी शायरी में गुलो बुलबुल या आशिकी–माशूकी के स्थान पर भावों और दार्शिनिक संदेश देने को अधिक महत्व देते थे जो उनके द्वारा रचित निम्नलिखित पंक्तियां स्वयं स्पष्ट करती हैं :–

"वो दिल राज़े फ़ितरत का मरहम नहीं है
जो ग़म आशिना खूनेगर ग़म नहीं है
वो कुछ और है चश्मे आदम नहीं है
जो ग़ैरों के मातम में पुरनम नहीं है
अजल से मिली है मुझे ग़म की दौलत
जो देती है दुनिया यह वह ग़म नहीं है
कोई ऐसी दुनिया भी है क्या इलाही
जहां आरज़ुओं का मातम नहीं है
हमीं पर करम है ग़मे ज़िन्दगी का
जहां हम नहीं है वहां ग़म नहीं है
मैं पहुंचूगा ऐ चांद मंज़िल पे अपनी
हवादिस से अज़्मे अमल कम नहीं है"

पंडित चांद नारायण रैना को अध्ययन करने का बहुत अधिक शौक़ था। वह अनेक विषयों पर पुस्तकें पढ़ा करते थे और अपनी शायरी में उस ज्ञान के बल पर नये–नये प्रयोग करते थे जिससे वह अपने पाठकों को कुछ संदेश देने में सफ़ल हों। आपने अपने अनेक शेरों में मानवीय मूल्यों की बहुत ही सुन्दर रूप से अपने एक विशेष अन्दाज़ में विवेचना की है। जीवन क्या है इसको आपने उचित रूप से परिभाषित किया तथा विभिन्न दार्शिनिकों के विचारों को पढ़ने से आपको इस बात का अनुभव हुआ कि वास्तव में मनुष्य के जीवन का अर्थ क्या है। आपने अपने निम्नलिखित शेर में उसकी बहुत ही सुन्दर रूप में अभिव्यक्ति

कुछ इस प्रकार की है :-

उठ गया पर्दा तो फिर महमिल न था लैला न थी,
एक फरेबे दीद को अपना जहां समझा था मैं।।

आपने अपनी शायरी में सदा परिमार्जित भाषा का प्रयोग किया। आप शायरी करते समय शब्दों के चयन पर विशेष रूप से ध्यान देते थे ताकि आपके द्वारा कलम बन्द किये गये शेर का वज़न हलका न होने पाये। आपकी शायरी के शिल्प, भाषा की पविग्रता तथा नाजुक मिजाज़ी की एक झलक आपकी निम्नलिखित बन्दिश में साफ प्रकट होती है।

"उसे पास है हया का तो वो बाम तक न आये,
यह तो बेरूखी की हद है कि पयाम तक न आये
यह है इन्तिहाये उलफ़त यह है आशिक़ी की अज़मत
जो है दिल में उसका लब पर कभी नाम तक न आये
मेरे ज़ौके जुस्तजू को न हुई नसीब मन्ज़िल
रहे आशिकी वही है जो मुकाम तक न आये
वह नज़र ही क्या नज़र है जो हो इम्तियाज़े परवर
कि जो ख़ास से निकल कर कभी आम तक न आये
मेरे ज़ौके बेअमल को रही है मौज की तमन्ना
यह कमन्द "चांद" वह है कि जो बाम तक न आये"

पंडित चांद नारायण रैना का पंजाब के उर्दू के शायरों में एक खास मुकाम रहा। आप वहां की कई उर्दू की तन्ज़ीमों से सक्रिय रूप से जुड़े रहे और अनेक कार्यक्रमों में उर्दू भाषा के प्रेमियों को अपने कलाम से नवाज़ते रहे। आपने समाज के विभिन्न वर्गों से बहुत आदर और सम्मान पाया और अपने लिये उर्दू साहित्य में एक विशेष स्थान बनाया आप अपनी एक ग़ज़ल में अपनी महबूबा की तरफ़ ईशारा करते हुए कुछ यों फ़रमाते हैं :-

"उसकी हर शै को प्यार करता हूं
इश्क को उस पर वार करता हूं
चश्म को अश्क बार वार करता हूं
कुश्ते दिल लालाज़ार करता हूं
उसके वादों का एतबार नहीं
मैं मगर एतबार करता हूं

ख़त्म होगा ख़िज़ां का दौर कभी
इन्तिज़ारे बहार करता हूं
राहे हस्ति है नोके ख़न्जर पर
दिल को मानूसे ख़ार करता हूं
राहे हस्ती में हर क़दम पर "चांद"
मौत का इन्तिज़ार करता हूं"

सन् 1947 में देश का विभाजन होने पर आपको बहुत अधिक आर्थिक संकट के दिन देखने पड़े क्योंकि आपको अपनी लाहौर की अचल सम्पत्ति, जमीनदारी तथा अन्य सुविधा के साधनों को परित्याग करना पड़ा और केवल अपने परिवार के जीवकोपार्जन के लिये आपको अपने वेतन पर निर्भर रहना पड़ता था। आपने अपनी उस समय की मनोदशा का बहुत ही मार्मिक चित्रण अपनी शायरी के माध्यम से कुछ इस प्रकार किया है :-

"मेरा दौरे ऐश गुज़र चुका ग़मे रोज़गार से काम है
न वह मेरी महफ़िलें इश्क है न वादा है न वह जाम है
मेरी चार दिन की है ज़िन्दगी मुझे आरजुए दवाम है
मुझे मौत कहती है बार बार हयात मेरा ही नाम है
मेरे दिल के वलवले हैं सो रहे इन्हें मैं जगाऊं तो किस तरह
न उफन है वह न शफक है वह न वो सुबह है न वो शाम है
मैं वह तेज़ गाम था शहरों का कहीं न मेरा कयाम था
मैं वह सुस्त गाम हुआ हूं कि मेरा अब हर कदम पे मुकाम है
कभी दौरे फरमा पर थी नज़र मगर अब निगाह बदोश हूं
वह थी ज़िन्दगी की सहर मेरी ज़िन्दिगी की यह शाम है
वह जो सर बुलन्द ग़रूर है मैं उसी को करता हूं बन्दगी
जिसे मैं गुलाम न कर सका मेरा दिल उसी का गुलाम है
मैं खड़ा हूं मजारे·आम पर मुझे नुक्ताचीनी की तलाश है
जो नहीं है दाद का मुरतजी वो है "चांद" मेरा कलाम है"

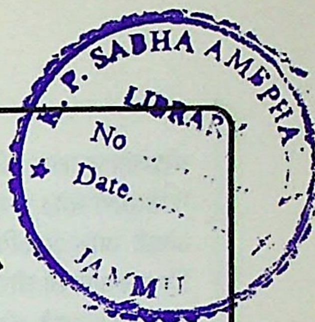
पंडित चांद नारायण रैना का विवाह सन् 1924 के फरवरी माह में इलाहाबाद के प्रख्यात न्यायविद तथा संविधान विशेषज्ञ डॉ0 (सर) तेज बहादुर सप्रू की सुपुत्री सुश्री भुवनेश्वरी सप्रू के साथ सम्पन्न हुआ था जो स्वयं एक उर्दू की शायरा थीं और अपने शेर "नगहत" तखल्लुस से कलमबन्द किया करती थीं।

इस दम्पति के एक पुत्र पंडित कपिल नारायण रैना तथा चार पुत्रियां क्रमशः रति, इन्दिरा, अन्नपूर्णा तथा नीता हैं। जिनमें रति का विवाह इलाहाबाद के निवासी डॉ0 कैलास नाथ काटजू के सुपुत्र न्यायमूर्ति ब्रह्म नाथ काटजू के साथ सम्पन्न हुआ था जो इलाहाबाद उच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश होकर सेवा निवृत्त हुऐ। इन्दिरा का विवाह लखनऊ के निवासी पंडित जगमोहन नाथ चक के सुपुत्र पंडित इन्द्रमोहन नाथ चक के साथ सम्पन्न हुआ था, जो राष्ट्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान के सहनिदेशक के पद से सेवानिवृत्त हुऐ। अन्नंपूर्णा का विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित रतन कुमार नेहरू के पुत्र विवेक यशवन्त नेहरू के साथ सम्पन्न हुआ था तथा नीता का विवाह कलकत्ता (कोलकाता) के निवासी पंडित कुंवर कृष्ण कौल के सुपुत्र पंडित स्वरूप कृष्ण कौल के साथ सम्पन्न हुआ था जो अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात भारतीय वायु सेना के अधिकारी बने और वायु सेनाध्यक्ष के पद से बाद में सेवा निवृत्त हुऐ।

पंडित कपिल नारायण रैना अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात चन्दीगढ़ में वकालत करते थे। आपका विवाह जोधपुर रियासत के मंत्री पंडित धर्म नारायण काक की सुपुत्री सुलक्षणा के साथ सम्पन्न हुआ था। आपकी सन् 1994 में मृत्यु हो गयी।

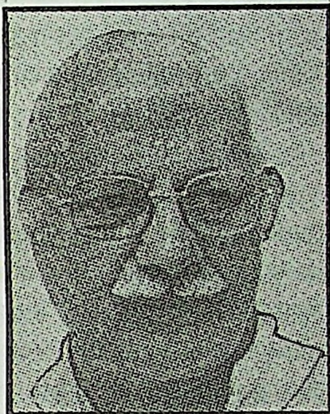
पंडित चांद नारायण रैना अपने जीवन के उत्तरार्ध में अपने पुत्र पंडित कपिल नारायण रैना के साथ चंदीगढ़ में रहने लगे थे। आप अपना समय अधिकतर शेर शायरी में या फिर अध्ययन करने में व्यतीत करते थे। आप बहुत ही सरल तथा व्यवहार कुशल व्यक्ति थे और सद काम करने में विश्वास रखते थे। आपने कभी अपने जीवन में झूठे आडम्बरों का सहारा नहीं लिया। आपने सदा मानवीय मूल्यों और आदर्शों को अपने जीवन में प्राथमिकता दी। आपने अनेक विचारोत्तेजक लेख लिखे और अपनी सशक्त लेखनी द्वारा व्यापक समाज को एक सही दिशा देने का प्रयास किया। आप एक अच्छे गायक भी थे। आपका लगभग 79 वर्ष की आयु में 14 जून सन् 1980 को चण्दीगढ़ में निधन हो गया। किसी हिन्दी के कवि ने इसी संदर्भ में अपने भावों को कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

"समर में घाव खाता जो उसी का मान होता है
छिपा उस वेदना में भी मधुर वरदान होता है
सृजन में झेलता जो चोट छेनी और हथौड़ी की
वही पाषाण मन्दिर में कहीं भगवान होता है"



एक वरिष्ठ कला इतिहासकार

प्रो० रतन पारिमू



धरती का स्वर्ग कहीं जाने वाली कश्मीर घाटी में शैव दर्शन और सूफ़ी परम्परा का अदभुत मिश्रण वहां की संस्कृति में देखने को मिलता है। चौदहवीं सदी में इस्लाम धर्म के प्रचारकों के कश्मीर घाटी में पदार्पण से वहां सूफ़ी परम्परा का विकास होना प्रारम्भ हुआ जिसको शेख़ नूरूद्दीन या नुन्द ऋषि ने एक विशेष रूप और गति प्रदान की। इस भक्ति रस की परम्परा ने वहां के निवासियों में शैने–शैने कला के प्रति प्रेम को जागृत किया और एक विशेष प्रकार का सूफ़ीयाना संगीत घाटी में विकसित हुआ जो हिन्दू संस्कृति और इस्लाम धर्म का अनूठा संगम था। इस संगीत के साथ साथ अन्य ललित कलायें भी विकसित होनी प्रारम्भ हुई जिनमें चित्रकला भी अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कश्मीर घाटी ने चित्रकला में पारन्गत अनेक ऐसे कलाकारों को जन्म दिया जिन्होंने अपने अद्वितीय कार्य द्वारा सम्पूर्ण विश्व में ख्याति अर्जित की और कला के क्षेत्र में अपनी एक विशेष पहचान बनायी। उन्होंने चित्रकला को अपने भावों को अभिव्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम बनाया और अपनी कृतियों द्वारा समाज को एक सार्थक संदेशं देने का प्रयास किया। ऐसे महान चित्रकारों की अग्रिम पंक्ति में एक नाम प्रो0 रतन पारिमू का है जिन्होंने इस कला के क्षेत्र में न केवल अपना अभूतपूर्व योगदान दिया अपितु इस जटिल विषय पर शोधकार्य करके अपने को एक कला इतिहासकार के रूप में स्थापित किया।

प्रो0 रतन पारिमू का जन्म सन् 1936 में कश्मीर घाटी के श्रीनगर जनपद में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा श्रीनगर में ही सम्पन्न हुई जहां से सन् 1952 में आपने मैट्रिकुलेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने फिर उच्चशिक्षा के लिये

श्रीप्रताप कालेज में प्रवेश लिया जहां से आपने एफ0ए0 की परीक्षा सन् 1954 में उत्तीर्ण की। कश्मीर घाटी के प्राकृतिक सौन्दर्य ने आपको बाल्यवस्था से ही अपनी ओर आकर्षित किया और आप उसको अपने कैन्वस पर उतारने लगे जिससे आपका धीरे धीरे चित्रकला के प्रति प्रेम बढ़ने लगा और आपमें एक महान कलाकार बनने की भावना जागृत हुई।

प्रो0 रतन पारिमू अपनी इस इच्छा की पूर्ति के लिये चित्रकला विषय में विधिवत शिक्षा लेने के लिये कश्मीर घाटी छोड़ कर सन् 1954 में बड़ौदा चले गये क्योंकि उस समय श्रीनगर में इस प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने के लिये कोई उचित प्राविधान नहीं था। आप अपनी फ़ाईन आर्टस में शिक्षा पूरी करने के पश्चात सन् 1959 में बड़ौदा के एम0एस0 विश्वविद्यालय में फ़ाईन आर्ट्स विभाग में प्रवक्ता नियुक्त हो गये और छात्रों को चित्रकला की शिक्षा देने के साथ साथ इस महत्वपूर्ण विषय पर शोध कार्य भी करने लगे। आपने बड़ौदा के एम0एस0 विश्वविद्यालय से सन् 1972 में कला इतिहास जैसे विषय पर पी–एच0डी0 की उपाधि ग्रहण की जो स्वयं अपने आप में एक अनूठा कार्य था क्योंकि कला इतिहास में पी–एच0डी0 प्राप्त करने वाले पूरे देश में कदाचित कुछ ही गिने चुने व्यक्ति होंगे।

प्रो0 रतन पारिमू को उनकी इस विशेष योग्यता के कारण सन् 1978 में प्रोफ़ेसर बना दिया गया। आप इसी विश्वविद्यालय के कला इतिहास और सौन्दर्य शास्त्र विभाग के सन् 1966 से सन् 1999 तक विभागाध्यक्ष रहे। आपने अपने कार्यकाल में अपने विभाग का चौमुखी विकास कर उसको एक प्रतिष्ठित स्थान दिलाया जिसने अनेक ख्याति प्राप्त कलाकार उत्पन्न किये। आपके कुशल निर्देशन में अनेक कलाकारों ने इस विधा के विभिन्न आयामों में प्रशिक्षण लिया तथा अपने को समाज में उचित रूप से स्थापित किया।

प्रो0 रतन पा़रिमू ने सन् 1991 से लेकर सन् 1993 तक लगभग 2 वर्ष जवाहर लाल नेहरू फेलोशिप के अन्तर्गत कला के इतिहास पर गूढ़ अध्ययन कर शोध कार्य किया तथा कई शोध पत्र लिखे। आपने अब तक कला इतिहास जैसे गम्भीर विषय पर 14 पुस्तकें लिखी हैं और आपको अवनीन्द्र नाथ, गगनेन्द्र नाथ तथा रवीन्द्र नाथ ठाकुर जैसी महान विभूतियों की पेन्टिंग्स पर ।नजीवतपजल माना जाता है जिन पर आपने एक समवेत पुस्तक लिखी है जो कला क्षेत्र में एक बहुचर्चित पुस्तक है।

प्रो0 रतन पारिमू ने सन् 1955 से सन् 1997 के मध्य देश के अनेक महानगरों और विदेशों में अपने कला चित्रों की अनेक प्रदर्शनियां आयोजित की जिनकी भूरि भूरि प्रशंसा की गयी और आपके कार्य को कला पारखियों ने बहुत अधिक सराहा। आपने अपनी कृतियों के लिये अनेक पुरस्कार प्राप्त किये तथा आपको छात्र वृत्तियां देकर सम्मानित किया गया। आपने विश्व के अनेक देशों में व्याख्यान दिये और वहां विभिन्न संगठनों द्वारा आयोजित गोष्ठियों में अपने शोध परक लेख प्रस्तुत किये। आपने मुख्य रूप से इंग्लैण्ड, फ्रांस और अमरीका का व्यापक भ्रमण किया और वहां के विश्व प्रसिद्ध कलाकारों की कृतियों का अध्ययन किया। आप एक लम्बे सेवा काल के पश्चात सन् 1997 में सेवानिवृत्त हुऐ।

प्रो0 रतन पारिमू एक गम्भीर स्वभाव के व्यक्ति हैं। आपका स्पष्ट मत है कि समय या अतीत को भुला कर हम वर्तमान में नहीं रह सकते। अतीत हमारे पास एक सास्कृतिक सम्पदा और विरासत के समान है जिसके बिना हमारे जीवन का कोई अर्थ नहीं है। यह बात विशेष रूप से कला के लिये और अधिक सार्थक है क्योंकि जब कलाकार के पास चिंतन करने के लिये कुछ नहीं होगा तो फिर वह रंगों के माध्यम से अपने किन भावों को अभिव्यक्त करेगा।

प्रो0 रतन पारिमू कला में निरन्तरता को देखते हैं और मौलिकता में विश्वास करते हैं। आपका कहना है कि किसी भी कृति को बनाते समय कलाकार को एक मुख्य बात यह ध्यान देनी चाहिये कि उसमें पहली कृतियों की झलक न परिलक्षित हो जिसको अंग्रेजी भाषा में रिपीटीशन कहते हैं। क्योंकि उससे कलाकार एक प्रकार की मानसिकता में बंध कर टाईप हो जाता है और उसकी कृतियों की नवीनता समाप्त हो जाती है। कलाकार को सदैव क्रियेटिव होना चाहिये ताकि हर बार उसकी कृति में एक नयी मुक्ति का बोध मिल सके।

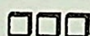
प्रो0 रतन पारिमू इस बात के पक्षधर है कि कृतियों में आधुनिकता को दर्शाने के लिये हमें नयी भाषा को विकसित करना होगा। वैसे दृष्टि और भाषा के स्तर पर हर कृति आधुनिक होती है क्योंकि हर कलाकार अपनी बात को कहने के लिये अपने कुछ विशेष "लउइवसे का प्रयोग करता है। उदाहरण के लिये कांगड़ा की चित्रकला का अपना बिलकुल अलग शिल्प है। जहां पेन्टिंग में कृष्ण की अनुपस्थिति भी कृष्ण की उपस्थिति का बोध कराती है जो कलाकार के रचनात्मक होने का सीधा और स्पष्ट संकेत है। यह उस पेन्टिंग के मौलिक और

अधुनिक होर्ने का स्वयं एक प्रमाण है यद्यपि उसकी विषय वस्तु हमारे सुनहरे अतीत से जुड़ी हुई है।

प्रो0 रतन पारिमू को अपनी बाल्यवस्था से ही अभिनय करने के प्रति भी एंक विशेष रूचि रही और आपने अपने छात्र जीवन में कुछ नाटकों में अभिनय भी कियां आप कभी कभी अपने मनोरंजन के लिये फिल्मों और दूरदर्शन के विज्ञापनों में अभिनय कर लेते हैं। आपका सुपुत्र ललित पारिमू फिल्मों और दूरदर्शन के धारावाहिकों का एक परिचित कलाकार है और आजकल अनेक ध ारावाहिकों में एक सक्रिय रूप से कार्य कर दर्शकों को अपनी अभिनय करने की योग्यता का परिचय दे रहा है।

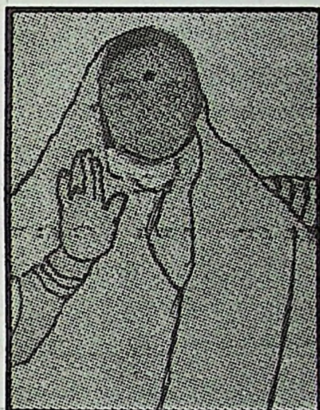
प्रो0 रतन पारिमू सेवा निवृत्त होने के पश्चात भी कला के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित है और अपना सक्रिय योगदान दे रहे हैं। आप अपना समय अध्ययन या फिर किसी नवीन कृति की रचना में व्यतीत करते हैं और अपने जीवन से पूर्ण रूप से संतुष्ट है। आपका मत है कि यदि व्यक्ति में इच्छा शक्ति हो तो वह कठिन से कठिन कार्य भी सहज भाव से कर सकता है। मनुष्य की लगन ही उसकी सफलता की कुंजी है। इसी भावना को एक हिन्दी के कवि ने अपने शब्दों में कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

हम चले थे कहां और कहां आ गये।
पथ की जगमगाहट में भरमा गये।
पार कितने समन्दर किये तैर कर।
आज किश्ती में ही डुबकियां खा गये।



आध्यात्मिक ज्ञान की प्रतिमूर्ति

श्री करूणामयी माँ–अम्माजी



आदिकाल से कश्मीर घाटी का नैसर्गिक वातावरण मनुष्य को आध्यात्म की ओर प्रेरित करता रहा है। वहां की शारदा पीठ किसी समय सम्पूर्ण विश्व का एक प्रमुख ज्ञान का केन्द्र रही है जहां देश–विदेश से अनेक विद्वान शास्त्रार्थ करने के लिये आते थे क्योंकि उसके बिना उनकी शिक्षा अधूरी समझी जाती थी। विशालकाय हिमालय के वक्षस्थल में भीमकाय हिमश्रृंगों के मध्य बसी हुई यह अनमोल घाटी सदा ऋषियों, संतों, महात्माओं तथा मुनियों की तपोभूमि रही है। यहा का सौम्य तथा रमणीक वातावरण मनुष्य को स्वभाविक रूप से आध्यात्म की ओर आकर्षित करता है और यही एक मुख्य कारण है कि इस पवित्र धरती को देव भूमि की संज्ञा दी गयी है जहां कण–कण में परमपिता परमेश्वर वास करते हैं।

कश्मीर घाटी ने समय समय पर अनेक महान संत, महात्मा, ऋषि और मुनि उत्पन्न किये जिन्होंने अपने आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाश में सम्पूर्ण समाज को एक अदभुत तथा अलौकिक आनन्द का बोध कराया और समाज मे व्याप्त विसंगतियों को दूर कर उसमें एक नवीन चेतना तथा शक्ति का संचार किया। उन्होंने अपने ज्ञान के बल पर विकृत समाज में मानवीय मूल्यों और आदर्शों को पुनः स्थापित कर तथा उसमें भक्तिरस का प्रवाह कर जनमानस को आपसी प्रेम और भाईचारे का पाठ पढ़ाया। इन महान आत्माओं ने सदैव अपने कार्यकलापों द्वारा समाज में एक समरसता बनाये रखने का प्रयत्न किया और हर व्यक्ति को एक मर्यादित आचरण बनाये रखने का अपने उपदेशों में संदेश दिया।

कश्मीर घाटी में इस प्रकार की महान आत्माओं की एक लम्बी परम्परा रही

है जिन्होंने अपने आध्यात्मिक ज्ञान से अनेक व्यक्तियों का कल्याण किया और उनके दुखों का निवारण किया। ऐसी ही एक महान संत करूणामयी मां थीं। जिन्होंने अपने आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा देश–विदेश में अपने असंख्य भक्तों का मार्ग दर्शन किया और उनको अपनी आत्मीय शक्ति द्वारा परमानन्द की अनुभूति करायी।

वास्तव में संत वही है जो अपने अन्त को भलिभांति समझ लेता है और इस नाते उसका सांसारिक माया मोह से कोई लेना देना नहीं रह जाता। वह अपना घर परित्याग करके अपने को पारिवारिक बन्धनों से मुक्त कर पूर्ण रूप से परम ब्रह्म की साधना में लीन हो जाता है। यह उसका एक प्रकार से उस परम शक्ति के प्रति समर्पण होता है जिसमें वह अपनी योगिक क्रियाओं द्वारा परमात्मा से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करता है और इस मधुर मिलन के सम्पूर्ण होने पर उस साधक के शरीर में देवी शक्ति का संचार होता है और वह इस सिद्धि को प्राप्त कर एक उच्च कोटि के संत की श्रेणी में आ जाता है। यह तपस्या कठिन होती है और इसमें साधक को बहुत ही सावधानी बरतनी पड़ती है क्योंकि इसमें कभी कभी एक छोटी सी भूल के कारण अर्थ का अनर्थ हो जाता है और मनुष्य मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाता है। जिसका फिर कोई निदान सम्भव नहीं।

कुरूणामयी मां का जन्म सन् 1913 में नागपंचमी के दिन श्रीनगर के एक सम्भ्रान्त किचलू परिवार में हुआ था। जिसको अपने धर्म में अटूट आस्था थी और जहां पूजा अर्चना करना एक प्रकार से नित्य कर्म था। करूणामयी मां का बाल्यवस्था का नाम विमला था। आपको बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक ज्ञान की ओर विशेष प्रेम था और आप एक सन्यासिन का जीवन निर्वाह करना चाहती थीं पर आपके गुरू पंडित श्रीकान्त जोशी जो बीज बिहारा में निवास करते थे और जो स्वयं एक सिद्ध पुरूष थे ने आपको ऐसा करने की अनुमति नहीं दी। उनका मत था कि मनुष्य गृहस्थ रह कर भी एक सच्चे भाव से साधना कर सकता है और उसके लिये सन्यास लेना कोई आवश्यक नहीं। पंडित श्रीकान्त जोशी ने तुलामुला की मां राज्ञा देवी की कठोर पूजा अर्चना करके सिद्धि प्राप्त की थी और आपने ही करूणामयी मां को दिक्षा देकर आध्यात्म के मार्ग की ओर अग्रसर किया।

यों तो करूणामयी मां का विवाह दिल्ली के एक सम्भ्रान्त चन्ना परिवार में अवश्य हुआ पर पारिवारिक बन्धन उनको अपनी साधना से विमुख नहीं कर

पाये और उनकी ईश्वर के प्रति भक्ति अबोध गति से जारी रही। वह अधिकतर अपना समय पूजा–अर्चना और परम ब्रह्म की साधना में व्यतीत करने लगी। आपको ग्रहस्थ जीवन में तीन पुत्र रत्न प्राप्त हुऐ पर आपने अपने आध्यात्मिक कार्यक्रम में किसी प्रकार का कोई व्यवधान नहीं उत्पन्न होने दिया और लगभग 30 वर्ष तक नई दिल्ली में विविध धार्मिक अनुष्ठान, कार्यक्रम तथा सत्संग बड़े ही श्रद्धाभाव से निरन्तर आयोजित करती रहीं और भक्तजनों को उपदेश देती रहीं।

आपके द्वारा आयोजित इन धार्मिक कार्यकलापों में जो भी भक्तजन भाग लेने के लिये आते थे वह शने–शने आपके व्यक्तित्व और उपदेशों से प्रभावित होकर स्वभाविक रूप से आपके शिष्य बनने लगे और कालान्तर में उनकी संख्या में काफ़ी वृद्धि हो गयी जो आत्म विभोर होकर आपको करूणामयी मां के सम्बोधन से पुकारने लगे और इस प्रकार आप अपने असंख्य भक्तजनों की परमप्रिय करूणामयी मां बन गयीं।

कश्मीर घाटी में सन् 1989 में आतंकवाद की विनाशकारी लीला प्रारम्भ होने के पूर्व तक करूणामयी मां योग साधना तथा तुलामुला के राज्ञा देवी के मन्दिर में मां भगवती के दर्शन करने के लिये निरन्तर जाती रही पर वहां आतंकवाद के भयानक रूप लेने पर उनको विवश होकर अपना यह कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। आपको फिर एक ऐसे स्थान की आवश्यकता अनुभव हुई जहां आप सांसारिक माया मोह से विरक्त होकर एकाग्र भाव से एक रमणीक वातावरण में अपनी योग साधना कर सकें और जिसे आप अपने भक्तजनों के लिये एक आदर्श आध्यात्मिक केन्द्र के रूप में विकसित कर सकें।

करूणामयी मां ने तद्पश्चात दिल्ली के निकट हरियाणा राज्य में दिल्ली अलवर राज मार्ग पर स्थित गुणगांव जनपद की सोहना तहसील में साप की नगली नाम के गांव का चयन किया जो हर प्रकार से आपकी आवश्यकताओं के अनुकूल था। आपने सन् 1989 में इस गांव में श्री करूणामयी मां आश्रम की नींव रखी। आपने इस शक्ति पीठ के लिये लगभग 10 एकड़ भूमि क्रय की जहां आपने अपने भक्तजनों के सहयोग से एक भव्य दुर्गा भगवती के मन्दिर का निर्माण कराया। आपने आश्रम के प्रांगण में सत्संग तथा अन्य धार्मिक अनुष्ठानों के आयोजन के लिये एक भव्य हाल का भी निर्माण कराया जिसमें एक समय में लगभग 500 भक्तजनों के बैठने की समुचित व्यवस्था हो।

करूणामयी मां ने इस आश्रम के प्रांगण में अपने लिये तथा अपने विशेष शिष्यों के लिये आवास भी निर्माण कराये तथा भक्तों की उचित उपचार की व्यवस्था के लिये एक चिकित्सा केन्द्र का प्रबन्ध किया। आश्रम के प्रांगण में एक पुस्तकालय का भी निर्माण कराया गया जहां धर्म ग्रन्थों तथा अन्य धार्मिक पुस्तकों को सुरक्षित रखने की उचित व्यवस्था हो। मन्दिर के चारों ओर की भूमि पर अनेक सुन्दर फूलों तथा फलों के वृक्ष लगाये गये ताकि आश्रम के प्रांगण को एक मनोहारी स्वरूप दिया जा सके और पर्यावरण को भी प्रदूषित होने से बचाया जा सके। फलों में मुख्य रूप से आम, अमरूद, पपीता, नेबू, शरीफ़ा, इत्यादि के वृक्ष लगाये गये।

आश्रम के निवासियों की आवश्यकता को देखते हुये आश्रम में साग सब्ज़ी तथा खाद्यान्न उगाने का भी उचित प्रबन्ध किया गया जिसके लिये पानी उपलब्ध कराने के लिये एक ट्यूब वेल लगाया गया ताकि आश्रमवासियों को इन वस्तुओं के लिये इधर–उधर न भटकना पड़े। दूध तथा अन्य दुग्ध उत्पाद को प्राप्त करने के लिये आश्रम में एक गोशाला की व्यवस्था की गयी ताकि शुद्ध दूध ा और अन्य दुग्ध पदार्थ आश्रमवासियों को बिना किसी कठिनाई के प्राप्त हो सके। आश्रम के वायुमण्डल को प्रदूषण से मुक्त रखने के लिये उसकी चारदीवारी के चारों ओर नीम के वृक्ष लगाये गये ताकि आश्रमवासियों को सांस लेने के लिये स्वच्छ वायु मिले और वह स्वस्थ और रोगों से मुक्त रहें तथा शुद्ध अन्तःकरण के साथ मां भगवती की पूजा–अर्चना कर सकें।

करूणामयी मां को अपनी बाल्यवस्था से ही एकान्तवास प्रिय था। इसी कारण उन्होंने अपनी योग साधना के लिये इस निर्जन स्थान का चयन किया जहां वह बिना किसी व्यवधान के एकाग्र भाव से अपना जप, तप, और व्रत कर सके। आपने आश्रम को दूरभाष की सेवाओं से वंचित रखा ताकि व्यर्थ में आपका समय बर्बाद न हो और आपको अपने गूढ़ चिंतन में अनावश्यक रूप से बाधा न पड़े। चूंकि आपको काफ़ी अल्प आयु में ही सिद्धि प्राप्त हो गयी थी अतः आप अपना अधिक से अधिक समय मां भगवती की उपासना करने में व्यतीत करती थीं और मां भगवती के ध्यान में मग्न होकर एक अलौकिक आनन्द की अनुभूति अनुभव करती थीं, जिसमें आपके मुख मण्डल पर एक विशेष ईश्वरीय आभा की झलक स्पष्ट प्रतिबिम्बित होती थी जो उनकी एक प्रकार से दैवी शक्ति का प्रतीक थी।

नवरात्र के दिनों में आपके असंख्य भक्त आपके दर्शनों की लालसा लिये

हुऐ देश के विभिन्न अंचलों से आपके आश्रम में आते थे जिनके वाहनों की पार्किंग के लिये आश्रम के बाहर विशेष व्यवस्था करनी पड़ती थी ताकि दिल्ली–अलवर राज्य मार्ग यातायात के लिये अवरूद्ध न हो। इन विशेष अवसरों पर आश्रम में आपके भक्तों की अपार भीड़ रहती थी जिनके लिये आश्रमवासियों को उपयुक्त व्यवस्था करनी पड़ती थी ताकि किसी भी भक्त को कोई असुविधा या कठिनाई न हो और वह निश्चिन्त भाव से साधना में तल्लीन हो सकें।

करूणामयी मां का अपने भक्तों को संदेश था कि मां भगवती की सच्ची उपासना के लिये तन और मन दोनों का शुद्ध होना परम आवश्यक है। यदि आपका शरीर स्वच्छ नहीं है और मन में बुरे विचारों ने घर कर रखा है तो फिर मां भगवती की उपासना सम्भव नहीं। आपका स्पष्ट मत था कि आध्यात्म के ज्ञान के लिये मनुष्य को पवित्र और स्वच्छ होना आवश्यक है तभी उसे सिद्धि प्राप्त हो सकती है। आप इसी विचार धारा के अन्तर्गत मन्दिर में स्थापित देवी–देवताओं की मूर्तियों को नित्य स्नान करा कर साफ़ कपड़े और आमूषण पहनाती थीं और स्वयं भी नित्य स्नान करके स्वच्छ वस्त्र धारण करती थीं क्योंकि आपके मतानुसार पवित्र शरीर में ही ईश्वर का वास होता है और पवित्र मन से ही सच्ची पूजा अर्चना होती है। यों तो कश्मीर घाटी में अनेक ऐसे संत और सिद्ध पुरूष हुऐ हैं जो बहुत ही दरिद्रता से रहते थे पर करूणामयी मां की विचारधारा उन संतों से एकदम विपरीत थी जो गन्दगी और अपवित्र हरकतों को करने को प्राथमिकता देते थे और उन्हीं के माध्यम से परम ब्रह्म से सम्बन्ध स्थापित करने को महत्व देते थे।

करूणामयी मां ने सदैव एक स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन के मूल मंत्र को मां भगवती की उपासना में महत्व दिया आपने सिद्धि प्राप्त करने के लिये जापमाला के स्थान पर जाप करने को अधिक बल दिया। आप जब अपने भक्तों से बात करती थी तो आपके दाहिने हाथ में एक थैली में जापमाला गोपनीय तरीके से रखी रहती थीं। आप अपने भक्तों को नित्य ऊंचे स्वर में उपासना करने का आदेश देती थी। आप इस प्रकार लयबद्ध ध्वनि के वातावरण में जाप प्रारम्भ करने से पूर्व उसके लिये उचित आध्यात्मिक वातावरण का निमार्ण करती थी। आपने अपने आश्रम में कश्मीरी भाषा में लिखे हुऐ भजनों का चयन किया था जिनको भक्तगण बड़ी ही श्रद्धापूर्वक गाते थे। यह प्रार्थना आश्रम में नित्य गायी जाती थी। आपके अनेक भक्त अन्य वर्गों और समुदायों के भी थे पर वह भी कश्मीरी भक्तिगीत उसी उच्चारण के साथ गाते थे जैसी प्रथा कश्मीर घाटी में

करूणामयी मां ने इस आश्रम के प्रांगण में अपने लिये तथा अपने विशेष शिष्यों के लिये आवास भी निर्माण कराये तथा भक्तों की उचित उपचार की व्यवस्था के लिये एक चिकित्सा केन्द्र का प्रबन्ध किया। आश्रम के प्रांगण में एक पुस्तकालय का भी निर्माण कराया गया जहां धर्म ग्रन्थों तथा अन्य धार्मिक पुस्तकों को सुरक्षित रखने की उचित व्यवस्था हो। मन्दिर के चारों ओर की भूमि पर अनेक सुन्दर फूलों तथा फलों के वृक्ष लगाये गये ताकि आश्रम के प्रांगण को एक मनोहारी स्वरूप दिया जा सके और पर्यावरण को भी प्रदूषित होने से बचाया जा सके। फलों में मुख्य रूप से आम, अमरूद, पपीता, नेबू, शरीफा, इत्यादि के वृक्ष लगाये गये।

आश्रम के निवासियों की आवश्यकता को देखते हुये आश्रम में साग सब्ज़ी तथा खाद्यान्न उगाने का भी उचित प्रबन्ध किया गया जिसके लिये पानी उपलब्ध कराने के लिये एक ट्यूब वेल लगाया गया ताकि आश्रमवासियों को इन वस्तुओं के लिये इधर–उधर न भटकना पड़े। दूध तथा अन्य दुग्ध उत्पाद को प्राप्त करने के लिये आश्रम में एक गोशाला की व्यवस्था की गयी ताकि शुद्ध दूध ा और अन्य दुग्ध पदार्थ आश्रमवासियों को बिना किसी कठिनाई के प्राप्त हो सके। आश्रम के वायुमण्डल को प्रदूषण से मुक्त रखने के लिये उसकी चारदीवारी के चारों ओर नीम के वृक्ष लगाये गये ताकि आश्रमवासियों को सांस लेने के लिये स्वच्छ वायु मिले और वह स्वस्थ और रोगों से मुक्त रहें तथा शुद्ध अन्तःकरण के साथ मां भगवती की पूजा–अर्चना कर सकें।

करूणामयी मां को अपनी बाल्यवस्था से ही एकान्तवास प्रिय था। इसी कारण उन्होंने अपनी योग साधना के लिये इस निर्जन स्थान का चयन किया जहां वह बिना किसी व्यवधान के एकाग्र भाव से अपना जप, तप, और व्रत कर सकें। आपने आश्रम को दूरभाष की सेवाओं से वंचित रखा ताकि व्यर्थ मे आपका समय बर्बाद न हो और आपको अपने गूढ़ चिंतन में अनावश्यक रूप से बाधा न पड़े। चूंकि आपको काफ़ी अल्प आयु में ही सिद्धि प्राप्त हो गयी थी अतः आप अपना अधिक से अधिक समय मां भगवती की उपासना करने में व्यतीत करती थीं और मां भगवती के ध्यान में मग्न होकर एक अलौकिक आनन्द की अनुभूति अनुभव करती थीं, जिसमें आपके मुख मण्डल पर एक विशेष ईश्वरीय आभा की झलक स्पष्ट प्रतिबिम्बित होती थी जो उनकी एक प्रकार से दैवी शक्ति का प्रतीक थी।

नवरात्र के दिनों में आपके असंख्य भक्त आपके दर्शनों की लालसा लिये

हुऐ देश के विभिन्न अंचलों से आपके आश्रम में आते थे जिनके वाहनों की पार्किंग के लिये आश्रम के बाहर विशेष व्यवस्था करनी पड़ती थी ताकि दिल्ली–अलवर राज्य मार्ग यातायात के लिये अवरूद्ध न हो। इन विशेष अवसरों पर आश्रम में आपके भक्तों की अपार भीड़ रहती थी जिनके लिये आश्रमवासियों को उपयुक्त व्यवस्था करनी पड़ती थी ताकि किसी भी भक्त को कोई असुविधा या कठिनाई न हो और वह निश्चिन्त भाव से साधना में तल्लीन हो सकें।

करूणामयी मां का अपने भक्तों को संदेश था कि मां भगवती की सच्ची उपासना के लिये तन और मन दोनों का शुद्ध होना परम आवश्यक है। यदि आपका शरीर स्वच्छ नहीं है और मन में बुरे विचारों ने घर कर रखा है तो फिर मां भगवती की उपासना सम्भव नहीं। आपका स्पष्ट मत था कि आध्यात्म के ज्ञान के लिये मनुष्य को पवित्र और स्वच्छ होना आवश्यक है तमी उसे सिद्धि प्राप्त हो सकती है। आप इसी विचार धारा के अन्तर्गत मन्दिर में स्थापित देवी–देवताओं की मूर्तियों को नित्य स्नान करा कर साफ़ कपड़े और आमूषण पहनाती थीं और स्वयं भी नित्य स्नान करके स्वच्छ वस्त्र धारण करती थीं क्योंकि आपके मतानुसार पवित्र शरीर में ही ईश्वर का वास होता है और पवित्र मन से ही सच्ची पूजा अर्चना होती है। यों तो कश्मीर घाटी में अनेक ऐसे संत और सिद्ध पुरूष हुऐ हैं जो बहुत ही दरिद्रता से रहते थे पर करूणामयी मां की विचारधारा उन संतों से एकदम विपरीत थी जो गन्दगी और अपवित्र हरकतों को करने को प्राथमिकता देते थे और उन्हीं के माध्यम से परम ब्रह्म से सम्बन्ध स्थापित करने को महत्व देते थे।

करूणामयी मां ने सदैव एक स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन के मूल मंत्र को मां भगवती की उपासना में महत्व दिया आपने सिद्धि प्राप्त करने के लिये जापमाला के स्थान पर जाप करने को अधिक बल दिया। आप जब अपने भक्तों से बात करती थी तो आपके दाहिने हाथ में एक थैली में जापमाला गोपनीय तरीके से रखी रहती थीं। आप अपने भक्तों को नित्य ऊंचे स्वर में उपासना करने का आदेश देती थी। आप इस प्रकार लयबद्ध ध्वनि के वातावरण में जाप प्रारम्भ करने से पूर्व उसके लिये उचित आध्यात्मिक वातावरण का निमार्ण करती थी। आपने अपने आश्रम में कश्मीरी भाषा में लिखे हुऐ भजनों का चयन किया था जिनको भक्तगण बड़ी ही श्रद्धापूर्वक गाते थे। यह प्रार्थना आश्रम में नित्य गायी जाती थी। आपके अनेक भक्त अन्य वर्गों और समुदायों के भी थे पर वह भी कश्मीरी भक्तिगीत उसी उच्चारण के साथ गाते थे जैसी प्रथा कश्मीर घाटी में

प्रचलित रही है।

वर्ष के दोनों नवरात्र के पवित्र पर्वों पर आश्रम में विशेष प्रार्थना सभायें आयोजित की जाती थीं और दुर्गा अष्ठमी के पावन अवसर पर दिनभर आश्रम में हवन होता था और भवानीसहस्त्रानाम के अनुसार मां दुर्गा को ओम् स्वाहा कह कर आहुति दी जाती थी। ताकि वह हमारे कष्टों का निवारण कर हमें सद् मार्ग पर चलने को अपने अशिर्वाद द्वारा शक्ति प्रदान करें और हमारे भविष्य को उज्जवल बनायें। हवन के पश्चात भक्तों में प्रसाद वितरण किया जाता था जिसमें निवेद के रूप में चावल, दम, आलू, हाक, वागुन, दाल, नदरू इत्यादि रहता था। चूंकि भक्तों की संख्या काफ़ी अधिक रहती थी अतः उनके भोजन ग्रहण करने के लिये आश्रम में एक पक्का लम्बा चबूतरा निर्माण किया गया था जिस पर भक्तों को प्रसाद का वितरण होता था।

करूणामयी मां वास्तव में करूणा की एक प्रतिमूर्ति थीं। आपने अधिक आयु हो जाने और अस्वस्थ रहने पर भी अपने किसी भक्त को निराश नहीं किया और सदैव प्रेम भाव से उनको अपने दर्शन देती रही और उनका अपने आशीष वचनों द्वारा मनोबल बढ़ाती रही जो भी भक्त आपके पास अपनी कोई समस्या लेकर आता आप उसको बहुत ही सहज भाव से शान्तिपूर्वक सुनती और उसकी समस्या के निराकरण का सदैव प्रयास करती ताकि वह आश्रम से संतुष्ट होकर जाये और उसके मन में किसी प्रकार की शंका या कुण्ठा न उत्पन्न हो। आप अपने भक्तों को तिलक लगा कर उनके हाथ में नाड़ा बांधती और उनको जाप करने के लिये मंत्र देती ताकि मां भगवती उनके कष्टों और दुखों का शीघ्र निवारण कर उनको मन की शान्ति प्रदान करें। आप उनकी प्रगति का मूल्यांकन करती रहती थी और यदि किसी मंत्र से उपयुक्त लाभ नहीं प्राप्त हो रहा होता था तो फिर उस भक्त को कोई दूसरा मंत्र जाप करने के लिये देती थी। आपकी बुद्धि इतनी विलक्षण थी कि आप अधिकतर अपने भक्तों को उनके नाम से पुकारती थीं।

करूणामयी मां वर्ष में एक बार अपने भक्तों और शिष्यों के साथ गंगा स्नान के लिये हरिद्वार जाती थी। आश्रमवासियों के लिये यह बहुत ही महत्वपूर्ण अवसर होता था। हरिद्वार में गंगा स्नान के पश्चात दिनभर पूजा—अर्चना होती थी। आप इस अवसर पर अपने शिष्यों को मंत्रों की दीक्षा देती थी और कश्मीरी पंडितों के सुखमय जीवन तथा उनकी कश्मीर वापसी की मंगल कामना करती

थी।

करूणामयी मां ने आध्यात्म के साथ–साथ समाज सेवा पर भी बल दिया आपने निर्धन रोगियों को उचित उपचार के साधन उपलब्ध कराने के उद्देश्य से आश्रम के प्रांगण में एक होमियोपैथिक तथा एक आयुर्वेदिक अस्पताल की स्थापना की और जहां उनको निःशुल्क औषधियों के वितरण की व्यवस्था की गयी। आप कुशल तथा अनुभवी डाक्टरों को आश्रम में आमंत्रित करती थी जो निर्धन रोगियों की निशुल्क चिकित्सा करते थे। आप नेत्र रोगियों के उपचार तथा उनकी आंखों में मोतियाबिन्द के आपरेशन के लिये आश्रम में मेडिकल कैम्प लगवाती थी। आपने आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई महिलाओं के प्रशिक्षण के लिये एक सिलाई–बुनाई केन्द्र स्थापित किया ताकि वह सम्मान पूर्वक अपना जीवन निर्वाह कर सके और आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बने। आपने गांव के बच्चों को साक्षर बनाने तथा उनकी उचित शिक्षा की व्यवस्था को ध्यान में रखते हुएं उनके लिये एक प्राईमरी स्कूल की स्थापना की। आपको बच्चों से बहुत अधिक प्रेम था और उनके खेल कूद के लिये आपने आश्रम में मनोरंजन के साधनों से युक्त एक सुन्दर पार्क की स्थापना की। वर्ष में एक बार आप बच्चों के लिये खेल–कूद की प्रतियोगिताऐं आयोजित करती थीं जिनमें उनके उत्साहवर्धन के लिये पुरूस्कार वितरण किये जाते थे।

नवरात्र के दिनों में बच्चों से मंत्रों का उच्चारण कराया जाता था और जो बच्चा मंत्रों का सही उच्चारण करता था उसको पुरूस्कृत किया जाता था। नवमी के दिन नौ कन्याओं को देवियों की भांति सजा कर मन्दिर तक एक भव्य जलूस के रूप में ले जाया था जहां उनकी पूजा–अर्चना के पश्चात उनके चरणों को करूणामयी मां स्वयं अपने हाथों से धोती थीं फिर उनको दान–दक्षिणा देकर आश्रम से पूरे विधि विधान के साथ विदा किया जाता था। इस अवसर पर असहाय व्यक्तियों को वस्त्र भी वितरित किये जाते थे।

करूणामयी मां हर वर्ष किसी विशेष दिन गांव के व्यक्तियों को आश्रम में आमंत्रित करती थीं और उनके उज्जवल भविष्य के लिये की गयी पूजा के समाप्त होने पर उनको दिन का भोजन आश्रम में खिलवाती थीं। आप इस प्रकार सम्पूर्ण गांव के हर व्यक्ति से अपना सम्पर्क बनाये रखती थीं। आपने हिन्दी में अनेक भक्ति की कवितायें रची हैं जो आश्रम द्वारा मां के प्रसाद के रूप में प्रकाशित की गयी हैं जिनमें कबीर की भांति ज्ञान भक्ति का बोध होता है। आप कहती हैं :–

ज्ञानभक्ति के बिना कहां मिले निर्वान
गुरू चरण सेवा बिना नहीं मिले भगवान

आप इसी प्रकार भक्तों को चेतावनी देते हुये कहती हैं :–

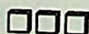
"भूल पर भूल करे अपने को डुबोये
नेकी कर तेरे काम आये क्यों उसे बचाये।"

करूणामयी मां की आवाज़ में बहुत अधिक मिठास और सम्मोहन करने की शक्ति थी। जब वह मंत्र मुग्ध होकर अपनी भक्तिरस से ओत–प्रोत रचनाओं का अपनी मधुरवाणी द्वारा पाठ करती थी तो श्रोतागण आत्म विभोर हो जाते थे। आपको संगीत से बहुत अधिक प्रेम था और सदैव अच्छे गायकों को प्रोत्साहित करती थीं जो भजनों को एक अच्छी धुन के साथ गा सके।

करूणामयी मां को भ्रमण करने का बंहुत शौक़ था। आपने पूरे देश का व्यापक भ्रमण किया था और अपने भक्तों को उपदेश दिये। आपने अमरीका, कनाडा, योरप तथा हांकांग की अनेक बार यात्रा की और वहां रह रहे अपने भक्तों के साथ सत्संग किये। आपने 1 सितम्बर सन् 2000 को दो माह के लिये जर्मनी तथा फ्रांस का व्यापक भ्रमण किया।

करूणामयी मां ने अपनी समाधी लेने से पूर्व अपने आश्रम की उचित देख भाल के लिये अपने शिष्य एक युवा सन्यासी का चयन किया जिनको विधिवत मंत्रोचारण द्वारा अभिषेक करके करूणामयी मां ने उनको नन्द बाबा के रूप में अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। करूणामयी मां ने 28 अक्टूबर सन् 2000 को लगभग 87 वर्ष की आयु में निर्वाण प्राप्त किया। आशा है नन्द बाबा करूणामयी मां द्वारा स्थापित परम्पराओं और आदर्शों का पालन करते हुए आश्रम को देश के एक प्रमुख आध्यात्मिक केन्द्र के रूप में विकसित करने का प्रयास करेंगे जो उस महान आत्मा के प्रति एक सच्ची श्रद्धांजलि होगी महाकवि गोस्वामी तुलसी दास ने अपनी भावना को कुछ इस प्रकार प्रकट किया है।

संत सरल चित जगत हित जानि सुयाऊ सनेहु।
बाल विनय सुनि करि कृपा राम चरन रति देहु।।



बुलबुले हिन्द और मुजाहिदे उर्दू

डॉ० आनन्द मोहन जुत्शी "गुलज़ार"



भारतवर्ष में मुग़ल शासन काल में तथा उसके पश्चात ब्रिटिश शासन काल में उर्दू तथा फ़ारसी भाषा का बराबर वर्चस्व बना रहा क्योंकि राज का अधिकतर कार्य इन्हीं भाषाओं के माध्यम से सम्पादित होता था। यही एक प्रमुख कारण था कि हर व्यक्ति इन दोनों भाषाओं में दक्षता प्राप्त करने का प्रयास करता था ताकि वह एक अच्छी सरकारी नौकरी प्राप्त करने में सफल हो सके। कश्मीरी पंडित भी इसका अपवाद नहीं थे और अनेकं कश्नीरी पंडितों ने इन दोनों भाषाओं में न केवल विशेष योग्यता अर्जित की अपितु उनके साहित्य में अपना महत्वपूर्ण योगदान कर उनको और अधिक लोकप्रिय और सम्पन्न किया। कश्मीरी पंडितों में उर्दू भाषा के शायरों की एक लम्बी परम्परा रही है जिन्होंने अपने कलाम से उर्दू साहित्य के क्षेत्र में अनेक नये मूल्यों और आदर्शों को स्थापित किया और अपनी सशक्त लेखनी द्वारा उसमें एक बिलकुल नयी विचारधारा का सूत्रपात किया जो प्रायः उस समय के प्रचलित उर्दू के साहित्य में एक प्रकार से एक बिलकुल नये शिल्प का प्रयोग था। पंडित दयाशंकर कौल "नसीम" ने उर्दू साहित्य में "मसनवी" लिखने की एक नयी शैली विकसित की वहीं पंडित रतन नाथ दर "सरशार" ने उर्दू भाषा में अफ़साना लिखने की विधा को एक नया रूप दिया वहीं पंडित बृज नारायण चकबस्त ने उर्दू की शेर–शायरी में वेदों तथा पुराणों के प्रसंगों का समावेश किया जबकि उर्दू की शेर शायरी अधिकतर गुलों बुलबुल तथा आशीकी माशूकी के कसीदों तक ही सीमित थी। कश्मीरी पंडितों के उर्दू की शेर शायरी में इस अभूतपूर्व योगदान को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता जिसने उस भाषा का चौमुखी विकास कर उसमें एक

नवीन चेतना जागृत की और उस भाषा को लोकप्रिय बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

अनेक कश्मीरी पंडित अपने समय के एक प्रतिष्ठित उर्दू के शायर रहे हैं जिनको समाज के हर वर्ग से मान–सम्मान मिला। इन प्रतिभावान शायरों के कलाम को सर्वप्रथम डॉ0 सर तेज बहादुर सप्रू के संरक्षण में बहारे गुलशने कश्मीर के रूप में दो खण्डों में क्रमशः सन् 1931 तथा सन् 1932 में प्रकाशित किया गया। पर देश के सन् 1947 में स्वतंत्र होने के पश्चात हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया और धीरे धीरे उर्दू की शेर–शायरी के प्रति लोगों की रूचि कम होने लगी जिसके कारण उर्दू की शेर शायरी का स्तर घटने लगा। शायर भी अधिकतर अपनी शायरी में परिमार्जित भाषा के स्थान पर चालू भाषा के शब्द प्रयोग करने लगे और द्विअर्थी शब्दों को अपनी शायरी में अधिक महत्त्व देने लगे जिसके कारण भाषा की शालीनता, पवित्रता और मिठास एकदम समाप्त हो गयी और उसके स्थान पर एक सड़क छाप भाषा का शायरी पर आधिपत्य होने लगा परन्तु फिर भी कुछ गिने चुने शायरों ने अपने को इस चूहादौड़ से दूर रखा और अपनी शायरी में पुरानी स्थापित परम्पराओं का निर्वाह करते हुऐ उसके स्तर में किसी प्रकार की गिरावट नहीं आने दी। ऐसे ही विद्वान शायरों की अग्रिम पंक्ति में एक नाम डॉ0 आनन्द मोहन नाथ जुत्शी "गुलज़ार" का है जिन्होंने अपनी शायरी द्वारा अनेक अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर और मुशायरों में उर्दू भाषा को मान्यता दिलायी और उसे उर्दू प्रेमियों में लोकप्रिय बनाया।

डॉ0 आनन्द मोहन नाथ जुत्शी "गुलज़ार" के पूर्वजों तथा उनके परिवार के बारे में विस्तृत रूप से इस पुस्तक के प्रथम खण्ड में वर्णन किया जा चुका है। आपके पिता अल्लामा पंडित त्रिभुवन नाथ जुत्शी "ज़ार" स्वयं अपने समय के दिल्ली के एक प्रतिष्ठित उर्दू के शायर थे। आपकी माताजी जो विक्टोरिया जी के नाम से प्रसिद्ध थीं भी एक जानी–मानी शायरा थीं तथा सम्पूर्ण बिरादरी में अपने कुछ इन्हीं विशेष गुणों के लिये विख्यात थीं।

डॉ0 आनन्द मोहन नाथ जुत्शी "गुलज़ार" का जन्म 7 जु[illegible]ई सन् 1[illegible] को दिल्ली की बाज़ार सीताराम की गली कश्मीरियान में स्थित अपनी पैतृक हवेली में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा कक्षा 1 से लेकर कक्षा 11 तक दिल्ली के रामजस स्कूल में सम्पन्न हुई। आपने फिर सन् 1942 में अपनी हायर सेकेन्ड्री की परीक्षा वी0जे0 सेकेन्ड्री स्कूल से उत्तीर्ण की।

डॉ0 आनन्द मोहन नाथ जुत्शी "गुलज़ार" ने फिर उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से दिल्ली के हिन्दू कालेज में प्रवेश लिया जहां से सन् 1948 में आपने उर्दू साहित्य में एम0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण की। उस समय डॉ0 एन0वी0 थडानी कालेज के प्राचार्य थे। चूंकि उस समय सांयकालीन लॉ की कक्षायें चलती थीं और एम0ए0 के साथ एल–एल0बी0 करने का प्राविधान था अतः आपने अपनी एम0ए0 की परीक्षा के साथ साथ दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध लॉ कालेज से अपनी एल–एल0बी0 की परीक्षा भी उत्तीर्ण की जिस कालेज के उस समय डॉ0 सुब्रामणियम प्राचार्य थे।

चूंकि आपको अपनी बाल्यवस्था से ही अपने घर के शेर–शायरी के वातावरण के कारण उर्दू भाषा से विशेष प्रेम हो गया था। अतः उसमें पारन्गत होने के लिये देश के विभाजन से पूर्व लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा संचालित उर्दू में अदीब–ए–फ़ाज़िल ऑनर्स की परीक्षा तथा फ़ारसी में मुन्शी फ़ाज़िल की परीक्षा उत्तीर्ण की। आपने यह परीक्षायें सन् 1942 और सन् 1943 में उत्तीर्ण की जो उस समय पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा दिल्ली में उर्दू कालेज में अंजुमन तरक्की–ए–उर्दू के तत्वावधान में कराई जाती थी। पंडित बृज मोहन दत्तात्रेय "कैफ़ी" आपके उर्दू तथा फ़ारसी के उस्ताद थे।

डॉ0 आनन्द मोहन नाथ जुत्शी "गुलज़ार" ने अपने विश्वविद्यालय के छात्र जीवन में अपने आवास के निकट स्थित अकेडिमी ऑफ़ कम्पीटीशन्स मे सांयकालीन कक्षाओं में कुछ वर्ष अध्यापन का भी कार्य किया जहां आप छात्रों को उर्दू, फारसी तथा इतिहास पढ़ाते थे। यह अकेडिमी आपके परिचित पंडित स्वरूप कृष्ण रैना द्वारा स्थापित की गयी थी। आपने कुछ वर्ष छावनी बाज़ार के कृष्णा कालेज तथा पी0टी0 कालेज में भी शौकिया तौर पर अध्यापन का कार्य किया।

डॉ0 आनन्द मोहन नाथ जुत्शी "गुलज़ार" ने अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के पश्चात ब्रिटिश शासन काल में सर शंकर लाल के सांस्कृतिक परामर्शदाता के रूप में जून, 1947 से विधिवत नौकरी करनी प्रारम्भ की। सर शंकर लाल उस समय देहली क्लाथ मिल्स के प्रबंध निदेशक थे। आप उनके लेबर गज़ेट नाम की पत्रिका का सम्पादन भी करते थे और साथ ही साथ कानून की सांयकालीन कक्षाओं में पढाई भी करते थे।

आपने अंग्रेज़ी, उर्दू, फारसी तथा अरबी भाषा के साथ–साथ संस्कृत भाषा का ज्ञान कलकत्ते के प्रसिद्ध संस्कृत भाषा के विद्वान महामहोपाध्याय पंडित

लक्ष्मी नाथ धर से प्राप्त किया जो दिल्ली में उस समय निवास करते थे।

15 अगस्त सन् 1947 को देश का धर्म के नाम पर विभाजन होने पर साम्प्रदायिक उन्माद भड़का जिसमें असंख्य असहाय व्यक्तियों की निर्मम हत्याऐं की गयीं और अनेक अबलाओं की अस्मत लूटी गयी। लाखों की सख्या में सीमा पार से विभिन्न हिन्दु समुदायों के व्यक्ति भारत में शरणार्थी के रूप में आये। जिनको उचित सहायता पहुंचाने के लिये सरकार ने दिल्ली में अनेक स्थानों पर शिवरों का प्रबन्ध किया। गुलज़ार साहब ने विभाजन की इस भीषण त्रासदी में अनेक महत्त्वपूर्ण राहत के कार्य किये। आपको इन राहत सम्बंधित कार्यों की उचित देख भाल के लिये सितम्बर सन् 1947 से अक्टूबर सन् 1948 तक लगभग एक वर्ष ऑनरेरी चीफ़ कम्पनी कमान्डर तथा दिल्ली पुलिस का आनरेरी स्पेशल पुलिस आफ़िसर बनाया गया। आपने यह कार्य बहुत ही निष्ठापूर्वक सम्पादित किया।

भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने देश को विज्ञान के क्षेत्र में आत्म निर्भर बनाने के उद्देश्य से विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद का गठन किया जिसका उपाध्यक्ष तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को बनाया गया। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के आग्रह करने पर "गुलज़ार" साहब ने सन् 1953 के अगस्त माह में विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के दिल्ली कार्यालय में सेक्शन अफ़सर का पदभार ग्रहण किया। आपको उस पद पर कार्य करने के पश्चात प्रोन्नती करके स्टोर नियंत्रक और विजिलेन्स अफ़सर बना दिया गया। आप परिषद द्वारा उर्दू में प्रकाशित पत्रिका "साइंस की दुनिया" के सन् 1972 से सन् 1978 तक सम्पादक रहे और आपने अपने अथक प्रयास से उस पत्रिका को स्तरीय और लोक प्रिय बनाया। आपको फिर विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के प्रकाशन विभाग का इन्चार्ज बना दिया गया। जो विभिन्न भारतीय भाषाओं में विज्ञान की शोधपरक पत्रिकायें प्रकाशित करता है। आप इस पद से सन् 1988 में सेवानिवृत्त हुऐ।

गुलज़ार साहब को शेर–शायरी का शौक़ एक प्रकार से अपने माता–पिता से विरासत के रूप में मिला। आपके पिता पंडित त्रिभुवन नाथ जुत्शी "ज़ार" स्वयं एक उर्दू के प्रतिष्ठित शायर थे और आपके एक प्रकार से शायरी के क्षेत्र में उस्ताद भी थे। "गुलज़ार" साहब ने अपने घर के शायराना माहौल के कारण काफ़ी अल्प

आयु से ही शेर कलम बन्द करने प्रारम्भ कर दिये थे। आपका शेर–शायरी में जिन उस्ताद शायरों ने मार्ग दर्शन किया उनमें प्रमुख थे पंडित ब्रिज मोहन दत्तात्रेय "कैफ़ी", डॉ0 मौलवी अबुल हक़ और नवाब मिर्ज़ा सिराजुद्दीन अहमद खां "सैल"।

"गुलज़ार" साहब ने अपनी शायरी के प्रारम्भिक दौर में अधिकतर राष्ट्रभक्ति से ओत–प्रोत नज़्में लिखीं ताकि ब्रिटिश शासनकाल में आम जनता में देशभक्ति की भावना को जागृत किया जा सके पर देश के स्वतंत्र होने के पश्चात आपने लगभग हर विषय पर अपने शेर कलम बन्द किये जिनका कैन्वस बहुत ही विशाल था। आपने आध्यात्म, रोमांस, भक्ति, दर्शन जैसे विषयों पर अनेक कृतियां रचित कीं और लगभग शायरी की हर विधा में शेर लिखे जैसे ग़जल, नज़्म, रूबाई, क़ता, इत्यादि। आप अपनी उर्दू भाषा की लियाक़त के बारे में कुछ यो फ़रमाते हैं।

गुलज़ार आबरूए ज़बान अब हमी से है
दिल्ली में अपना बाअदब यह लुत्फ़ सुखन कहाँ
आशनाऐ रनज होता चला जाता हूँ
देखिये यह ज़िन्दिगी अब क्या से क्या हो जायेगी।

आप अपने वतन के ज़ज़्बे को अपनी बेलौस शायरी में कुछ इस प्रकार प्रकट करते हैं।

शौक़ पैदा कर दिया अरमान पैदा कर दिया
ज़िन्दिगी ने मौत का सामान पैदा कर दिया
ऐसी ज़मीन से उभरें हज़ार तहज़ीबें
इसी में नक़्श तमददुन समाऐ किया किया।

आप मनुष्य के तनावग्रस्त होने पर उसकी कठिनाईयों का अपनी शायरी में कुछ इस प्रकार चित्रण करते हैं।

देख कर मेरी परेशानी खुदा का शुक्र है
जो परेशां हाल थे शुक्रे खुदा करने लगे।
आशिक़ी की अदा हुऐ सजदे हम
तारीख़े नमाज़ क्या जानें।।

आप अपनी महबूबा की तारीफ़ में किसी भी व्यक्ति का धर्म के नाम पर वर्गीकरण करने में तंज़ करते हुऐ कुछ इस प्रकार फ़रमाते हैं।

कौन मोमिन है कौन काफिर है

और यह इमतियाज किया जाता है।
खुदा हुस्न दिया है शबाब के साथ
शराब व जाम ख़नकते हुऐ अबाब के साथ।
लबों से छूके पिला शराब वाईज को
पुराने लोग रस पीते हैं यह गुलाब के साथ।

गुलज़ार साहब अपनी नायिका की सुन्दरता का चित्रण अपनी भावपूर्ण भाषा में एक अनूठे अन्दाज़ के साथ कुछ इस प्रकार बयान करते हैं।

आमद पर क्या क़यामत आऐगी
पूछता है तेरी ज़वानी से।
अश्क बहते हैं दिल सुलगता है
आग बुझती नहीं है पानी से।

आपकी भाषा पर पकड़, अपने भावों की अभिव्यक्ति तथा शब्दों का चयन आपके द्वारा कलमबन्द किये गये निम्नलिखित शेर में देखने को मिलता है जिसमें आप अपनी इच्छा को कुछ इस प्रकार प्रकट करते हैं जैसे आप बहुत अधिक समय से सुखद मिलन के लिये व्याकुल हों।

साक़ी की निगाहों से जवाँ मिल जाये
फिरता हूँ कि मस्ती की कहानी मिल जाऐ।
देता है तो दे जामे होश कारवाँ को
गुज़ारे अकरम से मुझे पानी मिल जाऐ।

गुलज़ार साहब ने विभिन्न मुशायरों में शिरकत करने के सिलसिले में देश का कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक तथा कच्छ से लेकर कामाख्या देवी तक व्यापक भ्रमण किया है और असंख्य उर्दू प्रेमियों को अपने कलाम से नवाज़ा है। आप अब तक लगभग 60–65 देशों की यात्रा कर चुके हैं। जहां आपको विभिन्न अलंकरणों से सम्मानित किया जा चुका है। आपने उर्दू भाषा के प्रचार और प्रसार के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया है जिसके लिये विभिन्न सरकारी तथा ग़ैर सरकारी संस्थान और अकादामियों ने आपको पदक, शील्ड तथा प्रशस्तिपत्र देकर सम्मानित किया है। जिनमें से प्रमुख हैं देहली की प्रदेश सरकार तथा खुसरो अकेडिमी का अवार्ड बज्मे साज़ो आदाब पुरस्कार, भारत सरकार का इफ़्तिकारे ग़ालिब पुरस्कार, अलीगढ़ विश्वविद्यालय का नवाब छतारी पुरस्कार, खंडवा का ख्वाजा मोयीउद्दीन चिश्ती पुरस्कार, जयपुर की संस्था मौडर्न राईटर्स एसोसिएशन

का पुरस्कार मुम्बई का उर्दू पुरस्कार, लखनऊ का मीर तकी मीर पुरस्कार, दिल्ली का फिराक़ गोरखपुरी पुरस्कार, करांची पाकिस्तान का मुशावी पुरस्कार, लाहौर का अल्लामा इक्बाल पुरस्कार तथा जर्मनी के बर्लिन नगर में शायरी के लिये विश्व शान्ति पुरस्कार इत्यादि इत्यादि।

गुलजार साहब को लन्दन, कनाडा, अमरीका, अटलान्टा, सिनसिनाटी, ब्राजील, आस्ट्रेलिया, हांकांग तथा अनेक अरब देशों में भी कई बार सम्मानित किया जा चुका है जहां आपने उर्दू की शिक्षा के लिये 14 प्राईमरी स्कूलों की स्थापना की।

गुलज़ार साहब के अनुसार वह सन् 1943 से अब तक विभिन्न मुशायरों में अपने लगभग 35,000 शेर पढ़ चुके हैं जो स्वयं में एक विश्व रिकार्ड है। इसके पूर्व 7वीं शताब्दी में ईरान के प्रसिद्ध फारसी भाषा के शायर अब्दुल कासिम मन्सूर "फिरदौसी" ने अपने "शाहनामा" में 50,000 शेरों में ईरान के 360 ईसा पूर्व से लेकर सन् 641 तक के शासकों के कार्यकलापों का वर्णन किया था। जो एक विश्व रिकार्ड माना जाता है। यह सोने के अक्षरों में लिखा गया है।

गुलज़ार साहब को उनके उर्दू भाषा के प्रति किये गये अभूतपूर्व योगदान को देखते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय और कालीकट विश्वविद्यालय ने उनको डी0लिट0 की मानक उपाधि से अलंकृत किया है।

गुलज़ार साहब उर्दू के प्रति अपने असीम प्रेम के कारण अपने छात्र जीवन से ही उर्दू साहित्य की अनेक पत्रिकाओं के सम्पादक रहे। जैसे दिल्ली की पत्रिकाएं "स्टूडेन्टस काल", "इन्द्रपस्थ", "जौहर", "निजामी", हैदराबाद की "अलमारिफ़" मेरठ की "आंगे सहर" तथा दिल्ली की "निदाये इत्तिहाद" इत्यादि।

गुलज़ार साहब ने अपने छात्र जीवन में देश में चल रहे स्वतंत्रता आन्दोलन में जम कर भाग लिया। आप स्टूडेन्टस फेडरेशन ऑफ इण्डिया के एक सक्रिय सदस्य रहे। आप फिर सन् 1937 से दिल्ली की युवा कांग्रेस पार्टी के सक्रिय सदस्य हो गये। आपने स्वतंत्रता आन्दोलन में दिल्ली में देश के उस समय के दिग्गज नेताओं के साथ कार्य किया जैसे पंडित जवाहर लाल नेहरू, डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना अबुल कलाम आज़ाद, प्रो0 हुमांयू कबीर, श्री आसिफ़ अली व उनकी पत्नी श्रीमती अरूणा आसिफ़ अली, श्रीमती इन्दिरा गांधी, मौलाना हुसैन अहमद मदानी, हफीजुर रहमान, मुफ़्ती अतीकुर रहमान, लाला श्याम नाथ, कृष्णा नायर, मीर मुश्ताक अहमद, डॉ0 सैफउद्दीन किचलू, डॉ0 शंकर दयाल शर्मा, डॉ0

जाकिर हुसैन, बाबू जगजीवन राम, डॉ० गोपाल स्वरूप पाठक, श्री बसंत साठे, इत्यादि।

"गुलज़ार" साहब ने उर्दू साहित्य के प्रचार और प्रसार तथा समाज सेवा के क्षेत्र में इतना अधिक कार्य किया है कि उसको एक सीमित परिधि में वर्णन करना बहुत ही कठिन कार्य है। आप अन्जुमन तामीरे उर्दू के संस्थापक महासचिव रहे, आप निज़ामुद्दीन की दरगाह की प्रबंधक समिति इदारा निजामिया के सदस्य हैं, आप दिल्ली की राम लीला कमेटी के एक सम्मानित सदस्य हैं, आप नेहरू युवा क्लब के सदस्य रहे, आप स्मार्ट यग एसोसिएशन के एक सक्रिय कार्यकर्ता रहे, आप सेन्ट्रल उर्दू कौंसिल के सदस्य रहे, आप अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के लेखकों के प्रकोष्ठ के सदस्य रहे, आप दिल्ली राज्य की स्वतंत्रा संग्राम सेनानियों की समिति के सन् 1974 से सन् 1992 तक सचिव रहे, आप ग़ालिब वेलफेयर सोसाइटी के सदस्य रहे, आप सन् 1958 में आयोजित अखिल भारतीय उर्दू कांफ्रेंस की स्वागत समिति के सचिव रहे, आप अंजुमन तरक्की उर्दू (हिन्द) के संस्थापक हैं, आप सावन कृपाल रूहानी मिशन के सदस्य हैं, आप अखिल भारतीय उर्दू राबता कमेटी के सन् 1993 से सन् 1999 तक अध्यक्ष रहे इत्यादि इत्यादि।

गुलज़ार साहब ने अब तक उर्दू साहित्य से सम्बंधित लगभग 3500 मुशायरों और सेमिनारों में या तो भाग लिया है या फिर उनको आयोजित किया है। आपने इस सिलसिले में देश के अनेक क्षेत्रों और अन्य देशों का व्यापक भ्रमण किया है। आपकी उर्दू साहित्य के क्षेत्र में की गयी विशेष सेवाओं के लिये अनेक पुरस्कारों तथा अलंकरणों से सम्मानित किया जा चुका है। जैसे शायरे कौम, मुजाहिदे उर्दू, गुलज़ारे खुसरो, बुलबुले हिन्द, तूतेय निज़ामी, और ईमामे उर्दू इत्यादि।

गुलज़ार साहब को अनेक गोल्ड, मेडल, शील्ड और ट्रौफ़ीस उनकी बेहतरीन शायरी के लिये भेंट की जा चुकी हैं। सन् 1951 में आपको जर्मनी के वर्लिन नगर में आयोजित समारोह में विश्व शान्ति के लिये युवा राष्ट्रकवि के सम्मान से सुशोभित किया गया और आपको उपहार स्वरूप 5000 मार्क की धनराशि भेंट की गयी।

गुलज़ार साहब ने कई वर्ष एक ऑनरेरी मजिस्ट्रेट के रूप में दिल्ली में कार्य किया आपको भारत सरकार ने सन् 1962 के चीन के साथ युद्ध के समय

तथा सन् 1965 और सन् 1971 के भारत–पाक के मध्य युद्ध के समय में देश की सीमाओं पर तैनात सेनाओं और अन्य सुरक्षा बलों का अपनी शायरी द्वारा मनोबल बढ़ाने के लिये भेजा और आपकी इस कठिन अवसर पर देश के प्रति की गयी सेवाओं के लिये आपको आनरेरी कर्नल के अलंकरण से सम्मानित किया गया।

गुलज़ार साहब ने इंग्लैण्ड, अमरीका, योरप, ईरान तथा अन्य अरब देशों में अनेकं उर्दू साहित्य पर आयोजित गोष्ठियों में भाग लिया और विभिन्न विषयों पर अपने शोध परक लेख पढ़े। आपको उर्दू साहित्य का एक चलता फिरता अनमोल रत्न की संज्ञा दी गयी जिसके पास उर्दू साहित्य के ज्ञान का एक असीमित भण्डार है।

गुलज़ार साहब ने अपना सारा जीवन आपसी भाईचारा और प्रेमभाव स्थापित करने में व्यतीत किया तथा अपनी सशक्त लेखनी और भाषणों द्वारा समाज में समरसता बनाये रखने पर बल दिया। आपने सदैव मानवता को सबसे उत्तम धर्म समझा और असहाय तथा निर्बलों की सहायता करना अपना परम कर्तव्य माना।

आपने सन् 1992 के दिसम्बर माह से अधिक आयु हो जाने के कारण सक्रिय राजनीति में भाग लेना बिलकुल समाप्त कर दिया। अब आप अपना समय अधिकतर साहित्यिक और सांस्कृतिक गतिविधियों में व्यतीत करते हैं या फिर पठन–पाठन और शेर शायरी में व्यतीत करते हैं जो एक प्रकार से आपकी आत्मा है। आप सन् 1933 से लेकर सन् 1948 तक केवल सियासी, कौमी, वतनी और बाग़ियानी शायरी करते रहे पर अब आप हर रंग में, हर जफ़ में, हर मौजू पर, हर पहलू और हर शोबे हयात पर एक अहसास, जज़बात और तख़ल्लुस की शायरी करते हैं। आप सन् 1947 से दिल्ली की अन्जुमन तामीरे उर्दू चला रहे हैं। आप सन् 1992 से कुल हिन्द उर्दू राबताई के सद्र हैं।

गुलज़ार साहब का विवाह सन् 1958 के अक्टूबर माह में अजमेर रियासत के निवासी पंडित पुश्कर नाथ गंजू की सुपुत्री सुश्री कविता गंजू के साथ झांसी में सम्पन्न हुआ था। जहा उस समय आपकी पत्नी के सबसे बड़े भाई रेलवे प्रोटेक्शन फोर्स के इन्सपेक्टर के पद पर तैनात थे। आपकी सन्तानों में एक पुत्र अनूप जुत्शी तथा एक पुत्री मीना है। मीना का विवाह इलाहाबाद के निवासी पंडित मनकरन नाथ उगरा के सुपुत्र बृजेश उगरा के साथ सम्पन्न हुआ है। यह दम्पति आजकल अमरीका में निवास कर रहा है।

पंडित अनूप जुत्शी अपनी एम0बी0ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात आजकल मुम्बई में औमनी मीडिया नाम की अपनी प्राईवेट कम्पनी चलाते हैं। आपने अन्तर्जातीय विवाह किया है।

गुलज़ार साहब की यद्यपि पुरानी दिल्ली की बाज़ार सीताराम में अपनी पैतृक हलब हवेली है पर आज कल आप अपने नोयडा के सेक्टर–26 में स्थित अपने नये आवास सी0–99 में निवास करते हैं। आप अपने जीवन से पूर्ण रूप से संतुष्ट हैं और पुराने स्मरणों को वर्णन करते समय आत्म विभोर हो जाते हैं। आपने जिस उद्देश्य से प्रेरित होकर अपना सब कुछ देश पर न्योछावर कर दिया और एक स्वर्णनिम भविष्य की कल्पना की वह वर्तमान राजनीतिक परिवेश में एक दम दिवा स्वप्न सा प्रतीत होता है। क्या उस समय के देश के कर्णधारों ने ऐसे ही समाज की कल्पना की थी जहां माफ़ियाओं और थैलीशाहों का राजनीति पर वर्चस्व हो और सही देश भक्त और सत्य पर निष्ठा रखने वाले व्यक्ति का समाज में तिरस्कार हो। क्या कोई समाज ऐसे आदर्शों और मूल्यों के साथ पनप सकता है। आपका स्पष्ट मत है कि यह सब मात्र एक छलावा है जो किसी भी मनुष्य को वास्तविकता से बहुत अधिक समय तक दूर नहीं रख सकता। आपके विचारों की सार्थकता निम्नलिखित उर्दू के शेर में साफ़ परिलक्षित होती है।'

"मुहय्या गरचे सब सामान
मुल्की और माली थे,
सिकन्दर जब गया दुनिया से
दोनों हाथ खाली थे।'



कश्मीरी पण्डित और काश्मीरियत

विगत कुछ माह से विभिन्न मंचों से जम्मू कश्मीर राज्य के विभाजन की मांग बड़े ही प्रभावशाली ढंग से उठायी जा रही है, जिसका बीजारोपण बहुत समय पूर्व सर ओवन डिक्सन द्वारा किया गया था। हमारे समाज के कुछ तथाकथित बुद्धिजीवी नेतागण भी इस मांग को बहुत ही चतुरायी के साथ खूब हवा दे रहे हैं तथा उसके पक्ष में अनेक़ कुतर्क प्रस्तुत कर रहे हैं। वहीं दूसरी ओर हमारे ही समाज के कुछ पश्चिमी विचारधारा से प्रभावित लेखक अपने आलेखों में वर्तमान समय की उदारवादी तथा उपभोक्तावादी संस्कृति के दौर में काश्मीरियत की कल्पना मात्र को ही एक छलावा या दिवास्वप्न की संज्ञा प्रदान कर रहे हैं क्योंकि उनकी ऐसी धारणा है कि आधुनिकता और भूमण्डलीयकरण के वातावरण में काश्मीरियत की बात करना या फिर उसकी दुहाई देना महामूर्खता है क्योंकि इस यांत्रिक युग में मनुष्य को यह लगभग 300 वर्ष पूर्व के इतिहास के पृष्ठों में ले जाने का प्रयास है जब कश्मीरी पंडित घाटी में सन साधन के अभाव में और विकास की कल्पना से परे एक संकुचित परिधि में अपना जीवन निर्वाह करने को विवश था और घाटी के बाहर के संसार से उसका कुछ लेना देना नहीं था। यहां पर एक बहुत बड़ा प्रश्न यह उठता है कि क्या हम इस तथाकथित आधुनिकता का चोला पहन कर अपनी सदियों पुरानी सभ्यता और संस्कृति की जड़ों में स्वयं मट्ठा डाल कर उसकी ऐसी तैसी कर दें या फिर कोई मध्यवर्गीय मार्ग खोजने का प्रयास करें जिससे पुरानी कहावत की सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे को हम पुनः चिरतार्थ कर सकें। हमें इस बात पर गम्भीर चिंतन और मनन करने की नितान्त आवश्यकता है कि हम कौन से मार्ग का चयन करें जिसके द्वारा समाज को विखण्डित होकर उसके अस्तित्व को समाप्त होने से बचा कर सुरक्षित किया जा सके। इस कार्य के लिये समय रहते हमें परिस्थितियों में सुधार लाना होगा और विशेष रूप से समाज के युवा वर्ग को एक साकारात्मक दिशा देनी होगी ताकि भविष्य में हमारा समाज पतन के स्थान पर उन्नति की ओर अग्रसर हो सके और हम व्यापक समाज में पुनः अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित कर सकें तथा अन्य वर्गों के लिये आदर और सम्मान का पात्र बनें।

कश्मीरी पंडित विगत 11 वर्षों से विस्थापन की कटु पीड़ा को झेल रहे हैं और आश्चर्य की बात यह है कि वह अपने ही देश में अमानवीय परिस्थितियों में एक शरणार्थी की भांति अपना जीवन निर्वाह कर रहे हैं। अपने घर से उजड़े, अपनी जड़ों से कटे और अपनी सांस्कृतिक पहचान के लिये व्याकुल इन असहाय कश्मीरी पंडितों को पुनः घाटी में उनके घरवापसी की अनेक लुभावनी योजनायें जम्मू–कश्मीर की प्रदेश सरकार समय समय पर बना कर केन्द्र सरकार को प्रेषित कर चुकी है। पर आज तक किन्हीं कारणों से उनका क्रियान्वयन नहीं हो सका है क्योंकि उनके दो तीन ऐसे पहलू हैं जिन पर कोई अन्तिम निर्णय लेने से पूर्व उन पर गम्भीर विचार करने की आवश्यकता है कि उनके भविष्य में दूरगामी परिणाम क्या होंगे और क्या वह वास्तव में हमारे हितों की रक्षा करते हुए इस जटिल और जड़ीली समस्या का समाधान कर पाने में सफ़ल सिद्ध हो पायेंगे या फिर हवा में तीर चलाने के समान प्रतीत होंगे। क्या इस प्रकार के कुछ अधकचरे प्रयास भविष्य में विस्थापित कश्मीरी पंडितों के लिये और अधिक भयानक समस्याएें और भीषण संकट नहीं उत्पन्न कर देंगे।

जम्मू–कश्मीर के मुख्य मंत्री डॉ0 फारूक अब्दुल्ला एक बहुत ही समझदार और होशियार नेता हैं। उन्होंने विश्व के अनेक देशों का व्यापक भ्रमण करके ठोस ज्ञान, अर्जित किया है। वह अपने अब्बा हुजूर के दिवास्वप्न को एक साकार रूप देने का भरपूर प्रयास कर रहे हैं। जिन्होंने सन् 1947 में देश के धर्म के नाम पर विभाजन के समय काश्मीरियत को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने का डंका पीटकर तथा उसके पश्चात बड़े ही सुन्दर और सुनियोजित ढ़ंग से कश्मीरी पंडितों को इस दशा की ओर अग्रसर किया। अब डॉ0 अब्दुल्ला विस्थापित कश्मीरी पंडितों की घरवापसी की कार्ययोजना को चरण बद्ध तरीके से लागू करने का निश्चय कर रहे हैं और इसकी व्यवहारिकता के पक्ष में अनेक तर्क केन्द्र सरकार के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं।

डॉ0 फारूक़ अब्दुल्ला की इस प्रस्तावित कार्ययोजना के अनुसार विस्थापित कश्मीरी पंडितों को घाटी में अलग–अलग स्थानों पर नव निर्मित छावनियों में बसने के लिये प्रेरित किया जायेगा। इस प्रकार के प्रबन्ध में अब बिलकुल स्पष्ट है कि वह अपने पुराने पूर्वजों के घरों में नहीं जा पायेंगे अपितु उन्हें इन नयी विकसित की गयी छावनियों में अपना घर फिर से निर्माण करने के लिए बाध्य

होना पड़ेगा जो एक प्रकार से उनके ज़ख्मों पर नमक छिड़कने के समान होगा।

यहां पर एक बात यह भी विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि आजकल कश्मीर घाटी में जिस प्रकार के हालात चल रहे हैं और जिस प्रकार वहां की आम जनता में जिसमें बहुसंख्यक मुसलमान भी शामिल हैं असुरक्षा और भय की भावना व्याप्त है उससे ऐसा कदाचित नहीं प्रतीत होता है कि जम्मू और दिल्ली के शरणार्थी शिविरों में अभाव, अपमान और असुरक्षा का जीवन व्यतीत कर रहे कश्मीरी पंडित एका एक इस प्रकार की नयी व्यवस्था में अपना घर बना कर रहने के लिये लालायित हो उठेंगे और अपना सब कुछ दांव पर लगाने के लिये एक जड़ियल जुआरी की भाति तत्पर हो जायेंगे। यह बात एकदम भिन्न है कि इस प्रस्तावित कार्ययोजना के बहाने फ़ारूक सरकार को 26 सौ करोड़ रूपयों को अपने मन के अनुसार वारा न्यारा करने का एक सुनहरा अवसर अवश्य प्राप्त हो जायेगा। जिसके वास्तविक उपयोग का पता लगाना भविष्य में बहुत ही दुशकर कार्य हो जायेगा कि यह भारी भरकम रकम किन किन मदों पर व्यय की गयी।

कश्मीर के एक प्रमुख आतंकवादी संगठन हिजबुल मुजाहिदीन ने इस प्रस्तावित कार्ययोजना का कठोर शब्दों में विरोध किया है। उसका कहना है कि यह कश्मीरियों को धर्म के आधार पर बांटने की एक घिनौनी साज़िश हैं पर उनकी आतकवादी गतिविधियों को देखते हुए भी उनके इस कथन को एकदम से नकारा भी नहीं जा सकता। उनका स्पष्ट मत है कि कश्मीर घाटी को मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम क्षेत्रों में विभाजित करना न केवल एक अदूरदर्शितापूर्ण अपितु एक मूर्खतापूर्ण कदम है। जिससे साम्प्रदायिक सौहार्द सुधरने के स्थान पर अधिक बिगड़ेगा क्योंकि यह योजना सदियों से चली आ रही काश्मीरियत की आस्था पर एक कुठाराघात होगी। हिजबुल का इस सम्बन्ध में यह भी तर्क है कि अलग से सुरक्षा क्षेत्र और छावनियां बना देने से घाटी में निश्चित रूप से साम्प्रदायिक सदमावना में कमी आयेगी और आपसी द्वेष और कटुता उत्पन्न होगी जिसके कारण अलगाव की भावना और अधिक विकसित होगी जिसका पूरा लाभ वह शक्तियां उठायेंगी जो घाटी में अमन चैन की पक्षधर नहीं हैं। उनके इस तर्क में निश्चित रूप से काफी दम है क्योंकि इस भेदभाव पूर्ण वातावरण और एक दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखने में कभी भी सामान्य स्थिति नहीं पनप पायेगी। इस संकट पूर्ण ऊहापोह की स्थिति का पूरा लाभ उठाते हुए साम्प्रदायिक

तत्व तुरन्त अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकनी शुरू कर देंगे। सबसे प्रमुख बात यह होगी कि यह प्रस्तावित छावनियां सदैव जिहादियों के निशाने पर होंगी और सुरक्षा बलों के अनेक प्रयासों और नाकेबन्दी के बाद भी यह उनकी ग़ैर इन्सानी हरकतों को रोक पाने में कहां तक समर्थ हो पायेंगी जब उनके आत्मघाती दस्ते अकूत सुरक्षा के घेरे को बेध कर सुरक्षा बलों पर प्रहार करने में सफ़ल हो जाते हैं। जिसका जीता जागता उनका दिल्ली के लाल किले के भीतर आक्रमण एक उदाहरण है।

आज प्राथमिकता इस बात की है कि घाटी में पनप रही अविश्वास की भावना को समूल नष्ट किया जाये। ग़ैर कश्मीरी आतंकवादी संगठनों के साथ कठोर कार्यवाही करके उनको निष्क्रिय किया जाये। घाटी में हर धर्म के व्यक्तियों को बसने का समान अधिकार दिया जाये तथा वहां के बहुसंख्यक समुदाय को यह भलिभांति समझाने का प्रयास किया जाये कि यदि उन्हें वास्तविक रूप से काश्मीरीयत में विश्वास है तो उन्हें हर प्रकार से कश्मीरी पंडित समुदाय की सुरक्षा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना होगा ताकि पाक परस्त तत्वों को अलग थलग किया जा सके और उनके कश्मीर को पाकिस्तान का एक अंग बनाने के दिवास्वप्न को धूल धूसरित किया जा सके इसी दिशा में कार्य करके पाकिस्तान के मंसूबों पर पानी फेरा जा सकता है जो कश्मीर की जटिल समस्या के समाधान की ओर सम्भवतः एक सही कदम होगा।

आतंकवादियों के हाथों से घातक अस्त्र–शस्त्र न छीनना और केवल धर्म के नाम पर कश्मीर के विभाजन का विरोध करना एक प्रकार से स्वयं एक विरोधाभास है जो एक समय में दो विपरीत दिशाओं में दौड़ रहे घोड़ों की सवारी करने के समान है। जिसमें सवार ज़मीन पर औंधेमुंह गिर कर मट्टी चाटता नज़र आता है। यही समय है जब हम परिस्थितियों का सही आंकलन करें और उसी के अनुसार उचित निर्णय लें। किसी उर्दू के महान शायर ने ज़िन्दिगी और मौत की अपने शब्दों में बहुत ही सुन्दर व्याख्या कुछ इस प्रकार की है :–

"लायी हयात आये कज़ा ले चली चले।
न अपनी खुशी से आये न अपनी खुशी चले।।"



आतंकवाद और कश्मीरी औरतें

जब जब विश्व के किसी भी क्षेत्र में आतंकवाद पनपता है तो निश्चित रूप से वहां की औरतों को मुख्य रूप से उसका शिकार होना पड़ता है। इन निसहाय औरतों को क्या–क्या मानसिक वेदनायें और यातनायें झेलनी पड़ती हैं उसकी कल्पना कर पाना बहुत ही दुशकर कार्य है क्योंकि इस अमानवीय हिंसा के आक्रोश का प्रभाव सबसे अधिक औरतों पर ही पड़ता है जिनको आतंकवादियों के वहशियाना कुकृत्यों का ख़ामियाज़ा उठाना पड़ता है।

पृथ्वी का स्वर्ग कही जाने वाली कश्मीर घाटी में लगभग पिछले 12 वर्षो से निरूदेश्य हिंसा का तांडव नृत्य चल रहा है जिस पर अभी तक किन्हीं कारणों से सरकार प्रभावशाली अंकुश लगाने में सफल नहीं हो सकी है। सरकार की इस ढुलमुल नीति का पूरा लाभ विभिन्न आतंकवादी गुट और संगठन उठा रहे हैं जो धर्म के नाम पर भाड़े के विदेशी सैनिकों की घाटी में घुसपैठ करा कर वहां की शान्तिप्रिय आम जनता के लिये चरस बो कर उनको वहां से देश के अन्य स्थानों में पलायन करने के लिये विवश कर रहे हैं। जो भी समाज के वर्ग इस विकृत मानसिकता तथा घृणित विचारधारा के पक्षधर नहीं हैं उनको मौत के घाट उतारा जा रहा है ताकि विरोध के स्वर अधिक प्रस्फुटित न हो सकें और असामाजिक तथा अराजक तत्व उनके कार्यकलापों से प्रेरणा लेकर घाटी में और अधिक ग़दर मचा सकें। जिसका पूरा लाभ यह आतंकवादी संगठन अपना उल्लू सीधा करने में उठा सकें।

कश्मीर घाटी में विगत 12 वर्षो से चल रहे इस हिंसा के दौर में सम्भवतः अब एक भी ऐसा घर नहीं बचा है जो इस हिंसा से प्रभावित न हुआ हो। इस आतंकवाद के रूप में पाकिस्तान द्वारा भारत के विरूद्ध चलाये जा रहे परोक्षयुद्ध में सबसे अधिक पीड़ा कश्मीरी औरतों को झेलनी पड़ रही है। यद्यपि इस हिंसा में मरने वालों की संख्या अधिकतर पुरूषों की है परन्तु महिलाओं को अपने निकट के सम्बंधियों को खोने के अलावा लूटमार तथा बलात्कार के साथ अपना जीवन पुनः नये सिरे से प्रारम्भ करने को विवश

होना पड़ता है। जो उनके लिये बहुत अधिक कष्टदायक तथा मानसिक रूप से अपने को समाज में स्थापित कर पाने में असहनीय पीड़ा प्रदान करता है।

एक व्यक्तिगत संस्था द्वारा 2 वर्ष पूर्व किये गये सर्वेक्षण के अनुसार अब कश्मीर घाटी में अनेक ऐसे परिवार हैं जहां एक भी पुरूष जीवित नहीं बचा है। उसकी रिपोर्ट के अनुसार लगभग 7,012 लड़कियां अनाथ हो चुकी हैं जिनके माता पिता अब इस संसार में नहीं हैं। बहुत बड़ी संख्या में ऐसी विधता हुई महिलाए हैं जिनकी आयु अभी बहुत कम है और जिन्होंने अपने जीवन के बहुत कम बसत देखे हैं और अपने सारे अरमानों के स्वप्न अपनी आंखों में संजोये हुए बैठी हैं। सन् 1989 से प्रारम्भ हुए इस परोक्ष युद्ध में हज़ारों की संख्या में पुरूष अब तक ग़ायब हो चुके हैं और निरन्तर ग़ायब हो रहे हैं। पिछले एक दशक में हज़ारों की संख्या में महिलायें आतंकवादियों तथा भाड़े के विदेशी सैनिकों द्वारा बलात्कार का शिकार हो चुकी हैं। आतंकवादी केवल इस शंका पर कि इस घर का व्यक्ति सुरक्षाबलों के लिये मुख़बिरी करता है या फिर उनको सूचनायें उपलब्ध कराता है उसके घर की महिलाओं के साथ जमकर बलात्कार करते हैं ताकि उसको सबक सिखाया जा सके और वह पुनः ऐसा कार्य न करे। वहीं कभी कभी आतंकवादी परिवार को डराने या धमकाने के लिये महिलाओं को बलात्कार का निशाना बनाते हैं।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार किसी महिला के साथ बलात्कार अपने शत्रु को नीचा दिखाने या फिर शर्मिन्दा करने की एक बहुत प्राचीन मानसिकता है जो आदिकाल से चली आ रही है और जिसका समय समय पर विभिन्न परिस्थितियों में एक शस्त्र के रूप में प्रयोग होता रहा है जिसके द्वारा अपने शत्रु का मनोबल नष्ट कर उस पर सहजता से विजय प्राप्त की जा सके। वैसे भी प्राचीन समय में युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिये विषकन्याओं का प्रयोग होता रहा है। यद्यपि इस प्रक्रिया में शारीरिक और सामाजिक रूप से महिलाओं को ही प्रताड़ित होना पड़ता है पर वृहद रूप में बलात्कार को पूरे समुदाय पर हमला माना जाता है। अतः इसका एक ब्रह्मास्त्र के रूप में खुलकर प्रयोग किया जाता है।

एक क्रूर प्रताड़ना और मानसिक वेदना के अतिरिक्त अलगाववाद और शान्ति का प्रभाव सब से अधिक कश्मीर की महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ा

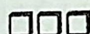
है। घाटी में सरकार तथा ग़ैर सरकारी संस्थाओं द्वारा संचालित स्वास्थ्य सेवाओं के धाराशाही होने का प्रभाव भी सबसे अधिक घाटी की महिलाओं पर पड़ा है विभिन्न आतंकवादी गुटों द्वारा जारी धमकियों के कारण घाटी में चल रही परिवार कल्याण तथा परिवार नियोजन से सम्बंधित अनेक क्रान्तिकारी योजनायें या तो बुरे तरीके से चरमरा गयी हैं या फिर पूर्ण रूप से ठप हो गयी हैं। जिसका सीधा प्रभाव महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है और वह न चाहते हुए भी अधिक बच्चों को जन्म देने में मजबूर हैं क्योंकि उनको परिवार नियोजन के साधनों का प्रयोग करना वर्जित है। ये असहाय महिलायें हालात की नज़ाकत को देखते हुए अनपढ़ तथा अकुशल दाईयों से अवैध गर्भपात कराती हैं जिसमें उन्हें अन्य रोगों का शिकार होना पड़ता है क्योंकि यह अप्रशिक्षित दाईयां गर्भवती महिला के गर्भाशय को ही नुकसान पहुंचा देती हैं जिससे महिलाओं में जननेन्द्रियों से सम्बंधित अन्य रोग पनपते हैं जो उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

परिवार नियोजन के उचित सन साधनों के अभाव में बहुत बड़ी संख्या में महिलायें कच्ची उम्र में ही गर्भधारण कर रही हैं और फिर अवैध गर्भपात करा रही हैं जिसके कारण युवा महिलाओं की मृत्यु में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है क्योंकि उनके रोगों के उचित उपचार के साधन उपलब्ध नहीं हैं और न ही समय रहते उनको सही डाक्टरी परामर्श मिल पाता है।

घाटी के सुदूर गांवों में स्थिति और भी भयावह है। वहां चकित्सा सुविधायें प्रायः नगण्य हैं। वहां महिलायें अनेक रोगों से ग्रस्त हैं पर उनका निदान करने वाला वहां कोई कुशल चिकित्सक उपलब्ध नहीं है। वहां से बड़ी संख्या में नर्सो तथा डाक्टरों के घाटी से देश के अन्य अंचलों में पलायन कर जाने के पश्चात इन सेवाओं को उचित प्रकार से चलाना अब प्रायः असम्भव सा हो गया है जिसके परिणाम स्वरूप वहां की जनता में बीमारियों की प्रवृत्ति बढ़ रही है। उचित सुविधायें न मिलने के कारण महिलायें मुख्य रूप से खून की कमी, कैलशियम की कमी तथा मानसिक तनाव का शिकार हो रही हैं। प्रशिक्षित डाक्टरों तथा मेडिकल स्टाफ़ की कमी के कारण घाटी के बहुत से अस्पताल सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पा रहे हैं और वह रोगियों को उचित स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवायें उपलब्ध कराने में असमर्थ हैं। इसका प्रभाव निश्चित रूप से महिलाओं की कार्यक्षमता पर भी पड़ रहा है। क्या

कभी कोई समाज जिसकी महिलाओं की इस प्रकार की दुर्दशा हो उन्नति कर सकता है। महिलाओं को अपमानित और तिरस्कृत कर कभी किसी समाज का उत्थान नहीं हुआ। जिस समाज ने महिलाओ की शक्ति का निरादर किया वह समाज इतिहास इस बात का साक्षी है कभी पनप नहीं पाया और अन्तोगत्वा वह रसातल में मिल गया। यह नारी सशक्तिकरण का वर्ष है हमें समाज़ में महिलाओं को एक प्रतिष्ठित स्थान दिलाने का प्रयत्न करना चाहिये क्योंकि भारतीय संस्कृति में स्त्री को जननी माना गया है। शशीकला ''सपना'' के शब्दों में –

ज़र्रा–ज़र्रा हो कर बंटती रही है जिन्दिगी मेरी।
कभी नहीं संभली, बिखरती रही है ज़िन्दिगी मेरी।
अंधेरी दुनिया को उजाला तो मिलेगा कभी।
उजाले की खोज में भटकती रही है ज़िन्दिगी मेरी।



Next attraction

from

KASHMIR

to

KASHMIRI MOHALLA

By

Dr. B.N. Sharga



ंक
न